संपादकीय

“ इंसान के कर्म उसके ही नहीं, आने वाली पीढ़ियों की भी प्रभावित करते हैं। - गौतम बुद्ध

बदलते अंतरराष्ट्रीय समीकरणों को देखते हुए ट्रंप ने अपने पुराने रुख से पलटते हुए भारत के प्रति जो सकारात्मक बयान दिया है, वह उनकी कभी हां और कभी ना वाली शैली की एक बानगी है। इन बातों का तभी कोई अर्थ है, जब इनका असर भारत पर लगाए टैरिफ की दरों को कम करने के रूप में भी दिखाई दे।

कभी हां, कभी ना

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारत के प्रति सकारात्मक रुख दिखाते हुए प्रधानमंत्री मोदी को 'ग्रेट प्राइम मिनिस्टर' और भारत से रिश्ते को जो 'खास' बताया है, वह उनकी कभी हां कभी ना वाली शैली की बानगी है। हालांकि कुछ समय से दोनों देशों के रिश्तों में खटास आ गई है, लेकिन ट्रंप के ताजा बयान इस बात का संकेत देते हैं कि दोनों देशों के बीच रणनीतिक साझेदारी अब भी कायम है। ट्रंप के बयान में यह नरमी हताशा भरे उस बयान के ठीक बाद आई है, जिसमें उन्होंने कहा था कि लगता है, हमने भारत को खो दिया है। यह अच्छी बात है कि प्रधानमंत्री मोदी ने संतुलित ढंग से इस पर अपनी प्रतिक्रिया दी। गौरतलब है कि अगस्त में ट्रंप प्रशासन ने रूस से कच्चा तेल खरीदने के कारण भारतीय वस्तुओं पर 50 फीसदी तक का भारी दंडात्मक शुल्क थोप दिया, जिससे कुछ ही दिनों के भीतर दोनों देशों के दोस्ताना रिश्ते शत्रुतापूर्ण लगने लगे थे। लेकिन अब ट्रंप के रुख में बदलाव दर्शाता है कि जब घरेलू और अंतरराष्ट्रीय हित टकराते हैं, तो द्विपक्षीय रिश्तों में अप्रत्याशित मोड़ आते ही हैं। तिस पर ट्रंप की अपनी एक खास शैली तो है ही। दरअसल, भारत पर भारी टैरिफ थोपे जाने के चलते अमेरिकी मीडिया और राजनीतिक गलियारे में ट्रंप की नीतियों की आलोचना होने लगी थी। इस घरेलू दबाव के साथ-साथ भारत द्वारा नए व्यापारिक गंतव्यों की तलाश ने ट्रंप को अपने सुर बदलने पर मजबूर कर दिया। दरअसल, ट्रंप दबाव की रणनीति अपनाकर व्यापार वार्ता में भारत से अतिरिक्त फायदा उठाना चाहते थे, जबकि भारत ने पूरी कामयाबी के साथ यह दर्शाया है कि वह किसी के आगे झुके बगैर रणनीतिक स्वायत्तता के सिद्धांत का पालन करता है और स्वतंत्र रूप से विभिन्न देशों से रिश्ते बनाए रखना चाहता है। अब जबकि राष्ट्रपति ट्रंप और प्रधानमंत्री मोदी के ट्रंप के बाद दोनों देशों के रिश्ते में सुधार की संभावना दिख रही है, तो यह देखना दिलचस्प होगा कि क्या वाकई में अमेरिका के रुख में कोई बदलाव आया है या जैसा कि कुछ रणनीतिक विश्लेषक कहते हैं कि ट्रंप के बयान पर फिलहाल कोई ठोस नतीजा नहीं निकाला जा सकता। दरअसल यह घटनाक्रम अमेरिका, रूस एवं चीन के बीच चल रहे अंतरराष्ट्रीय सत्ता संतुलन का एक जीवंत प्रतीक भी है, जिसमें भारत अपनी स्वायत्त कूटनीति से अपनी जगह बना रहा है। बहरहाल, पिछले दिनों हुए घटनाक्रमों के बाद ट्रंप द्वारा रिश्तों में जमी बर्फ पिघलाने की पहल किया जाना कूटनीति के तराजू पर भारत का पलड़ा भारी रहने का संकेत तो देता ही है। फिर भी ट्रंप के बार-बार बदलते रुख के मद्देनजर भारत को खुद को संतुलित रखते हुए कूटनीतिक सतर्कता बनाए रखने की जरूरत है।

क्या गोर इन पहलुओं पर गौर करेंगे

ट्रंप ने भारत के राष्ट्रीय गौरव और संकल्प को कम करके आंका है। भारत उनकी धौंस के आगे नहीं झुकेगा और उन शर्तों पर सहमत नहीं होगा, जो उसके राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध हैं। नव मनोनीत राजदूत सर्जियो गोर को भारत और भारतीय नेताओं की भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता दिखानी होगी।

सुरेंद्र कुमार
पूर्व राजदूत

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के लिए दीर्घकालिक रणनीतिक दृष्टि मायने नहीं रखती, बल्कि लेन-देन संबंधी व्यापार मायने रखता है, वह भी अमेरिकी हित में। शायद उन्हें यह देखकर अच्छा लगता है कि अमेरिका के दुश्मन और दोस्त, दोनों ही उनकी उच्च टैरिफ की धमकियों के बाद अमेरिकी हित में समझौते करने के लिए होड़ लगा रहे हैं। उनका दावा है कि उच्च टैरिफ से अमेरिकी खजाने में अरबों डॉलर आ रहे हैं। जो लोग इसका पालन नहीं करेंगे, उन्हें भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। आज भारत के साथ भी यही हुआ है। रूसी तेल आयात करने के कारण अमेरिका को निर्यात किए जाने वाले भारतीय माल पर कुल 50 फीसदी का शुल्क लगाया गया है। इस मनमाने और गैर-दोस्ताना निर्णय ने उस रणनीतिक साझेदारी को नुकसान पहुंचाया है, जिसे पिछले 25 वर्षों से विभिन्न दलों की अमेरिकी और भारतीय सरकारों ने इतनी लगन से पोषित किया है।

फरीद जकारिया सहित कई विश्लेषकों का मानना है कि यह ट्रंप प्रशासन की सबसे बड़ी रणनीतिक भूल मानी जाएगी। पूर्व राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार जॉन बोल्टन के अनुसार, भारत पर टैरिफ लगाना कोई रणनीतिक समझदारी नहीं है। पूर्व विदेश सचिव कंवल सिब्बल पूछते हैं: इस बेतुकी बात को कैसे उचित समझा जा सकता है? इसमें हैरानी नहीं होनी चाहिए थी। फरवरी, 2025 की शुरुआत में ओवल ऑफिस में भारतीय प्रधानमंत्री के बगल में बैठे, डोनाल्ड ट्रंप ने भारत को व्यापार करने के लिए बहुत ही मुश्किल जगह बताया था। इससे पहले उन्होंने भारत को 'टैरिफ किंग' कहा था। द्विपक्षीय व्यापार समझौता उनके पहले कार्यकाल में साकार नहीं हो सका, क्योंकि मोदी कृषि, डेयरी, मत्स्य पालन और लघु उद्यम क्षेत्रों को खोलने पर सहमत नहीं हुए, जिन पर लाखों भारतीय निर्भर हैं। इन क्षेत्रों को अमेरिकी उत्पादों से भरने की अनुमति देने के भारी राजनीतिक परिणाम होंगे।

फिर भी, उनके दूसरे कार्यकाल में हुई पांच दौर की वार्ताओं में, दोनों देशों के व्यापार प्रतिनिधियों ने कथित तौर पर काफी प्रगति की थी और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए पारस्परिक रूप से स्वीकार्य व्यापार समझौते का मसौदा तैयार किया था। पर पुतिन के साथ अलास्का शिखर सम्मेलन से पहले ट्रंप ने भारत पर दबाव बढ़ा दिया और रूसी तेल आयात जारी रखने पर 25 फीसदी अतिरिक्त दंडात्मक शुल्क लगाने की घोषणा कर दी, जिससे यह ब्राजील के बराबर 50 फीसदी टैरिफ का शिकार हो गया! उपराष्ट्रपति वेंस ने एक टीवी शो में दावा किया कि यह रूस को सजा देने के लिए था!

व्हाइट हाउस के व्यापार सलाहकार नवारो द्वारा भारत को रूसी तेल का धंधा करने वाला देश बताने से भारत भड़क गया है। विदेश मंत्री जयशंकर ने याद दिलाया कि चीन रूसी तेल का सबसे बड़ा आयातक है और कई यूरोपीय देश अमेरिकी प्रतिबंधों के बावजूद रूसी गैस खरीदते रहे। अमेरिका खुद रूस से यूरेनियम, उर्वरक और कुछ अन्य उत्पाद खरीद रहा है। शायद, वर्तमान विवाद व्यापार असंतुलन को लेकर नहीं है; चीन के पास छह गुना बड़ा व्यापार अधिशेष है, लेकिन उसे ऐसी आलोचना का सामना नहीं करना पड़ता है, क्योंकि उसके पास दुर्लभ पृथ्वी धातुओं और औद्योगिक चुंबक है। तो क्या भारत ने अनजाने में राष्ट्रपति ट्रंप के अहंकार को ठेस पहुंचा दी है, जो खुद को महान शांतिदूत और नोबेल शांति पुरस्कार का हकदार मानते हैं? उन्होंने दावा किया कि अमेरिका ने भारत और पाकिस्तान के बीच युद्धविराम करवाया है।

जाहिर है, ट्रंप ने भारत के राष्ट्रीय गौरव और संकल्प को कम करके आंका है। भारत उनकी धौंस के आगे नहीं झुकेगा और उन शर्तों पर सहमत नहीं होगा, जो उसके राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध हैं। पहलगाम आतंकवादी हमले का मुंहतोड़ जवाब देना जरूरी था। यह एक प्रेरणादायक और एकजुट करने वाली सैन्य सफलता थी, जिसने सावधानीपूर्वक चुने गए आतंकवादी ठिकानों, पाकिस्तानी वायुसेना के ठिकानों और पूरे पंजाब को तबाह कर दिया। कांग्रेस समेत सभी राजनीतिक दल सरकार के साथ खड़े थे। ट्रंप का युद्धविराम कराने का दावा मोदी सरकार को रास नहीं आया। इसे भारतीय सशस्त्र बलों का अपमान माना गया, उनके शानदार अभियानों का श्रेय किसी और ने हड़प लिया!

पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद का केंद्र माना जाता है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा सूचीबद्ध आतंकवादी वहां अपने केंद्र और प्रशिक्षण शिविर चलाते रहे हैं। ऐसे में ट्रंप का यह कहना कि उन्हें पाकिस्तान से प्यार है, जले पर नमक छिड़कने जैसा था। पाकिस्तान में, सत्ता पर सेना का नियंत्रण है और वही फैसले लेती है। भारत को आतंकवाद का निर्यात उनकी राजकीय नीति का अभिन्न अंग रहा है। पहलगाम हमले के तुरंत बाद व्हाइट हाउस में पाकिस्तानी सेना प्रमुख और आईएसआई महानिदेशक को आमंत्रित करना भारत के प्रति बेहद असंवेदनशील रवैया था। पिछले 25 वर्षों में भारत-अमेरिका संबंधों में अभूतपूर्व परिवर्तन आया है। अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार, सबसे बड़ा निवेशक और उन्नत तकनीकों का सबसे बड़ा स्रोत है। वे वैश्विक रणनीतिक साझेदार और प्रमुख रक्षा साझेदार हैं और हिंद-प्रशांत, क्वाड, आई2यू2, आईएमईईसी और वैश्विक जैव ईंधन गठबंधन में मिलकर काम कर रहे हैं। ट्रंप की लापरवाही के कारण ऐसे बहुआयामी और महत्वपूर्ण संबंध खतरे में हैं।

विदेश मंत्री ने भारत की तीन सीमाएं स्पष्ट कर दी हैं-किसानों और छोटे उद्यमों हितों से कोई समझौता नहीं; रूसी तेल आयात पर रोक नहीं और भारत-पाक संबंधों में किसी तीसरे पक्ष की मध्यस्थता नहीं। नई दिल्ली में नव मनोनीत राजदूत सर्जियो गोर के सामने कठिन चुनौती है। उनके लिए सलाह है कि वे भारत की इन सीमा रेखाओं को अपने दिमाग में रखें। भारत-अमेरिका व्यापार परिषद के प्रमुख अतुल केशप की यह सलाह कि द्विपक्षीय मुद्दों पर निजी तौर पर चर्चा की जानी चाहिए, भी उनके लिए लाभदायक होगी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें भारत, भारतीय नेताओं और भारतीय लोगों के प्रति सम्मान दिखाना होगा तथा उनकी भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता दिखानी होगी तथा दक्षिण एवं मध्य एशियाई मामलों के लिए विशेष दूत के रूप में अपनी भूमिका में भारत और पाकिस्तान को एकसाथ रखने से बचना होगा। यदि उन्हें भारत के बारे में तथा भारत के मौजूदा कद के बारे में समुचित जानकारी दी जाए तथा वह राष्ट्रपति ट्रंप के विश्वास और भरोसे के साथ संबंधों को सुधारने, उन्हें और विस्तारित करने और गहरा करने के उद्देश्य के साथ आएं, तो वह ट्रंप कार्यकाल के एक और केनेथ गैलब्रैथ हो सकते हैं। हालांकि, ट्रंप के हालिया बयान में भारत के प्रति नरमी दिखी है।

जीवन धारा

एकहार्ट टॉल्ल

प्रतीक्षा में लोग अपना पूरा जीवन निकाल देते हैं। इंतजार करना मन की स्थिति है। इसका अर्थ है कि आप भविष्य चाहते हैं, आपको वर्तमान नहीं चाहिए। जो हमारे पास है, वह हमें नहीं चाहिए और जो नहीं है, वह चाहिए।

प्रतीक्षा में लोग जीवन निकाल देते हैं

हम भविष्य में जाने के लिए इतने बेचैन रहते हैं कि वर्तमान बस वहां पहुंचने का साधन बन कर रह जाता है। जब 'यहां' होने पर 'वहां' पहुंचने की चाह होती है या फिर वर्तमान में रहकर भविष्य में पहुंचने की इच्छा होती है, तो तनाव पैदा होता है। यह एक ऐसा विभाजन है, जो हमें अंदर से चीर देता है। क्या अतीत आपका बहुत ध्यान आकर्षित करता है? आपकी उपलब्धियां, रोमांचक किस्से, अनुभव या वे सारी बुरी चीजें जो आपके साथ हुई हों, क्या आप उनके बारे में बोलते या सोचते हैं? क्या आपकी विचार-प्रक्रिया अपराधी भाव, घमंड, आक्रोश, गुस्सा, खेद या आत्मग्लानि पैदा कर रही है? अगर हां, तो आप न केवल अपने मन में झूठे आत्मभाव को प्रबल कर रहे हैं, बल्कि अतीत को संजोकर अपने शरीर को जल्दी बूढ़ा कर रहे हैं। इसका जीता-जागता उदहारण उन लोगों में मिल जाएगा, जो अपने अतीत को पकड़े रखते हैं।

हर क्षण अतीत के बारे में सोचना ठीक नहीं है। जब वर्तमान में उसकी जरूरत हो, तभी उसका उल्लेख करें। इस क्षण में निहित शक्ति का और आत्मा की पूर्णता का अनुभव करें। अपनी उपस्थिति का अनुभव करें। आपके मन में बहुत से विचार हैं, जो चिंता में डाल रहे हैं। आपका मन काल्पनिक भविष्य में खुद को देख रहा है और भय पैदा कर रहा है। किसी भी दशा में आप ऐसी परिस्थिति का सामना नहीं कर सकते, क्योंकि उसका अस्तित्व ही नहीं है। वह एक मानसिक छायाभास है। वर्तमान क्षण को स्वीकार करके आप जीवन उजाड़ने वाले पागलपन को रोक सकते हैं। अपनी श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक हो जाएं। वायु को अपने शरीर के अंदर व बाहर आता-जाता महसूस करें। अपने अंतःशक्ति क्षेत्र को महसूस करें। वास्तविक जीवन में, मन की काल्पनिक बातों के बजाय हमें केवल वर्तमान क्षण का सामना करना होता है। स्वयं से पूछें कि इस क्षण में क्या 'परेशानी' है। आप वर्तमान क्षण का हरदम सामना कर सकते हैं, पर भविष्य का कभी नहीं, न ही इसकी जरूरत है। जब आपको जरूरत हो, तब जवाब, सामर्थ्य, सही कर्म व साधन सभी मौजूद होंगे, उससे पहले नहीं, न ही बाद में। क्या हम आदतन 'प्रतीक्षक' हैं? जीवन में कितना समय हम इंतजार करने में गंवा देते हैं। ट्रैफिक जाम में, हवाई अड्डे में, किसी के आने के लिए या काम खत्म करने के इंतजार में, इसे मैं छोटा इंतजार कहता हूं। अगली छुट्टियों का, अच्छी नौकरी का, बच्चों के बड़े होने का, अर्थपूर्ण रिश्तों को पाने का, सफलता का, पैसे बनाने का, महत्वपूर्ण बनने का, आत्म साक्षात्कारी बनने का इंतजार करना लंबा इंतजार होता है।

यह कोई असामान्य बात नहीं है कि, 'जीवन जीना' शुरू करने की प्रतीक्षा में लोग अपना पूरा जीवन निकाल देते हैं। इंतजार करना मन की स्थिति है। इसका अर्थ है कि आप भविष्य चाहते हैं, आपको वर्तमान नहीं चाहिए। जो हमारे पास है, वह हमें नहीं चाहिए और जो नहीं है, वह चाहिए। हर इंतजार के साथ आप अपने वर्तमान में, जहां नहीं होना चाहते हैं और कल्पित भविष्य में, जहां आप होना चाहते हैं, में एक अंतर्द्वंद्व पैदा कर देते हैं। वर्तमान के खोने से हमारे जीवन की गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

स्वयं को समझें

सूत्र

हम भागने के इतने आदी हो गए हैं कि हमें स्वयं को समझने का समय नहीं मिलता। हम कभी अतीत, तो कभी भविष्य की ओर चले जाते हैं। इस दौड़-भाग में उम्र का आधे से अधिक हिस्सा निकल जाता है और अधिकांश लोग उस भविष्य को नहीं पाते, जिसका उन्होंने सपना देखा था। स्वयं को समझें, वर्तमान में रहें। यहीं से भविष्य का रास्ता तय होता है।

दूसरा पहलू

हरियाणा के झज्जर जिले के औद्योगिक क्षेत्र बहादुरगढ़ में गालियां छुड़ाने की पहल का हो रहा सकारात्मक असर।

बहादुरगढ़ में हैं, तो जरा 'जबान संभाल के' बोलें

नवीन सिंह पटेल

गालियां राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा हो गई हैं। गालियां तरक्कीपसंद समाज की निशानी नहीं होतीं। ये कमजोर और अविकसित समाज का ही संकेतक हैं। इसके बरक्स दिल्ली से सटे हरियाणा के बहादुरगढ़ (झज्जर) में संघर्षशील जनकल्याण सेवा समिति सांखोल का गाली-मुक्त समाज बनाने का 'जबान संभाल के' अभियान उम्मीद की एक नई किरण है। यह पहल सिर्फ दो साल पुरानी है। इस वर्ष रक्षाबंधन पर ब्रिगेडियर होशियार सिंह मेट्रो स्टेशन के बाहर हस्ताक्षर अभियान चलाकर संकल्प दिलाया कि हम न किसी को गाली देंगे, न ही देने देंगे। यहां महिलाओं ने ऐसी राखियां बनाकर बांटीं, जिनमें भाइयों से गाली न देने का वचन लेने का संदेश लिखा था। संयोग से यह पहल हरियाणा ग्रामीण विकास संस्थान नीलोखेड़ी (करनाल) से जुड़ी एक महिला (ललिता राठी) के ही दिमाग में कौंधी थी। क्यों? के सवाल पर ललिता बताती हैं कि मेरी परवरिश गाली-मुक्त परिवार में हुई। कॉलेज में भी ऐसा माहौल नहीं देखा। लेकिन, कुछ बरस पहले जब महिला सरपंचों को ट्रेनिंग देने गांवों में गई, तो छोटे-छोटे बच्चों तक को गालियां देते पाया। यहीं से विचार आया। बिगड़ी जबान को सुधारने का संबल बने संस्था के अध्यक्ष और सोनीपत के पीएमश्री केंद्रीय विद्यालय में भूगोल शिक्षक मनीष सांखोल और उनकी 350 सरकारी मुलाजिमों की सामाजिक कार्यों से जुड़ी टीम। अब इसी के संकल्पों में नया टैग है-गाली-मुक्त समाज की कोशिश। मनीष कहते हैं, हमने विचारों की चिंगारी को आग लगा दी है, ज्वाला बनाने का दायित्व सबका है। *महाभारत* के शांति पर्व में कहा गया है कि 'वाणी ही मित्र बनाती है, वाणी ही शत्रु।' बौद्ध दर्शन में भी गाली या कटु भाषा वर्जित है। कबीर, तुलसी, नानक जैसे संतों का सार है...कटु वचनों से वैमनस्य फैलता है, मधुर वाणी से प्रेम। विश्व इतिहास देखें, तो यूनानी सभ्यता ने भी अपमानजनक शब्दों को दंडनीय माना है। चीन-जापान भी गालियों को अत्यंत असभ्य मानते हैं। यूरोपीय समाज में गालियां आम बोलचाल में आ गईं, लेकिन कई सभ्यताओं में इनका प्रयोग निंदनीय है। हालांकि, गालियों पर शोध निष्कर्षों से चर्चित हुए कील विश्वविद्यालय के मनोविज्ञानी रिचर्ड स्टीफेंस के मुताबिक, गालियां दे लेने से दर्द घट जाता है। उन्हें कुछ शोध में मांसपेशियों की ताकत और सहनशक्ति बढ़ी मिली। वहीं जो लोग रोजाना गालियां देते हैं, उन्हें फायदा कम होता है। 'जबान संभाल के' जैसे सामाजिक यज्ञों में हम-आप भी कुछ आहुतियां दे दें, तो एक ऐसा आदर्श समाज बनते देर नहीं लगेगी, जहां शब्द घाव नहीं देंगे, बल्कि मरहम हो जाएंगे।

ब्रिगेडियर होशियार सिंह मेट्रो स्टेशन के बाहर हस्ताक्षर अभियान चलाकर संकल्प दिलाया गया कि हम न किसी को गाली देंगे, न ही देने देंगे।

हरियाणा ग्रामीण विकास संस्थान नीलोखेड़ी (करनाल) से जुड़ीं ललिता राठी की पहल पर 'जबान संभाल के' अभियान की शुरुआत हुई। 350 सरकारी मुलाजिम भी इस पहल का हिस्सा बन गए हैं।

आंकड़े

कॉलेज रैंकिंग

हाल ही में जारी हुई उच्च शिक्षा की एनआईआरएफ रैंकिंग-2025 में देश के शीर्ष 100 कॉलेजों में सबसे ज्यादा संख्या तमिलनाडु के कॉलेजों की है।

तमिलनाडु	17
महाराष्ट्र	11
उत्तर प्रदेश	9
दिल्ली	8
कर्नाटक व पंजाब	6-6

आंकड़े टॉप-100 में जगह बनाने वाले शीर्ष राज्यों के कॉलेजों की संख्या के | स्रोत : MoE

बीकानेर के गांवों में जल का अभाव बढ़ता जा रहा था। लोग घबरा गए। श्रीहरिरामदास जी बोले, 'घबराओ नहीं, ईश्वर सब आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप ही करेंगे।'

ईश्वर करेंगे सबकी पूर्ति

अंतर्यात्रा
संकलित

सिंहथल नामक गांव में श्रीहरिरामदास महाराज का जन्म हुआ। बचपन में ही ज्योतिष, योग, वेदांतादि शास्त्रों में कुशल हो गए थे। अनंतर भक्ति, विरक्ति और उपरति के तीव्र भावों के कारण श्रीहरिरामदास जी दुलचासर गांव में महात्मा श्रीजैमलदास जी महाराज के शरणागत हुए।

श्रीहरिरामदास जी शाम होते ही सिंहथल से सात कोस दूर दुलचासर गांव में गुरुदेव के पास जाते और रात भर सत्संग करते, सूर्योदय से पहले लौट आते। इस तरह छह महीने बीत गए। इसके बाद श्रीगुरुदेव की विशेष आज्ञा के कारण श्रीहरिरामदास जी रोज न जाकर महीने में एक बार जाते, और कुछ ही दिनों में गुरु कृपा से पूर्ण योगी हो गए। एक बार श्रीहरिरामदास जी के शिष्यों ने जीवित महोत्सव के दिन जनसुनवाई का आयोजन किया। जनसुनवाई में पता चला कि जिन्हें पानी का ठेका दिया था, वे पर्याप्त पानी नहीं पहुंचा सके। बीकानेर के गांवों में जल का अभाव दिन-प्रति-दिन बढ़ता जा रहा था। लोग घबरा गए। श्रीहरिरामदास जी बोले, 'घबराओ नहीं, ईश्वर सब आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप ही करेंगे।' इतना कहकर श्रीहरिरामदास जी स्वयं अपनी कुटी में ध्यानस्थ हो गए। एक-दो घड़ी में प्रभुकृपा से निर्मल आकाश में मेघों ने आकर गर्जना की और चारों तरफ जल-ही-जल कर दिया। बड़े आनंद से महोत्सव की समाप्ति हुई और लोग अपने-अपने स्थानों को चले गए।

आज का इतिहास

सुरीली आवाज की मलिका आशा भोसले का जन्मदिन

इतिहास में आठ सितंबर का दिन बहुत सुरीली और शोख गायिका आशा भोसले के जन्मदिन के तौर पर दर्ज है। हजारों गीतों को अपनी आवाज से अमर बना देने वाली आशा भोसले को भारतीय सिने जगत की सर्वकालिक महान गायिकाओं में गिना जाता है। आठ सितंबर 1933 को जन्मी आशा ने हिंदी के अलावा मराठी, बांग्ला, गुजराती, पंजाबी, भोजपुरी, तमिल, मलयालम, अंग्रेजी और रूसी भाषा में भी बहुत से गीत गाए हैं। 1900 : टेक्सास के गैलवेस्टोन में चक्रवाती तूफान से 6,000 लोगों की मौत। 1926 : महान संगीतकार एवं गायक भूपेन हजारिका का जन्म। 1943 : द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान इटली ने मित्र सेना के साथ बिना शर्त युद्धविराम संधि पर हस्ताक्षर किए। 1960 : भारत की पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के पति फिरोज गांधी का निधन। 1962 : चीन ने भारत की पूर्वी सीमा में घुसपैठ की। 1966 : लोगों को पढ.ाई के प्रति जागरूक करने के लिए यूनेस्को ने साक्षरता दिवस मनाने की शुरुआत की।1988 : जाने-माने व्यवसायी विजयपत सिंघानिया अपने माइक्रो लाइट सिंगल इंजन एयरक्राफ्ट से लंदन से अहमदाबाद पहुंचे।

आखिर महिलाओं की प्रगति का पैमाना क्या है

इसमें दो राय नहीं कि आजादी के बाद महिलाओं की प्रगति आश्वस्त करने वाली रही, लेकिन इसका दूसरा पक्ष भी है।

श्यौराज सिंह 'बेचैन'
समाज

आजादी के बाद समग्रता में देखें, तो महिलाओं की प्रगति आशाजनक और भविष्य के प्रति आश्वस्त करने वाली रही है। शासन में वे शीर्ष पदों पर विद्यमान हैं, उच्च शिक्षा में वे इग्नू, जेएनयू, एएमयू, इलाहाबाद, जामिया, जैसे कई विश्वविद्यालयों की कुलगुरु हैं, प्रशासन में वे सचिव, डीएम, एसडीएम, तो सर्वोच्च न्यायालय में जज हैं। खेलों में वे पुरुषों से आगे हैं, सेना में वे नेतृत्वकारी भूमिका में हैं, दृश्य और श्रव्य मीडिया के दोनों माध्यमों में वे संपादकों की श्रेणी में भी हैं, बहसों-विमर्शों में उनकी प्रखरता किसी से छिपी नहीं है। परंतु यह एक पक्ष है, स्त्रियों की अधिकार चेतना के भुक्त-भोगी क्रियाकलापों का, दूसरा पक्ष अब भी दर्शाता है, स्त्रियों की प्रगति की राह आसान नहीं है।

एससी/एसटी में ऐसी लाखों बालिकाएं, जिन्हें शिक्षा, सेवा का स्वतंत्रता सुलभ कोई अधिकार नहीं मिल पाया है। पचास साल पहले जो महिलाएं कला, साहित्य, मीडिया और उच्च शिक्षा में आ गईं, उन्हीं में से एक नगण्य संख्या ने विवाह संस्था का विरोध करके मातृत्व धारण करने से इन्कार कर सरोगेसी मदर से बच्चे पैदा कराने शुरू किए। अभिजात्यपन दर्शाने के लिए सिगरेट, दारू का इस्तेमाल करने, विवाह के बजाय लिवइन में रहने इत्यादि प्रकार की शैली का जीवन जीने लगीं। इनमें वैचारिक संतुलन भी नहीं है। इन्हीं में से कुछ उच्च पदों पर आसीन हो रही हैं।

कठिनाइयां खासकर असंगठित क्षेत्रों व निजी कंपनियों में काम कर रही महिलाओं को है। उनके लिए न तो काम के आठ घंटों पर अमल होता है और न उन्हें सवेतन मातृत्व अवकाश दिया जाता है। भवनों, पुलों, सड़कों के निर्माण कार्यों में लगी श्रमिक महिलाओं को पुरुषों से कम मजदूरी मिलती है। मां बनने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति अतिरिक्त ध्यान, दवाएं, पोषित आहार, तनाव रहित वातावरण देने की जरूरत होती है। माताएं स्वस्थ रहेंगी, तो उनकी स्वस्थ संतानें राष्ट्र निर्माण में सकारात्मक योगदान देने में समर्थ होंगी।

अंतरराष्ट्रीय टेनिस खिलाड़ी व कामयाब बेटी राधिका यादव की हत्या ने कितने दिलों को तोड़कर रख दिया। ऐसी क्या आफत आ गई थी पिता के सामने कि बेटी का ही खून कर दिया। अधिक से अधिक बेटी अपनी पसंद का जीवनसाथी चुन लेती। इससे भी दुखद गोविंदपुरम में अविनाश व अंजलि, दोनों भाई-बहन ने आत्महत्या कर ली। अंजलि एक्सपोर्ट कंपनी में टीम लीडर के तौर पर कार्यरत थी और अविनाश तो सरकारी सेवा में था। आत्महत्या के लिए उन्होंने सुसाइड नोट में अपनी सौतेली मां को जिम्मेदार बताया। इस केस में इन दोनों बच्चों को ज्यादा से ज्यादा घर से निकलना पड़ता। युवा थे, आत्मनिर्भर थे, मरने की क्या जरूरत थी? जाहिर है युवा पीढ़ी को कोई समझाने और समझने वाला नहीं है।

भारत में ऐसे गांवों की संख्या अब भी कम नहीं है, जहां लड़कियों के लिए स्कूल नहीं हैं या प्राथमिक स्कूल के बाद गांव से बाहर केवल लड़कों के लिए ही पढ़ने के अवसर हैं। अमेरिका की तरह हमारे यहां यदाकदा विविधता और सकारात्मक कार्रवाई की बातें होती हैं, पर ज्ञान के कई क्षेत्रों में स्त्रियों की भागीदारी को लेकर विविधता दिखाई नहीं पड़ती। महिलाओं की प्रगति का एक रूप वरिष्ठ लेखिका क्षमा शर्मा के लेख में पढ़ने को मिला, 'ट्रेडिशनल, लाइफ मूवमेंट में भी बहुत से लोग स्त्रियों को यह सिखा रहे हैं कि शादी किसी अच्छे इन्सान से न करके, किसी अमीर से करो, जिससे जिंदगी भर ऐश कर सको। किसी भी विचार से बड़ा पैसा है।'

नब्बे फीसदी एससी और पिच्चानवे फीसदी एसटी छात्राएं पहली पीढ़ी हैं, जो उच्च शिक्षा में आ रही हैं। उन पर जल्दी शादी का दबाव होता है और वे जल्दी मां बनती हैं। जीविका के लिए घर पर निर्भर रहेंगी, तो निर्णय लेने की क्षमता की कमी का एक भयावह एहसास होगा। अतः लड़कों से पहले लड़कियों के लिए उच्च शिक्षा सुनिश्चित होनी चाहिए।

Special arrangements by Amar Ujala

स्वत्वाधिकारी रामगोपाल इन्वेस्टमेन्ट्स प्रा.लि. के लिए मुद्रक, प्रकाशक समीर माहेश्वरी द्वारा नवभारत प्रेस, नवभारत भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जी.ई.रोड, रायपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित. प्रधान संपादक : समीर माहेश्वरी, संपादक : राजेश आर. जोशी* (पी.आर.बी. कानून के अनुसार संपूर्ण संपादकीय दायित्व के लिये जिम्मेदार)
■ रायपुर फोन : 0771-4343434, 2535555-66-77, ■ भुवनेश्वर : 0674-2380511/2380518 ■ बिलासपुर : 07752-230591, 407748, 224563 ■ वर्ष 66 ■ अंक 105 (रजि.नं. 13045/59 आरएनआई), पो. रजिस्टर्ड नं. छ.ग./रायपुर संभाग/61/2025-27 ■ भिलाई फोन : (0788) 2294181, 4030655

शांति के रास्ते पर लौटता मणिपुर

केंद्र सरकार और राज्य के दो प्रमुख जातीय समूहों मैतेयी और कुकी के बीच बीते गुरुवार को हस्ताक्षरित ऑपरेशन निलंबन समझौते से अशांत मणिपुर में शांति बहाली के प्रयासों को बल मिलने की उम्मीद जगी है। उम्मीद है कि इस प्रयास से राज्य की क्षेत्रीय अखंडता सुनिश्चित की जा सकेगी। समझौते के बाद निर्दिष्ट शिविरों को संवेदनशील क्षेत्रों से स्थानांतरित करने और राज्य में दीर्घकालिक शांति तथा स्थिरता सुनिश्चित करने की दिशा में भी सहमति बनी है। यह घटनाक्रम इस कारण से भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी 13 सितम्बर को वहां दौरे पर जाने वाले हैं। मई, 2023 में मैतेई और कुकी समुदाय के बीच जातीय हिंसा भड़कने के बाद प्रधानमंत्री की इस संवेदनशील राज्य की यह पहली यात्रा होगी। विगत में विपक्ष लगातार आरोप लगाता रहा है कि केंद्र ने मणिपुर को उसके हाल पर छोड़ दिया। विपक्ष ने राज्य में डबल इंजन सरकार के दौरान कुशासन का आरोप भी लगातार लगाया है। उनका यह भी आरोप रहा है कि सत्तारूढ़ भाजपा ने राज्य की स्थिति के नियंत्रण में अपनी विफलता के बावजूद एन बीरेन सिंह को मुख्यमंत्री के पद पर बनाए रखा था। लेकिन कुछ पेचीदा मुद्दे अभी भी सुलझाने बाकी हैं। इस मुहिम में विभिन्न हितधारकों को शामिल करने की जरूरत है। राज्य में एक प्रभावशाली नागरिक समाज समूह, कुकी-जो काउंसिल ने स्पष्ट किया है कि वह मैतेई और कुकी-जो क्षेत्रों के बीच बफर जोन में अप्रतिबंधित या मुक्त आवाजाही के पक्ष में नहीं। यह भी कि मणिपुर के नागाओं के शीर्ष निकाय ने मुक्त आवागमन व्यवस्था को समाप्त करने और भारत-म्यांमार सीमा पर बाड़ लगाने का विरोध किया है। इसके विरोध में सभी क्षेत्रों में व्यापार प्रतिबंध लागू करने की चेतावनी भी दी है। उल्लेखनीय है कि राज्य में जातीय संघर्ष की मूल वजह बहुसंख्यक मैतेई समुदाय की अनुसूचित जनजाति का दर्जा हासिल करने की मांग रही है। इस मांग पर उपजे टकराव को दूर करने तथा कुकी और नागाओं का विश्वास फिर से हासिल करने के प्रयास प्राथमिकता के आधार पर किए जाने की जरूरत है। निश्चय ही, सामान्य स्थिति की ओर बढ़ने के लिये मोदी सरकार को अब समय नहीं गंवाना चाहिए। यह अच्छी बात है कि कूकी-जो काउंसिल ने अलग से राष्ट्रीय राजमार्ग-2 को खोलने का फैसला लिया है। यह राजमार्ग मणिपुर से होकर गुजरता है। निस्संदेह, इस कदम से जहां राज्य में जीवन की जरूरी चीजों की आपूर्ति सरल होगी, वहीं विस्थापित परिवारों और राहत शिविरों में हालात के चलते रह रहे नागरिकों की मुश्किलें कम हो सकेंगी। सुखद यह भी है कि समझौते में कूकी संगठनों ने अपने शिविरों की संख्या कम करने तथा हथियारों को निकटवर्ती बीएसएफ और सीआरपीएफ शिविरों में पहुंचाने पर भी सहमति जताई है। विश्वास किया जाना चाहिए कि समझौते के मुद्दों पर सतर्क निगरानी के साथ राज्य में स्थायी शांति का वातावरण बन सकेगा।

सांसदों के वेतन-भत्ते और उनकी उत्पादकता

योगेन्द्र योगी

(वरिष्ठ पत्रकार)

इंडोनेशिया की राजधानी में संसद पहुंचने की कोशिश कर रहे हजारों पत्थरबाज छात्रों पर दंगा पुलिस ने आंसू गैस के कई राउंड दागे। ये छात्र संसद सदस्यों के भव्य भत्तों का विरोध करने के लिए वहां पहुंचे थे। प्रदर्शनकारी हाल की रिपोर्टों से नाराज थे कि प्रतिनिधि सभा के 580 सदस्यों को सितंबर 2024 से प्रति माह 50 मिलियन रुपिया (एसडी 3,075) का आवास भत्ता मिल रहा है। सांसदों को प्रति महीने दिया जाने वाला भत्ता एक इंडोनेशियाई नागरिक के प्रति महीने आय से 20 गुना ज्यादा है। इंडोनेशिया की संसद के 580 सदस्यों को सितंबर 2024 से 5 करोड़ रुपये (3,075 डॉलर) आवास भत्ता के तौर पर दिए जा रहे हैं। इंडोनेशिया में भ्रष्टाचार व्याप्त है और कार्यकताओं का कहना है कि 28 करोड़ से ज्यादा की आबादी वाले देश में पुलिस और संसद सदस्यों को व्यापक रूप से भ्रष्ट माना जाता है।

नेताओं के रवैये को देखकर लगता है कि भारत में भी देर-सबेर ऐसे हालात बन रहे हैं। मंत्री, सांसद-विधायकों का सही मायने में देश के लोगों की हालत से ज्यादा सरोकार नहीं रह गया है। संसद के मॉनसून सत्र में लोकसभा में चर्चा के लिए 120 घंटे तय थे किन्तु 37 घंटे ही चर्चा हो पाई। हंगामें के कारण कार्रवाई ठप होने से जनता कई सौ करोड़ के धन का नुकसान हुआ। लगातार व्यवधानों के कारण केवल एक तिहाई समय तक ही सक्रिय रूप से चल पाया। इसमें बड़ा हिस्सा ऑपरेशन सिंदूर पर चर्चा का रहा। अधिकांश समय हंगामे में बीता, जिससे विधेयक बिना पर्याप्त चर्चा के पारित किए गए। राज्य सभा में 285 सवाल पूछने के बावजूद केवल 14 सवालों का ही जवाब सत्र के दौरान दिया गया। लगातार 20 दिनों तक इंडिया ब्लॉक से जुड़े विपक्षी दलों ने बिहार में मतदाता सूची के पुनर्निरीक्षण केमुद्दे पर लोक सभा और राज्य सभा के अंदर और बाहर जमकर हंगामा और प्रदर्शन किया।

इसकी वजह से दोनों सदनों की कार्यवाही काफी बाधित हुई। राज्य सभा के डिप्टी चेयरमैन हरवंश ने मॉनसून सत्र के आखिरी दिन अपने समापन भाषण में कहा कि कुल मिलाकर, सदन केवल 41 घंटे 15 मिनट ही चल पाया। इस सत्र की उत्पादकता निराशाजनक रूप से सिर्फ 38.88 प्रतिशत रही, जो गंभीर आत्मचिंतन का विषय है। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि चुने हुए जनप्रतिनिधी देशहित के लिए कितने गंभीर हैं। काम नहीं तो वेतन नहीं, संसद में इस मुद्दे पर कोई आवाज नहीं उठाता। किसी भी कारण से संसद का कामकाज हो या नहीं, इससे सांसदों को फर्क नहीं पड़ता। उन्हें पूरा वेतन-भत्ता मिलता है। काम नहीं करने के आधार पर इसमें कटौती की कोई चर्चा तक नहीं करता। दमन और दीव के केंद्र शासित प्रदेश के निर्दलीय सांसद उमेश पटेल अकेले ऐसे सांसद रहे जिन्होंने यह मांग उठाई। उन्होंने कहा था कि अगर सदन नहीं चलता है, तो सांसदों को भत्ता भी नहीं मिलना चाहिए। उनका दावा था कि सांसदों को भत्ता तो मिलता है, लेकिन जनता के काम नहीं हो पाते। उन्होंने आरोप लगाया था कि सत्ता और विपक्ष दोनों की इगो के कारण सदन नहीं चलने दिया जा रहा है, जबकि विपक्षी दल सरकार को ही इसके लिए जिम्मेदार ठहरा रहे हैं। उन्होंने कहा कि सदन में कार्य नहीं होने पर सांसदों का वेतन और अन्य लाभ रोके जाने चाहिए। संसद की कार्रवाई ठप करने के लिए सत्तापक्ष और विपक्ष एक-दूसरे पर आरोपों का ठीकरा फोड़ते हैं, लेकिन जब बात वेतन-भत्ते बढ़ाने की आती है तो सब मिल कर एक हो जाते हैं। इस पर कोई बहस तक नहीं होती। वेतन-भत्तों के एवज में सांसदों की उत्पादकता कितनी रही, इसका विश्लेषण तक नहीं किया जाता।

देश जब 79वां स्वतंत्रता दिवस मनाता है, तब उस दौरान मॉनसून सत्र में 79 घंटे भी संसद नहीं चली। देश की संसद के मॉनसून सत्र में लोकसभा में 83 घंटे काम नहीं हुआ। इससे 124 करोड़.50 लाख रुपए जनता का धन बर्बाद हुआ। राज्यसभा में 73 घंटे ठप रही, इससे 80 करोड़. रुपए व्यर्थ गए। मतलब दोनों सदनों में मिलाकर 204 करोड़ 50 लाख रुपए बर्बाद कर दिए गए। संसद में जहां घंटाभर बैठकर सांसद काम नहीं कर सकते हैं, उन्हें ही 5-5 साल की जिम्मेदारी देकर जनता भेज देती है। संसद में बैठने वाले 93 प्रतिशत सांसद करोड़पति हैं, जिन्हें अभी एक लाख 24 हजार रुपए हर महीने वेतन मिलता है। संसदीय क्षेत्र भत्ता 84 हजार रुपए होता है। दैनिक भत्ता सांसदों का 2500 रुपए है। वेतन भत्ता जोड़कर हर सांसद को हर महीने दो लाख 54 हजार रुपए जनता के पैसे से दिया जाता है।

देशहित के नाम पर हंगामा कर संसद की कार्रवाई ठप करने में सांसद कोई मौका नहीं छोड़ते पर जब बात वेतन-भत्ते बढ़ाने की आती है तो सब एक हो जाते हैं। गत वर्ष संसद सदस्यों के वेतन में 24 प्रतिशत की बढ़ोतरी की गई। नया वेतन 1 अप्रैल 2023 से प्रभावी माना गया। इसके साथ ही सांसदों का मासिक वेतन कुछ भत्तों और सुविधाओं के अलावा 1.24 लाख रुपये हो गया है। सरकार का कहना था कि बढ़ती महंगाई को देखते हुए सांसदों के वेतन में वृद्धि की गई। वहीं पूर्व सदस्यों के लिए पांच साल से अधिक की सेवा पर प्रत्येक वर्ष के लिए अतिरिक्त पेंशन की घोषणा की गयी। इसमें कहा गया है कि दैनिक भत्ता 2,000 रुपये से बढ़ाकर 2,500 रुपये कर दिया गया है।

पूर्व सांसदों की पेंशन 25,000 रुपये प्रति माह से बढ़ाकर 31,000 रुपये प्रति माह कर दी गई। पांच साल से अधिक की सेवा पर प्रत्येक वर्ष के लिए अतिरिक्त पेंशन 2,000 रुपये प्रति माह से बढ़ाकर 2,500 रुपये प्रति माह कर दी गई। 1954 के सांसद वेतन, भत्ता और पेंशन अधिनियम के तहत उन्हें यह सुविधा दी गई है। 2018 के बाद से सांसदों के वेतन और भत्ते की हर पांच साल पर समीक्षा होती है। यह समीक्षा महंगाई दर पर आधारित होती है। 2018 में सांसदों के वेतन और भत्तों के लिए कानून में संशोधन किया गया था। सांसदों को विट्ठलभाई पटेल (वीपी) हाउस में हॉस्टल से लेकर मध्य दिल्ली में दो बेडरूम वाले फ्लैट और बंगले तक आवास मिलता है। उन्हें बिजली, पानी, टेलीफोन और इंटरनेट शुल्क के लिए भी राशि दी जाती है।

संसद में निरंतर हंगामे के परिणामस्वरूप दोनों सदनों में लंबे समय तक स्थगन होता है जो अंततः सदन में सार्वजनिक नीति के निर्माण को प्रभावित करता है। भारत दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में से एक है, जहां नीति पर अपनी राय के साथ हर किसी की अपनी आवाज है, लेकिन ये लंबे समय तक व्यवधान संसद की क्षमता को कम कर रहा है। दिन के अंत में हमें क्या परिणाम मिलता है, और चर्चा से हमें कितना लाभ होता है? संसद अपने नियम और विनियम बनाती है, विधायी निकायों के प्रभावी कामकाज के लिए उन नियमों और विनियमों का पालन करना सदस्यों पर निर्भर है। ऐसा कब तक होगा? संसद को व्यक्तिगत स्तर और पार्टी स्तर दोनों पर आंतरिक जांच और संतुलन के साथ आना होगा। बार-बार व्यवधान डालने पर आनुपातिक दंड लगाया जा सकता है। एक संसद व्यवधान सूचकांक तैयार किया जा सकता है जिस पर व्यवधानों का स्वतः निलंबन लागू किया जा सकता है। साथ ही संसद के कार्य दिवसों में वृद्धि की जानी चाहिए। लगातार व्यवधान एक नया मानदंड बनता जा रहा है।

सोशलिस्ट साहित्यकार, बेनीपुरी जी ! एक श्रद्धांजलि!!

स्व. के. विक्रम राव

(वरिष्ठ पत्रकार)

रामवृक्ष बेनीपुरी की 58वीं पुण्यतिथि पर विशेष

यह वृत्तांत है एक सोशलिस्ट सूरमा का जो था तो निखलिस गांधीवादी, पर गुरिल्ला युद्ध में उसे महारत थी। संदर्भ है रामवृक्ष बेनीपुरी का। आज उनकी पुण्यतिथि है। यह भारत की आजादी के अमृत महोत्सव के सिलसिले में अधिक समीचीन हो जाता है। बेनीपुरी जी की विलक्षण शख्सियत के विभिन्न आयामों का यहां पर उल्लेख है। एक सृजनशील साहित्यकार, विप्लवी स्वाधीनता- सेनानी, राजनीतिक क्रांतिद्रष्टा, लडैय्या पत्रकार, कालजयी नाट्यकार, जुझारू विधायक, मगर सर्वाधिक संवेदनशील इंसान, जिनके दिल में भारत के समतामूलक जनान्दोलन की वेदना झलकती थी। टीस सुनाई देती थी। करीब छह दशक बीते। उनके पटना-स्थित बोरिंग रोड आवास पर भेंट करने मैं गया था। तब यूपी के कांग्रेसी मुख्यमंत्री रहे बाबू संपूर्णानंद, बनारसवाले, ने छात्र आन्दोलन का नृशंस दमन करने की कसम खा ली थी। निर्ममता और बर्बरता के लिये ख्यात यूपी पुलिस के वारन्ट से लखनऊ में बचते में पटना मैं छिप गया था। तब विश्वविद्यालय की समाजवादी युवक सभा का सचिव था।

पटना में बेनीपुरी जी से भेंट करने उनके बोरिंग रोड डेरे पर मैं गया। वे व्यथित थे। प्रकरण यही पूर्व सोशलिस्ट, सत्तासीन संपूर्णानंद का है। वे राजमद के व्यामोह में निमज्जित हो गये थे। मगर बेनीपुरी जी आक्रोशित थे राष्ट्र के इन सोशलिस्ट नेतागण के कामधाम से। उनके दर्दभरे अलफाज उद्वेलित करते रहे। तभी वर्तमान सियासी परिदृश्य पर उनका वाक्य था, बड़ा यादगार, मर्म छू जाने वाला हैः एक हमारे कमांडर थे, जयप्रकाश नारायण। उन्होंने भूदान में जीवन ही दान कर दिया। दूसरा योद्धा था (राम मनोहर लोहिया) उसने अपने कुटिया अलग बना ली। फिर कुछ रुके और बोले, नेहरू कितना तकदीरवाला है। उसके विरोधी बिखरते जा रहे हैं। कोई सबल प्रतिरोध नहीं। समाजवादी इन तीनों बलैय्या लेते थे कभी।

बिहार सोशलिस्ट संघर्ष के पुरोधा रामवृक्ष जी सच में समतावादी समाज के लिये युद्धरत रहे। पहला काम इस भूमिहार विप्र ने किया कि अपने नाम से ह्यशर्माह्य हटा दिया। गांव बेनीपुर को जोड़ दिया। जनेऊ तोड़ो अभियान चलाया। अपने देशप्रेमवाली कृतियों पर उन्हें जेल जाना पड़ा। हजारीबाग जेल में दीवार फांद कर भागने में जयप्रकाश नारायण की मदद में भी रामवृक्षजी की अहम किरदारी थी। हजारीबाग जेल ब्रिटिश राज में यातना के लिये मशहूर था। इस परिवेश में रामवृक्ष जी के संबंधी राजीव रंजन दास का प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नाम लिख पत्र काफी प्रकाश डालता है। राजीव रंजन दास ने मोदी जी को लिखाः विषयः अगस्त क्रांति के वीर योद्धाः 23 मई 1943, हनुमान नगर (नेपाल) जेल-ब्रेक और आजादी की 75वीं वर्षगांठ।

मान्यवर, जब से आप प्रधानमंत्री बने, भारत के आजादी के चंद ऐसे किस्सों पर बराबर आपने अपनी नजर घुमाई जिसे कांग्रेसी राज ने ठंडे बस्ते में डाल दिया था। मुझे याद है की अगस्त क्रांति के 75वीं वर्षगांठ / हीरक जयंती पर, आपने संसद के दोनों सदनों का विशेष संयुक्त अधिवेशन संबोधित कर, अगस्त क्रांति के शहीदों पर भारतीय संसद के माध्यम से श्रद्धांजलि और कृतज्ञता अर्पित की और श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी की पुस्तक जंजीरें और दीवारें (जिसमे 1942 की क्रांति की आंखों देखी झलक प्रस्तुत की गई है) की पंक्तियों को दोहरा का उस वक्त की मनोदशा और मिजाज को देश से अवगत करवाया था। वह शब्द रचना भी आंखों देखी ही थी, क्योंकि खुद श्री रामवृक्ष बेनीपुरी 1942 के क्रांति के महानायकों में से एक थे।

बेनीपुर जी के संघर्ष कालखण्ड की यह उपरोक्त बात है, करीब 1948-49 की। तब पटना से दैनिक सर्चलाइट और हिन्दी प्रदीप (आज हिन्दुस्तान टाइम्स और हिन्दुस्तान) प्रकाशित होता था। मेरे पिता स्वाधीनता सेनानी स्व. श्री के. रामा राव सर्चलाईट के संपादक थे। पड़ोसी नेपाल में वंशानुगत राणा कुटुम्ब ने महाराज त्रिभुवन वीर विक्रम शाह को कठपुतली शासक बना कर महल में कैद कर लिया था। काठमांडू में ब्रिटिश राजदूत ने कोईराला बंधुओं को तंग करना शुरू किया था। मातृका प्रसाद, विश्वेश्वर प्रसाद और गिरिजा प्रसाद भारतीय सोशलिस्टों के साथी थे। उनका रामवृक्ष जी से गहरा संबंध रहा। गिरिजा प्रसाद कोइराला को तो संपादक के. रामा राव ने नेशनल हेरल्ड का काठमांडू में 1945 में संवाददाता नियुक्त किया था।

इन कोइराला बंधुओं को नेपाल के राणा राज के खिलाफ जनसंघर्ष में गृहमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल तथा केन्द्रीय मंत्री रफी अहमद किदवई का पूरा समर्थन था। इन सोशलिस्टों को बिहार सीमा पर जमे नेपाली लड़ाकुओं को संबल मिला था। रामवृक्ष जी इन सारी कार्रवाहियों के हरावल दस्ते में थें मगर तभी नेपाल के राजाओं ने अपने व्यवसायिक यार घनश्यामदास बिड़ला पर दबाव डाल कर दैनिक सर्चलाईट को नेपाल जनसंघर्ष से हटवा दिया। संपादक के. रामा राव को बर्खास्त कर दिया गया। उस कालखण्ड में गर्दनीबाग के पटना हाईस्कूल में मैं छात्र था। समाचारपत्र पढ़ लेता था। रामवृक्ष बेनीपुरी जी के संघर्ष के दौर के समय ही पड़ोसी चीन में माओ की कम्युनिष्ट लाल सेना भी अमेरिकी पिट्ठु च्यांग काई शेक को बचा न सकी। सर्चलाईट में तब नेपाल और माओ के चीन की खबरें ही खूब छपती थीं।

राजनेता के साथ रामवृक्ष बेनीपुरी जी की हिन्दी से सेवा भी अपरिमित और असीम थी।

मान्यवर, जब से आप प्रधानमंत्री बने, भारत के आजादी के चंद ऐसे किस्सों पर बराबर आपने अपनी नजर घुमाई जिसे कांग्रेसी राज ने ठंडे बस्ते में डाल दिया था। मुझे याद है की अगस्त क्रांति के 75वीं वर्षगांठ / हीरक जयंती पर, आपने संसद के दोनों सदनों का विशेष संयुक्त अधिवेशन संबोधित कर, अगस्त क्रांति के शहीदों पर भारतीय संसद के माध्यम से श्रद्धांजलि और कृतज्ञता अर्पित की और श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी की पुस्तक जंजीरें और दीवारें (जिसमे 1942 की क्रांति की आंखों देखी झलक प्रस्तुत की गई है) की पंक्तियों को दोहरा का उस वक्त की मनोदशा और मिजाज को देश से अवगत करवाया था। वह शब्द रचना भी आंखों देखी ही थी, क्योंकि खुद श्री रामवृक्ष बेनीपुरी 1942 के क्रांति के महानायकों में से एक थे। बेनीपुर जी के संघर्ष कालखण्ड की यह उपरोक्त बात है, करीब 1948-49 की। तब पटना से दैनिक सर्चलाइट और हिन्दी प्रदीप (आज हिन्दुस्तान टाइम्स और हिन्दुस्तान) प्रकाशित होता था। मेरे पिता स्वाधीनता सेनानी स्व. श्री के. रामा राव सर्चलाईट के संपादक थे। पड़ोसी नेपाल में वंशानुगत राणा कुटुम्ब ने महाराज त्रिभुवन वीर विक्रम शाह को कठपुतली शासक बना कर महल में कैद कर लिया था। काठमांडू में ब्रिटिश राजदूत ने कोइराला बंधुओं को तंग करना शुरू किया था। मातृका प्रसाद, विश्वेश्वर प्रसाद और गिरिजा प्रसाद भारतीय सोशलिस्टों के साथी थे। उनका रामवृक्ष जी से गहरा संबंध रहा। गिरिजा प्रसाद कोइराला को तो संपादक के. रामा राव ने नेशनल हेरल्ड का काठमांडू में 1945 में संवाददाता नियुक्त किया था।

रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने बहुत सारी रचनाएं की हैं जिनमें कहानी, उपन्यास, नाटक, रेखाचित्र, यात्रा विवरण, संस्मरण, निबंध आदि लिखे हैं जो कि बहुत प्रचलित हुए हैं। बिहार में हिंदी साहित्य सम्मेलन के संस्थापक के रूप में भी रामवृक्ष बेनीपुरी को याद करते हैं। रामवृक्ष जी जब 15 साल के थे तभी से उन्होंने पत्रिकाओं में लेख लिखते थे तथा 1930 में जेल में रहते हुए वे पतितों के देश में नाम का एक प्रसिद्ध उपन्यास का रचना किया। कहा जाता है कि बेनीपुरी जी जब भी किसी आंदोलन के बाद जेल में जाते थे और जेल से रिहा होते थे उनके हाथ में दो चार ग्रंथों की पांडुलिपियां जरूर रहती थी क्योंकि जेल में रहकर भी वह लोगों के दिलों में आग भड़काने वाली रचनाएं लिखते रहते थे।

रामवृक्ष जी की रचानाओं में मुझ पत्रकार को उनकी ह्यगेंहू और गुलाबह्य बहुत पंसद है इसमें रूहानी तथा भौतिक विषयों पर सामयिक टिप्पणी है। उस काल में सोशलिस्ट आंदोलन के लोग अग्रिम पंक्ति के साहित्यकार भी होते थे। आज के समाजवादियों के लिए मिसाल हैं रामवृक्षजी। राजनेता भी, साहित्यकार थे और जननायक थे। उन्हें हमारी श्रद्धांजलि।

(स्व. के विक्रम राव ने वर्षों पहले यह लेख लिखा था। लेकिन यह आज भी मौंजू है।)

वरिष्ठ नागरिक आयोग

केरल देश का पहला राज्य बन गया है, जिसने वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण, संरक्षण और उनका पुनर्वास सुनिश्चित करने के लिए एक आयोग का गठन किया है. यह आयोग बुजुर्गों को होने वाली परेशानियों, जैसे- उपेक्षा और शोषण को दूर करने की दिशा में काम करेगा. साथ ही, यह वरिष्ठ नागरिकों के कौशल, अनुभव और नवीन विचारों से अन्य लोगों को लाभान्वित करेगा तथा 'नव केरल' के निर्माण में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में भी काम करेगा. इस आयोग का गठन केरल वरिष्ठ नागरिक आयोग अधिनियम, 2025 के तहत किया गया है, जिसे राज्य विधानसभा ने विगत मार्च में पारित किया था. इस आयोग के बनने से राज्य के पीड़ित वरिष्ठ नागरिकों को अपनी बातें रखने का मंच मिलेगा. आज बुजुर्गों से न केवल उनकी आजादी छीनी जा रही है, बल्कि उनके मौलिक अधिकारों से भी उन्हें वंचित किया जा रहा है. उनको अपमानित किया जा रहा है और उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जा रहा है. आयोग बनने से इस पर अंकुश लगेगा, साथ ही, बुजुर्गों के कल्याण और संरक्षण पर भी काम होगा. जो लोग या परिवार बुजुर्गों के साथ बुरा व्यवहार करते हैं, उन्हें भी सजा मिलेगी. इस आयोग से वृद्ध समाज की चुनौतियों का समाधान करने के लिए व्यापक रणनीतियां तैयार करने में मदद मिलने की भी उम्मीद है. इस लिहाज से केरल सरकार का यह फैसला ऐतिहासिक है. मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन के मुताबिक, देश में बुजुर्गों के कल्याण के मामले में देश के अव्वल नंबर का राज्य केरल वरिष्ठ नागरिक आयोग के गठन के जरिये एक और उदाहरण पेश कर रहा है. इस आयोग में एक अध्यक्ष और कम से कम चार सदस्य होंगे, जिन्हें सरकार द्वारा आधिकारिक अधिसूचना के माध्यम से नियुक्त किया जायेगा. अध्यक्ष समेत सभी सदस्य वरिष्ठ नागरिक तो होंगे ही, यह भी सुनिश्चित किया जायेगा कि कि आयोग में एक सदस्य अनुसूचित जाति या जनजाति से तथा एक सदस्य महिला हो. तिरुवनंतपुरम स्थित आयोग के अध्यक्ष के रूप में पूर्व राज्यसभा सांसद और कोल्लम जिला पंचायत अध्यक्ष के सोमप्रसाद की नियुक्ति की गयी है. राज्य की उच्च शिक्षा एवं सामाजिक न्याय मंत्री आर बिंदु के मुताबिक, सरकार ने वृद्धों की देखभाल और सुरक्षा को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकता में रखा है. उल्लेखनीय है कि देश में सबसे अधिक वृद्ध आबादी वाले राज्यों में से एक केरल में 2026 तक एक चौथाई लोगों की आयु 60 वर्ष से अधिक होने का अनुमान है.

केरल ने वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण के लिए एक आयोग का गठन किया है. यह आयोग बुजुर्गों को होने वाली परेशानियों, जैसे- उपेक्षा और शोषण को दूर करने की दिशा में काम करेगा.

भारत के रत्न भूपेन हजारिका

नरेंद्र मोदी
प्रधानमंत्री
https://x.com/narendramodi

जन्म शताब्दी वर्ष पर विशेष

आज भारत रत्न डॉ भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है. वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे. भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है, लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है. उनका संगीत हमें मानवीय और साहसी बनना सिखाता है. वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और युवा शक्ति को याद रखने को कहता है. वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है. जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए, यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचायेंगे.

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज आठ सितंबर का दिन बहुत खास है. विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं. आज भारत रत्न डॉ भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है. वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे. यह बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है. यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है. भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया. उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं, जो धुन से भी आगे जाती थीं. वे केवल एक गायक नहीं थे, बल्कि लोगों की धड़कन थे. कई पीढ़ियां उनके गीत सुनती हुई बड़ी हुई. उनके गीतों में करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है. भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली, जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही. भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है. वह आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है. उसमें मानवता का स्पर्श है.

भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे. असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा. यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने. वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले. बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी. केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया. वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना. किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते भूपेन दा ने अपना पहला गीत रिकॉर्ड करा लिया, लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था. भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे. जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले. ज्योति प्रसाद अग्रवाला और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया. सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तक ले गयी. वे बीएचयू में राजनीतिशास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था. बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया. काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं और मुझे बहुत गर्व होता है. काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया. वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया. वे पॉल रॉब्सन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे. रॉब्सन का गीत, 'ओल' मैन रिवर' उनके कालजयी गीत 'बिश्टीरनो परोरे' की प्रेरणा बना. अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया.

भूपेन हजारिका
(8 सितंबर, 1926- 5 नवंबर 2011)

भूपेन हजारिका संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे. भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वे भारत लौट आये और संगीत साधना में डूब गये. रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्यूमेंटरी तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे. जहां भी वे गये, उन्होंने नयी प्रतिभाओं को समर्थन दिया. भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिये. गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत जैसे अनेक विषय उन्होंने उठाये. उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी. उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं. साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया. बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे... और आज भी पा रहे हैं. भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है. उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया. उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिंदी फिल्मों के लिए संगीत रचा. उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वह बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी. 'दिल हूम हूम करे' में जो पीड़ा बहती है, वह सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है. जब वे पूछते हैं, 'गंगा बहती है क्यूं', तो ऐसा लगता है, मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों. उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया. यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा. असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वह असम की आवाज बने. भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे. वर्ष 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गये. यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था. उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे. भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया. उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवॉर्ड समेत कई सम्मान मिले. वर्ष 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला. यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी. पूरी दुनिया ने, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने, इस अवसर पर खुशी जतायी. यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे. वे कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता. एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है.

मुझे 2011 का वह समय याद है, जब भूपेन दा का निधन हुआ. मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे. हर आंख नम थी. जीवन की तरह मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया. इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गयी. वही नदी, जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है. अब यह देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है. यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है. भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया. वर्ष 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल, इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है.

भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है, लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है. उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं. उनका संगीत हमें मानवीय और साहसी बनना सिखाता है. वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और युवा शक्ति को याद रखने को कहता है. वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है. भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है. जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए, यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे. यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नयी प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे. मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं.

भारत पर ट्रंप के यू टर्न के मायने

अनिल त्रिगुणायत
पूर्व राजनयिक
amb.trigunayat@gmail.com

भारतीय उत्पादों पर 50 फीसदी टैरिफ लगाने के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप ने अब भारत के प्रति नरम रुख जताते हुए नरेंद्र मोदी से रिश्ते को खास बताया है. इससे भारत-अमेरिका संबंधों में बेहतरी की उम्मीद बनी है.

हाल ही में एक इंटरव्यू में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारतीय प्रधानमंत्री मोदी की तारीफ की. ट्रंप से यह पूछा गया था कि क्या इस समय आप भारत के साथ संबंधों को फिर से सुधारने के लिए तैयार हैं? ट्रंप का जवाब था, 'मैं हमेशा तैयार रहूंगा. मैं प्रधानमंत्री मोदी का दोस्त रहूंगा. वह महान प्रधानमंत्री हैं. इस समय वह जो कर रहे हैं, वह मुझे पसंद नहीं है, लेकिन भारत और अमेरिका के बीच एक खास रिश्ता है. इसमें चिंता की कोई बात नहीं.' अच्छी बात यह हुई कि भारत ने तत्काल इस पर सकारात्मक प्रतिक्रिया दी. प्रधानमंत्री मोदी ने सोशल मीडिया के एक्स प्लेटफॉर्म पर लिखा, 'मैं अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की भावनाओं और हमारे संबंधों की सकारात्मकता की गहराई से सराहना करता हूं. मैं पूरी तरह से उसका समर्थन करता हूं.

भारत और अमेरिका के बीच एक बहुत ही सकारात्मक और भविष्योन्मुखी व्यापक और वैश्विक रणनीतिक साझेदारी है.' ट्रंप की इन टिप्पणियों के बाद अब भारत-अमेरिका संबंधों के सामान्य होने की उम्मीद बनी है. अब सभी की निगाहें इस पर हैं कि नवंबर में भारत में होने वाले क्वाड शिखर सम्मेलन में ट्रंप आयेंगे या नहीं. गौरतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी ने जब ट्रंप को क्वाड में आने का न्योता दिया था, तब ट्रंप ने उसे स्वीकार कर लिया था. लेकिन उसके बाद से बहुत कुछ हो चुका है. ऐसे में, क्वाड का मंच दोनों देशों के संबंधों को सामान्य करने का अवसर बन सकता है. दरअसल ट्रंप भारत के बारे में शुरू से ही दो बातें करते रहे हैं- प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से उनके रिश्ते बहुत अच्छे हैं, लेकिन भारत टैरिफ किंग है, जो अमेरिकी उत्पादों पर भारी टैरिफ लगाता है. जब वह पहली बार राष्ट्रपति बने थे, तब भी भारत के साथ उनके रिश्ते बहुत सहज नहीं थे, और उन्होंने भारत को जीएसपी लाभ के दायरे से बाहर कर दिया था. इस बार राष्ट्रपति चुनाव के अपने अभियान में भी भारत के बारे में बातें करते हुए उन्होंने भारतीय टैरिफ के बारे में बातें कही थीं. इसलिए यह स्पष्ट था कि दूसरे राष्ट्रपति काल में भी भारत के साथ उनके रिश्ते उतार-चढ़ाव वाले रहने वाले हैं. ऐसा ही हुआ.

ट्रंप की कटुता की शुरुआत ऑपरेशन सिंदूर के दौरान संघर्षविराम से हुई. वह चाहते थे कि भारत इस बात को स्वीकारे कि पाकिस्तान के साथ संघर्षविराम ट्रंप ने करवाया था, लेकिन भारत की तरफ से कहा गया कि संघर्षविराम दोनों पक्षों की बातचीत के बाद हुआ था. दूसरी ओर, पाकिस्तान ने न सिर्फ संघर्षविराम का श्रेय ट्रंप को दिया, बल्कि उनका नाम नोबेल पुरस्कार के लिए भी प्रस्तावित किया. ऐसे में, भारत से नाराज ट्रंप ने भारतीय उत्पादों पर 50 फीसदी टैरिफ लगा दिया. इसके बावजूद नयी दिल्ली ने परिपक्व रवैये का परिचय दिया है. एक तरफ भारत ने अमेरिका के साथ रिश्तों पर टिप्पणी करते हुए लगातार संयम बरता, दूसरी ओर, दूसरे देशों के साथ संपर्क बढ़ाने और व्यापार समझौता करने की दिशा में सक्रियता बढ़ायी. इस बीच प्रधानमंत्री मोदी एससीओ की शिखर बैठक में भाग लेने के लिए चीन गये. सिंगापुर के साथ आर्थिक सहयोग, कौशल विकास, डिजिटलीकरण तथा कनेक्टिविटी के अलावा आतंकवाद से निपटने के तौर-तरीके पर आपसी सहमति बनी है. जर्मनी के विदेश मंत्री भारत दौरे पर आये थे और उन्होंने कहा कि जर्मनी के लिए एशिया का अर्थ भारत ही है. जर्मनी ने मुक्त व्यापार समझौते पर भारत का समर्थन भी किया है. यूरोप के चार देशों ने बिना किसी टैरिफ के भारत के साथ व्यापार करने पर सहमति जतायी है. अगले महीने से इन देशों के साथ बिना किसी आयात शुल्क के कारोबार शुरू हो जायेगा. भारत की इन गतिविधियों से ट्रंप को लगा होगा कि भारत झुकने वाला नहीं है.

इन सबने ट्रंप को सोचने पर मजबूर कर दिया. उन्होंने यह भी कहा कि अमेरिका ने भारत और रूस को चीन के हाथों खो दिया है. ट्रंप को समझना चाहिए कि भारत कोई मिठाई नहीं है. भारत एक स्वतंत्र और संप्रभु देश है और अमेरिका उसका साझेदार देश है. ऐसे में अमेरिका के साथ रिश्ते में भारत को भी बराबरी और सम्मान की अपेक्षा रहती है. भारत ने अमेरिका के साथ रिश्ते को सामान्य बनाये रखने की कोशिश की है. इसे जारी रखना चाहिए. इसके अलावा हमें दूसरे देशों के साथ हमारे संबंधों को बेहतर करने की नीति पर भी आगे बढ़ते रहना चाहिए.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

ट्रंप ने इतिहास को उलट दिया है

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका ने जब शुल्क और दूसरी व्यापार बाधाएं हटानी शुरू की थीं, तब दुनिया के बड़े हिस्से ने उसका अनुसरण किया और अमेरिकी नेताओं के इस तर्क को स्वीकारा था कि आपसी व्यापार बढ़ाने से समृद्धि बढ़ेगी, लेकिन अब, जब राष्ट्रपति ट्रंप ने आयातों को सीमित करने के लिए बाधाएं खड़ी कर इतिहास को पलट दिया है, तब दुनिया के दूसरे देश उनकी आर्थिक नीति से सहमत नहीं हैं. दूसरे देश अपने यहां अमेरिकी आयातों पर टैरिफ नहीं बढ़ा रहे, न ही वे अन्य देशों के आयातित उत्पादों पर ऊंचा शुल्क लगा रहे हैं. यानी शेष विश्व ट्रंप की संरक्षणवादी नीतियों को खारिज कर रहा है. ट्रंप के शीर्ष व्यापार सलाहकार ने हाल में एक लेख लिखकर बताया कि ट्रंप प्रशासन एक नयी विश्व व्यवस्था बना रहा है. हकीकत में अमेरिका उस विश्व व्यवस्था से बाहर निकल रहा है, जो कभी उसी की बनायी हुई थी. दूसरे देश अमेरिकी की इस नीति पर अफसोस जता रहे हैं, लेकिन वे अमेरिका की आत्म विध्वंसी नीति का अनुसरण करने के लिए तैयार नहीं हैं. दूसरे देशों ने अगर विदेशी उत्पादों पर टैरिफ नहीं बढ़ाया है, तो उसका बड़ा कारण है कि ट्रंप की टैरिफ नीति का धरातल पर कोई लाभ होता नहीं दिख रहा. ट्रंप लंबे समय से कहते आ रहे थे कि ऊंचे शुल्क से अमेरिकी उत्पादक अनुचित विदेशी प्रतिस्पर्धा से सुरक्षित होंगे, जिससे अमेरिका में अपने सामान खरीदने की प्रवृत्ति बढ़ेगी और स्थानीय स्तर पर रोजगार बढ़ेगा, लेकिन ट्रंप के दोबारा राष्ट्रपति बनने के बाद से फैक्टरियों में अमेरिकियों का रोजगार घटा है.

The New York Times

बोधि वृक्ष

जीवन का उद्देश्य

परम पुरुष ही सभी जीव-जंतु, निर्जीव और मानसिक तत्वों के सृजनकर्ता, संचालक और अंततः समापनकर्ता हैं. जो व्यक्ति इस सत्य को समझकर स्वयं को परम सत्ता में विलीन कर लेता है, वह आंतरिक शांति, मानसिक स्थिरता और आत्मिक आनंद का अनुभव करता है. प्रत्येक प्राणी और वस्तु में दिव्यता निहित है, और अंततः सब आंतरिक दृष्टि से एक ही हैं. सृष्टि के पीछे एक महान शक्ति है, जिसे परम पुरुष या सर्वोच्च सत्ता कहा गया है. यह वही शक्ति है, जिसने इस ब्रह्मांड की रचना की है, इसे संचालित किया है और जिसके अंतर्गत सभी चीजें उत्पन्न होती हैं. जो व्यक्ति इस सत्य को समझता है, वह अमरता की ओर अग्रसर होता है. केवल एक परम ब्रह्म अस्तित्व में है, दूसरा कोई नहीं. हमारे चारों ओर दिखाई देने वाले विभिन्न रूप और वस्तुएं केवल उस सर्वोच्च शक्ति की मानसिक सृष्टि हैं. रचना से पहले वह केवल एक अस्तित्व था. जब उसने अपनी इच्छा से विविधता की रचना की, तो प्रकृति के प्रभाव से सृजन का प्रवाह आरंभ हुआ. सृष्टि के विविध रूप हैं- निर्जीव और जीवित जगत, पौधे, पशु, मनुष्य, मन, प्राण और बुद्धि. सभी उसी परम सत्ता के प्रकट रूप हैं. सभी भौतिक और आध्यात्मिक विविधताओं की जड़ एक ही है. एक मूल सत्ता ही सभी भौतिक और सूक्ष्म जगतों की रचना और संचालन कर रही है. अंततः, सभी सृष्टियां उसी में विलीन हो जाती हैं. वही पदार्थ का कारण है, उसका कार्यकारी कारण है और हर वस्तु का साक्षी भी है. मानव को चाहिए कि वह पूरी तरह उस सर्वोच्च आत्मा में विलीन हो जाए. परम पुरुष इस ब्रह्मांड का मूल आधार हैं. संपूर्ण ब्रह्मांड उन्हीं से उत्पन्न हुआ, उन्हीं में टिकता है और अंततः उन्हीं में विलीन होगा.

प्रकृति के पांच मूलभूत तत्व उनके सृजन प्रवाह के परिणामस्वरूप प्रकट हुए. विभिन्न विकास चरणों में जीवाणु, पौधे, पशु और अंततः मानव प्रकट हुए. ब्रह्मांड के विशाल निर्माण-नक्षत्र, ग्रह, पर्वत, नदियां, वन और नगर-सभी उसी परम सत्ता की अभिव्यक्ति हैं. इसलिए किसी भी वस्तु के मूल तत्व को जानने के लिए ब्रह्म को जानना आवश्यक है, जो शिव और शक्ति का सम्मिलित रूप है. **-श्री श्री आनंदमूर्ति**

प्रबंध सूत्र

मजबूरी से मजबूती निकल आती है

आलोक पुराणिक
स्तंभकार
puranika@gmail.com

बात थोड़ी टेढ़ी है, पर सच है कि जहां दोनों पक्षों की मजबूरियां होती हैं, वहीं रिश्तों में मजबूतियां होती हैं. इंसानों के संबंध देख लीजिए या देशों के, संबंधों से पता लग जाता है कि मजबूरी से मजबूती पैदा हो जाती है. भारत चीन के संबंध डोकलाम के बाद कमजोर हो गये थे. फिर अमेरिका ने चीन और भारत के खिलाफ एक साथ कदम उठाये. अब चीन और भारत के संबंध बेहतर होते दिख रहे हैं. मजबूरी ने संबंधों की मजबूती का रास्ता खोल दिया.

किसी दफ्तर में च नाम का चमचा हो सकता है बॉस का मुंहलगा हो. उसी दफ्तर का ए उस च का समर्थक हो सकता है, बी च का विरोधी हो सकता है. अगर च अपनी बदतमीजी से ए को नाराज कर ले, तो पक्के तौर पर ए और बी के संबंध मजबूत हो जायेंगे. घर परिवार, मित्रों, कंपनियों और देशों के बीच के संबंध ऐसे ही चलते हैं. मजबूरी से मजबूती निकल आती है. मजबूरी हमेशा बुरी नहीं होती. एक वक्त था जब टेलीकॉम बाजार में दो कंपनियां मजबूत थीं- वोडाफोन और एयरटेल. फिर बाजार में रिलायंस जिओ की धमाकेदार एंट्री हुई. इस कंपनी के बाजार में आने के बाद प्रतिस्पर्धा का स्तर अलग ही हो गया. बाजार में कभी प्रतिस्पर्धी रही दो कंपनियां करीब आयीं. उनके संबंध मजबूत हुए- वोडाफोन और आइडिया. ये दोनों मिलकर एक कंपनी में तब्दील हुई. प्रतिस्पर्धी कंपनियां एक हो जायेंगी, कभी ऐसा सोचना अकल्पनीय था. पर ऐसा हुआ.

इंसान, कंपनी और देश महत्वपूर्ण नहीं होते, स्थिति महत्वपूर्ण होती है. रोज बदलते हालात में कौन कब क्या हो जाए, पता नहीं होता. दो मजबूरियां मिल जाती हैं, तो मजबूत रिश्ता बन जाता है. पाकिस्तान में वह आतंकी लादेन निकला, जिसने अमेरिका में वारदातें करवाई थीं, पर अब यही पाकिस्तान अमेरिका के खास दोस्तों में है. दोनों देशों की मजबूरी है. अमेरिका की मजबूरी है कि उसे भारत का असर कम करने के लिए एक देश चाहिए, पाकिस्तान की मजबूरी है कि उसे दुनिया भर में भीख मांगनी है, कभी आइएमएफ से, कभी विश्व बैंक से. भीख मांगने में पाकिस्तान की मदद अमेरिका करता है. दोनों की मजबूरियां हैं, इसलिए उनके संबंधों में मजबूतियां हैं.

भारत में कई राजनीतिक दल एक दूसरे के खिलाफ रहे हैं, फिर वे एक हो जाते हैं. मिलने की मजबूरी होती है. जब तक मजबूरियां रहती हैं, रिश्ते मजबूत रहते हैं. सारी कहानी इस सवाल में छिपी है कि मजबूरी किसकी और कितनी है. दोनों पक्ष समान तौर पर मजबूर हों, तो संबंध बहुत लंबे चलते हैं. गौर से देखियेगा, जो संबंध बहुत लंबा चलता है, उसके मूल में तमाम पक्षों की मजबूरियां तो नहीं हैं. प्रेम और भाईचारे पर हमारे संबंध टिके हैं, इस टाइप के बयान कतई फर्जी होते हैं.

आपके पत्र

टैरिफ नीति से असंतुलित हुआ बाजार

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की टैरिफ नीति ने पूरी दुनिया के बाजारों को असंतुलित कर दिया है. इसका प्रभाव भारत पर भी पड़ना तय है. हालांकि, टैरिफ के बावजूद चालू वित्त वर्ष की पहली तिमाही (अप्रैल -जून2025) में अमेरिका से भारत को मिलने वाला एफडीआइ करीब तीन गुना रहा है. इस अवधि में भारत को अमेरिका से 5.61 अरब डालर एफडीआइ मिला है, जो पिछले वर्ष समान अवधि में 1.5 अरब डालर था. अमेरिका मंदी के कगार पर है. इधर, भारत ने इस माहौल में भी भारत ने 7.8 प्रतिशत की विकास दर हासिल की है.

युगल किशोर राही, छपरा

स्पैम कॉल से लोगों की बढ़ी परेशानी

आजकल आम नागरिकों को रोजाना दर्जनों स्पैम और फ्रॉड कॉल्स का सामना करना पड़ रहा है। बीमा, लोन, निवेश और कई बार तो ठगी के इरादे से की जाने वाली ये कॉल्स अब मोबाइल यूजर्स की सुरक्षा और मानसिक शांति के लिए खतरा बन चुका है. डीएनडी जैसे विकल्प नाकाफी साबित हो रहे हैं. सरकार और टेलीकॉम कंपनियां इस पर ठोस कदम उठाये. एक आसान शिकायत प्रणाली और कड़े कानून वक्त की जरूरत है, ताकि आम आदमी चैन से जी सके. साथ ही मोबाइल पर आनेवाले कॉल में यह पता चले कि वह गैरजरूरी है.

आर्यन राज, मोतिहारी

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013, ■ मेल करें : patna @prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.

https://t.me/AllNewsPaperPaid

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं से ही कम होगी मृत्युदर

स्वास्थ्य सेवाएं बेहतर हों तो बीमारियों से होने वाली मौतों की संख्या कम होना तय है। खासतौर से शिशु मृत्युदर में गिरावट होती है तो उसकी सबसे बड़ी वजह शिक्षा के प्रसार व चिकित्सा सेवाएं सुगमता से उपलब्ध होना ही माना जाता है। पिछले दो दशक में शिशु मृत्युदर में उल्लेखनीय कमी को इससे जोड़कर देखा जा सकता है। हालांकि इस उपलब्धि को देखकर यही कहा जा सकता है कि शिशु मृत्युदर के पिछले आंकड़ों को देखते हुए हमारा डर कम जरूर हुआ है लेकिन अभी और प्रयासों की जरूरत है। संतोष इस बात का है कि न केवल शिशु मृत्युदर बल्कि खराब सेहत की वजह से युवाओं की होने वाली मौतों का आंकड़ा भी कम हुआ है।

यह भी एक तथ्य है कि भारत में शिशु मृत्युदर को रोकने में शिशु एवं मातृ कल्याण की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों का अहम योगदान रहा है, जिनमें टीकाकरण व पोषाहार भी शामिल है। सैंपल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (एसआरएस)-2023 ने जो आंकड़े जारी किए हैं वे देश में शिशु मृत्युदर के मामले में अहम सफलता की कहानी इसलिए भी कहते हैं क्योंकि वर्ष 1971 में जहां प्रत्येक एक हजार बच्चों पर 129 बच्चे एक साल की उम्र के पहले ही दम तोड़ देते थे वहीं यह आंकड़ा अब घटकर 25 रह गया है। लेकिन मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और उत्तरप्रदेश जैसे राज्यों में तस्वीर अभी भी धुंधली है।

ग्रामीण इलाकों में तो अब भी स्वास्थ्य सेवाओं में काफी सुधार की गुंजाइश है। खासतौर से गर्भवती महिलाओं के पोषण की दिशा में भी अभी पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है। प्रसव पूर्व महिलाओं को और प्रसव के बाद शिशु व महिलाओं दोनों का पोषण बेहतर हो, इसे सुनिश्चित करना होगा। न केवल शिशु मृत्युदर बल्कि 15 से 49 वर्ष आयुवर्ग में भी सालाना औसत मौतों की दर में आई गिरावट भी भारत के खाते में एक उपलब्धि है। लेकिन बड़ी चिंता यह भी है कि जीवनशैली आधारित बीमारियों, सड़क हादसों और आत्महत्याओं जैसी वजहों से होने वाली मृत्यु का आंकड़ा लगातार बढ़ता जा रहा है। जाहिर है कि न तो सड़क हादसों की रोकथाम के प्रयास मजबूती से हो पा रहे और न ही अवसाद की वजह से मौत को गले लगाने वालों की संख्या पर कोई अंकुश लग पा रहा है।

चिकित्सा जर्नल लैंसेट की रिपोर्ट इसी खतरे की ओर खुलासा करती है, जिसमें कहा गया है कि डायबिटीज और स्ट्रोक जैसे सात गैर संक्रामक रोगों और सड़क हादसों से होने वाली मौतें दुनिया की तरह भारत के लिए भी बेहद चिंताजनक है। जाहिर है कि स्वास्थ्य सेवाओं में असमानता दूर करना ज्यादा जरूरी है। राष्ट्रीय औसत से ज्यादा शिशु मृत्युदर वाले प्रदेशों की तरफ ध्यान देने के साथ-साथ सड़क हादसों की रोकथाम के प्रयासों में भी हमें गति लानी होगी। लक्ष्य तय कर उसकी पालना की बात भूल जाने को बिल्कुल उचित नहीं कहा जा सकता।

टैक्सेशन: नेशनल एंटी प्रॉफिटियरिंग अथॉरिटी जैसा नया स्थायी प्राधिकरण बनाने की आवश्यकता

जीएसटी छूट का लाभ मिले, उठाने होंगे प्रभावी कदम

राहुल लाल
स्वतंत्र पत्रकार
एवं स्तंभकार
@patrika.com

डीजीपीए को यह अधिकार भी दिया जाए कि जब तक एनएए के तर्ज पर नए प्राधिकरण का निर्माण नहीं हो जाता है, वह भी कंपनियों पर जुर्माना लगा सके और सार्वजनिक नोटिस जारी कर सके। इसके अतिरिक्त डीजीपीए शिकायतों पर समयबद्ध कार्रवाई कर सके।

हाल में जीएसटी काउंसिल ने जीएसटी दर में भारी कटौती करने की घोषणा की। अब 12% तथा 28% स्लैब को हटाकर अधिकांश वस्तुओं व सेवाओं को 5% तथा 18% स्लैब टैक्स में रखा गया है। जीएसटी कटौती 22 सितंबर से लागू हो जाएगी। जीएसटी दरों में कटौती का मुख्य उद्देश्य है कि इसका प्रत्यक्ष लाभ अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुंचे, जिससे उपभोक्ताओं की मांग में वृद्धि हो सके तथा अर्थव्यवस्था को और भी गतिशीलता प्रदान की जा सके। लेकिन रोजमर्रा के जीवन में उपभोक्ता अक्सर देखते हैं कि कॉर्पोरेट्स इन छूटों का लाभ उपभोक्ता को पहुंचाने के स्थान पर अपने मुनाफे को बढ़ाते हैं। अतीत में भी कई बार जीएसटी कटौती का मूल लाभ कंपनियों ने अपने तक सीमित रखा। ऐसे में सरकार के लिए आवश्यक है कि जीएसटी छूट का लाभ अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचा या नहीं, इसके लिए एक सशक्त संस्थागत ढांचे का निर्माण करे।

सरकार ने एक जुलाई 2017 को जब ऐतिहासिक कर के रूप में जीएसटी की शुरुआत की थी, तब जीएसटी को लागू करने के साथ-साथ उपभोक्ताओं को कर कटौती लाभ सुनिश्चित करने के लिए मुनाफाखोरी रोधी प्रावधानों को शामिल किया था, परंतु एक अप्रेल 2025 से इन प्रावधानों को लगभग महत्त्वहीन बना दिया गया। ऐसे में जब जीएसटी में सबसे बड़ी कटौती हुई है, तो उस समय मुनाफाखोरी रोधी प्रावधान पहले से अधिक प्रासंगिक हो गए। मुनाफाखोरी रोधी प्रावधानों को जीएसटी एक्ट 2017 के सेक्शन 171 अंतर्गत शामिल किया गया था। इसके अंतर्गत व्यवसायों को कटौती का लाभ उपभोक्ताओं को पहुंचाना आवश्यक था। इसकी निगरानी के लिए राष्ट्रीय मुनाफाखोरी रोधी प्राधिकरण (नेशनल एंटी प्रॉफिटियरिंग अथॉरिटी-एनएए) स्थापित किया गया था। एनएए 2017 से 2022 तक सक्रिय रहा।

इस दौरान एनएए ने देश के कई बड़े कॉर्पोरेट्स और ब्रांडों पर भारी भरकम जुर्माना भी लगाया। वर्ष 2022 में एनएए को समाप्त कर दिया गया। एक अक्टूबर 2024 से मुनाफाखोरी के मामलों को जीएसटी अपील ट्रिब्यूनल को सौंप दिया गया परंतु एक अप्रेल 2025 से इस व्यवस्था को भी खत्म कर दिया गया। इन व्यवस्थाओं को खत्म करने के पीछे सरकार का तर्क था कि जीएसटी प्रणाली स्थिर हो चुकी है और ऐसे मामले कम हो गए हैं। लेकिन यह धारणा कि मुनाफाखोरी के मामले खत्म हो गए हैं, यह उपयुक्त नहीं होगा। यही कारण है कि केरल के वित्त मंत्री के. एन. बालगोपाल और उत्तर प्रदेश के वित्त मंत्री सुरेश कुमार खन्ना हाल में हुई जीएसटी काउंसिल की बैठक में मुनाफाखोरी पर चिंता जता चुके हैं। जीएसटी काउंसिल की अध्यक्ष और केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण के साथ इस मामले में भी चर्चा हो चुकी है। इस संदर्भ में कई प्रदेशों के वित्त मंत्रियों का मानना है कि टैक्स कटौती होते ही आमतौर पर कंपनियां अपने उत्पादों के दाम बढ़ा देती हैं, जिससे उपभोक्ता को लाभ नहीं मिलता है।

अब जबकि एनएए समाप्त हो चुका है, उपभोक्ताओं के पास डीजीपीए (डायरेक्टर जनरल ऑफ एंटी प्रोफिटयरिंग-मुनाफाखोरी रोधी महानिदेशालय) जैसे सीमित विकल्प बचे हैं। यह वित्त मंत्रालय के अधीन केंद्रीय अप्रत्यक्ष कर और सीमा शुल्क(सीबीआइसी) के अधीन काम करता है। पहले डीजीपीए केवल जांच एजेंसी के तौर पर कार्य करता था, जबकि निर्णय देने का अधिकार एनएए के पास था। वर्तमान में डीजीपीए, जीएसटी कानून 171 के तहत शिकायतों की जांच कर सकता है कि उपभोक्ता तक जीएसटी छूट का लाभ पहुंचा अथवा नहीं लेकिन यह खुद से किसी कंपनी पर जुर्माना या आदेश जारी नहीं कर सकता। अभी तक डीजीपीए को स्वतः संज्ञान लेने की शक्ति भी नहीं है। इस प्रकार डीजीपीए उपभोक्ता को न्याय देने में अभी सक्षम नहीं है। वित्त मंत्रालय के लिए आवश्यक है कि वह जीएसटी के भारी कटौती का लाभ उपभोक्ताओं तक पहुंचाने के लिए स्थायी और स्वतंत्र निगरानी निकाय स्थापित करे। एनएए की तर्ज पर नया स्थायी प्राधिकरण बनना चाहिए, जो स्वायत्त व पारदर्शी हो। डीजीपीए की जनशक्ति और तकनीकी संशोधन बढ़ाए जाएं, ताकि वह तेजी से जांच कर सके। उसे कानूनी अधिकार दिए जाएं, जिससे वह स्वतः संज्ञान ले सके। इसके अतिरिक्त डीजीपीए को यह अधिकार भी दिया जाए कि जब तक एनएए के तर्ज पर नए प्राधिकरण का निर्माण नहीं हो जाता है, वह भी कंपनियों पर जुर्माना लगा सके और सार्वजनिक नोटिस जारी कर सके। इसके अतिरिक्त डीजीपीए शिकायतों पर समयबद्ध कार्रवाई कर सके।

इस वर्ष एक अप्रेल से जिस तरह से जीएसटी के अंतर्गत मुनाफाखोरी रोधी प्रावधानों को समाप्त किया गया, इसको लेकर अधिकांश विशेषज्ञ मानते हैं कि यह निर्णय समय से पहले लिया गया। इस समय भारी कटौती के बावजूद कंपनियों पर एनएए की अनुपस्थिति में दर कटौती का लाभ उपभोक्ताओं तक पहुंचाने का कठोर दबाव नहीं होगा। कॉर्पोरेट्स पर पहले तो एनएए का डर भी था, परंतु इस समय कोई दबाव या डर नहीं है। सरकार को जीएसटीएटी को भी मजबूत करना चाहिए। यह व्यवसायों और करदाताओं को जीएसटी अधिकारियों के फैसलों के खिलाफ अपील करने का मंच प्रदान करता है।

फैक्ट फ्रंट

बर्ड ऑफ पैराडाइज

बर्ड ऑफ पैराडाइज एक विदेशी पौधा है, जो अपने रंग-बिरंगे फूलों और अनोखी बनावट के कारण लोकप्रिय है। इस पौधे के फूलों का आकार बिल्कुल उड़ते हुए पक्षी जैसा लगता है। नारंगी, नीले और बैंगनी रंगों का मेल इन फूलों को और भी आकर्षक बना देता है। इसी कारण इसे स्वर्ग का फूल या स्वर्ग का पक्षी भी कहा जाता है। इसके पत्ते बड़े और चमकदार होते हैं। यह पौधा 4-6 फीट तक ऊंचा हो सकता है। बर्ड ऑफ पैराडाइज की देखभाल सरल है। इसे अच्छी तरह से जल निकास वाली मिट्टी और पर्याप्त धूप चाहिए। यह गर्म जलवायु में सबसे अच्छा विकसित होता है, लेकिन ठंडे क्षेत्रों में इसे घर के अंदर भी उगाया जा सकता है। नियमित पानी देना और समय-समय पर खाद देना इसके विकास को बढ़ावा देता है। बर्ड ऑफ पैराडाइज सूखे को अच्छी तरह सहन कर सकता है, जिसके कारण यह उन क्षेत्रों में लोकप्रिय है, जहां पानी की कमी होती है।

नजरिया

आधुनिकता की चमक में खोता बचपन

डॉ. अजिता शर्मा
स्वतंत्र लेखिका
@patrika.com

आज के दौर में, जब हम चारों ओर आधुनिकता और तकनीकी प्रगति की चकाचौंध देखते हैं, तो अक्सर बचपन की वह मासूमियत और सादगी कहीं गुम होती नजर आती है। एक समय था जब बचपन का अर्थ था खुले मैदानों में खेलना, मिट्टी में सने हाथ-पैर, दादा-दादी की कहानियां और दोस्तों के साथ बिताए गए बेफिक्र पल लेकिन आज यह सब तेजी से बदल रहा है। आधुनिकता ने हमें कई सुविधाएं दी हैं, पर इसकी कीमत हमारा बचपन चुका रहा है। सबसे बड़ा बदलाव बच्चों के खेलकूद में आया है जहां पहले बच्चे गलियों और पार्कों में क्रिकेट, फुटबॉल या लुका-छिपी जैसे खेल खेलते थे, वहीं अब उनका ज्यादातर समय मोबाइल फोन, टैबलेट और कंप्यूटर पर बीतता है। वीडियो गेम और सोशल मीडिया ने बाहरी दुनिया से उनका सम्पर्क कम कर दिया है। शारीरिक गतिविधियों की कमी के कारण बचपन से ही मोटापा, आंखों की कमजोरी और कई अन्य स्वास्थ्य समस्याएं उन्हें घेरने लगी हैं। खेल के मैदान खाली पड़े हैं और स्क्रीन के सामने बच्चों की भीड़ लगी है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी आधुनिकता का प्रभाव स्पष्ट है। प्रतिस्पर्धा के इस युग में बच्चों पर बचपन से ही पढ़ाई का अत्यधिक दबाव होता है। उन्हें भारी बस्तों, कोचिंग क्लासों और अनगिनत परीक्षाओं के बोझ तले दबा दिया जाता है। रचनात्मकता और मौलिक सोच की जगह रटने और अंकों की होड़ ने ले ली है। वे केवल पाठ्यक्रम पूरा करने की दौड़ में शामिल हैं, न कि ज्ञान प्राप्त करने की। इस दबाव के कारण उनका मानसिक स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है, जिससे तनाव और चिंता जैसी समस्याएं बढ़ती हैं। पारिवारिक और सामाजिक संबंधों में भी गिरावट आई है। एकल परिवारों का चलन बढ़ने, माता-पिता दोनों के कामकाजी होने और डिजिटल माध्यमों पर बढ़ती निर्भरता के कारण बच्चों को परिवार का पूरा समय और ध्यान नहीं मिल पाता। दादा-दादी, नाना-नानी की कहानियां शायद ही सुनने को मिलती हैं।

यह समय है जब हम सब मिलकर सोचें कि आधुनिकता की इस चकाचौंध में हम अपने बच्चों के बचपन को कैसे बचा सकते हैं। उन्हें डिजिटल दुनिया से बाहर निकालकर प्रकृति से जोड़ना, खेलकूद के लिए प्रोत्साहित करना और परिवार व समाज के साथ उनके संबंधों को मजबूत करना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। तभी हम एक ऐसे बचपन को लौटा पाएंगे, जो सिर्फ यादों में नहीं, बल्कि हकीकत में जिया जा सके।

तितली के पंख फैलाने जैसा: चीन के शेनझेन में फैशन ब्रांड का मुख्यालय

चीन के शेनझेन में फैशन ब्रांड का यह मुख्यालय वास्तुकला और प्रकृति के मेल का अनोखा उदाहरण है। ऊपर से देखने पर यह इमारत किसी तितली के पंख फैलाने जैसी लगती है, तो कहीं विशाल सीप की तरह खुलती हुई प्रतीत होती है। 5,000 वर्गमीटर के इस भव्य पैविलियन की सबसे खास बात इसका जैविक संरचनाओं से प्रेरित डिजाइन है, जो न केवल देखने में अद्भुत है बल्कि टिकाऊ निर्माण की नई राह भी दिखाता है। इसकी छत पुनर्नवीनीकृत सामग्रियों से बनाई गई है, जो पर्यावरण संरक्षण और अपशिष्ट प्रबंधन का सशक्त संदेश देती है। निर्माण में बांस का इस्तेमाल नवीकरणीय कंक्रीट फॉर्मवर्क के रूप में किया गया है। यह प्राकृतिक संसाधनों की अहमियत को दर्शाता है।

नेतृत्व

नदी का डेल्टा सिखाता समन्वय व समृद्धि

नेतृत्व भी तब अनुकूलनशील बनता है, जब सहयोग पर आधारित हो

प्रो. हिमांशु राय
निदेशक
आइआइएम इंदौर
@patrika.com

जहां नदी समुद्र से मिलती है, वहां डेल्टा का निर्माण होता है। यह भूमि और जल का ऐसा उर्वर संगम है, जो जीवन से परिपूर्ण होता है। डेल्टा यानी नदीमुख, एक धारा नहीं, बल्कि अनेक धाराओं का संगम है, जो विविध पारिस्थितिक तंत्रों को पोषित कर प्रचुरता का आधार बनता है। भारतीय दार्शनिक चिंतन में, डेल्टा सामंजस्य, पोषण और विविधता में एकता का प्रतीक है इसी से हम नेतृत्व के पाठ सीख सकते हैं, जो हमें समृद्ध संगठन और सजीव समुदायों के निर्माण की सीख देते हैं।

एकाकीपन नहीं, समन्वय

नदी का डेल्टा इसलिए अस्तित्व में आता है क्योंकि नदी एक ही मार्ग में सीमित नहीं रहती, अपितु कई शाखाओं में बंटकर समुद्र में विलीन होती है। नेतृत्व केवल कठोर नियंत्रण या अकेली प्रतिभा का नाम नहीं। सच्चा लीडर ऊर्जाओं व विचारधाराओं को एक धारा में समेटना जानता है, ताकि वे साझा उद्देश्य की ओर प्रवाहित हों।

समृद्धि का पोषण: नदी का डेल्टा पृथ्वी के सबसे उर्वर क्षेत्रों में से एक है, जो असंख्य जीवन-रूपों को संजीवनी देता है। उसी प्रकार लीडर को ऐसा वातावरण बनाना चाहिए जहां लोग फले-फूलें और अपनी क्षमता को कई गुना बढ़ा सकें।

सहजता से करें सहयोग: डेल्टा में कोई एक धारा प्रभुत्व नहीं रखती। वहां स्वाभाविक सहयोग का प्रवाह होता है। छोटी-बड़ी नालियां आपस में मिलती-बंटती हैं, मार्ग बदलती हैं और जीवन को पोषित करती हैं। नेतृत्व भी तब अनुकूलनशील बनता है, जब सहयोग पर आधारित हो, न कि सिर्फ पदानुक्रम या दबाव पर।

महान संपूर्ण में सुंदर समर्पण : डेल्टा समुद्र में समा जाता है, अपनी अलग पहचान को त्यागकर एक व्यापक सत्ता का हिस्सा बन जाता है। सच्चा नेतृत्व इस तथ्य से अवगत रहता है कि व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा को सामूहिक उद्देश्य में विलीन होना चाहिए। महान लीडर सत्ता से आसक्त नहीं रहते, बल्कि उसे व्यापक हित के लिए प्रवाहित करते हैं। नेतृत्व का सर्वोच्च रूप वही है, जो अहंकार से परे होकर ऐसी दृष्टि में बहता है, जो व्यक्ति के जीवनकाल से भी आगे टिकती है। सच्चा नेतृत्व ऐसा उर्वर अवसर है, जहां असंख्य जीवन फलते-फूलते हैं और सामूहिक प्रवाह सफलता की ओर अग्रसर होता है।

साहित्य और सिनेमा उपन्यास पथेर दाबी के शताब्दी वर्ष पर बनेगी बांग्ला में फिल्म

हिंदी सिनेमा को शरतचंद्र तो चाहिए 'पथ के दावेदार' नहीं

विनोद अनुपम
राष्ट्रीय फिल्म
पुरस्कार प्राप्त
कला समीक्षक
@patrika.com

हिंदी में सबसे अधिक फिल्में शरतचंद्र के साहित्य पर ही बनी हैं, लेकिन अधिकांश में सिर्फ बाह्य व्यवहार को ही अभिव्यक्ति मिली है, चरित्रों के अंदर प्रवेश करने की या तो फिल्मकारों ने कोशिश ही नहीं की या फिर सत्यजीत रे की तरह बेहतर साहित्यिक कृति के फिल्मांकन का धैर्य ही उनमें नहीं था या फिर ईमानदारी! आश्चर्य नहीं कि पूर्णता की तलाश में शरतचंद्र की एक ही कृति को कई-कई बार फिल्मांकित करने की कोशिश होती रही, यह कोशिश अब भी जारी है। 'परिणीता' पर पहली फिल्म अशोक कुमार ने 1953 में विमल राय के निर्देशन में बनाई थी। बीस साल बाद पुनः 'परिणीता' को सेल्युलाइड पर उतारने की योजना बनी।

'संकोच' नाम से बनी इस फिल्म का निर्देशन अनिल गांगुली ने किया था। तीसरी 'परिणीता' प्रदीप सरकार के निर्देशन में आई, वह भी ठीक बीस साल बाद। शरत् साहित्य पर केंद्रित फिल्मों पर विचार करते हुए बार-बार यह सवाल कचोटता है कि फिल्मांकन के लिए आखिरकार क्यों शरत् की नजरों में भी जो अतिसामान्य कृति थी, उसी का चुनाव किया जाता रहा।

विभिन्न भाषाओं में 'देवदास' पर ही ग्यारह बार फिल्म बनती है, 'परिणीता' पर तीन बार, 'छोटा भाई' पर दो बार लेकिन आश्चर्य कि 'पथ के दावेदार ' या 'शेष प्रश्न' जैसी कृति, जिसमें शरतचंद्र की वैचारिकता मुखर दिखती है, की ओर कोई फिल्मकार निगाह डालने की जहमत नहीं उठाता। शरतचंद्र ने 'देवदास' को कभी आदर्श नहीं माना था। उनका कहना था, 'देवदास' में धैर्य और परिश्रम का अभाव है। वह प्रारब्ध प्रेरित व्यक्ति है। शरतचंद्र की अपने दौर में विवादास्पद रही कृति 'पथेर दाबी', जो हिंदी में 'पथ के दावेदार' के नाम से बहुपठित और बहुप्रशंसित रही, पर बांग्ला में फिल्म के निर्माण की घोषणा संतोष देती है। इस उपन्यास के शताब्दी वर्ष पर फिल्मकार सृजीत मुखर्जी ने अपनी अगली फिल्म 'एम्परर बनाम शरत चन्द्र' की घोषणा की, जो मई 2026 में रिलीज होगी।

शरतचंद्र का यह उपन्यास अगस्त 1926 में प्रकाशित हुआ था। स्वाधीनता संग्राम के उस दौर में इस उपन्यास की वैचारिकता से लोग इस तरह प्रभावित हुए कि प्रकाशन के एक सप्ताह के अंदर सभी प्रतियां बिक गईं, लेकिन इसी लोकप्रियता ने ब्रिटिश सरकार के कान भी खड़े कर दिए और इसे देशद्रोही मानकर प्रतिबंधित कर दिया गया। हालांकि शरतचंद्र की मृत्यु के एक वर्ष बाद 1939 में यह प्रतिबंध हटा लिया गया। उल्लेखनीय है कि 1977 में भी निर्देशक पीयूष बोस ने 'पथेर दाबी' पर आधारित फिल्म 'सब्यसाची' बनाई थी। सब्यसाची के चरित्र में उस दौर के कई क्रांतिकारी नेताओं, खासकर सुभाषचंद्र बोस की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है।

अब जब हिंदी सिनेमा नई कहानियों, नए विमर्श के लिए तैयार दिख रहा,'पथेर दाबी' जैसी कहानियों के प्रति हिंदी सिनेमा की निरपेक्षता चिंतित करती है। वास्तव में हिंदी सिनेमा को कभी विमर्श में रुचि नहीं दिखती, वह निर्णय पर पहुंच दर्शकों को सुकून देने में यकीन रखता है। जाहिर है उसे शरत तो प्रिय हैं, लेकिन बस 'देवदास' के लिए।

विस्तार से पढ़ने के लिए
क्यूआर कोड स्कैन करें

भूपेन हजारिका जन्म शताब्दी वर्ष जो आवाज किसी दायरे में न सिमटकर देश की धड़कन बन गई

भूपेन दा : लोकधुनों से 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' तक

नरेंद्र मोदी
प्रधानमंत्री
@patrika.com

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है। विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे। ये बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है। भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं, जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है।

भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वो आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है। भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया। समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले। संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। अमरीका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया।

भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं। साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया और महसूस कराया। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनियाभर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वे असम की आवाज बने। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवॉर्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे। वे कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमटकर नहीं रहता। असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है। देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल इन दो राज्यों को जोड़ने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है।

भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का अहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे।

आपकी बात

सीसीटीवी कैमरे लगाना जरूरी

सार्वजनिक स्थलों पर असामयिक घटनाओं पर काबू पाने के लिए सीसीटीवी कैमरों का लगाना कारगर सिद्ध हुआ है। आमजन के लिए इस व्यवस्था को और अधिक मजबूत बनाना होगा, क्योंकि सीसीटीवी कैमरे एक तरह से चश्मदीद गवाह के तौर पर होते हैं। ये सार्वजनिक स्थलों के साथ-साथ बुजुर्गों और नाबालिगों की सुरक्षा में सहायक सिद्ध होते हैं।

- चंपालाल दुबे, भोपाल

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की अन्य प्रतिक्रियाएं

इसे स्कैन करें

पत्रिकायन का सवाल था, 'सुरक्षा के लिए सार्वजनिक स्थलों पर सीसीटीवी कैमरे लगाए जाने को आप कितना प्रभावी मानते हैं?'ऑनलाइन भी देखें।
https://shorturl.at/cMqwt

आज का सवाल

जन्म के साथ आधार कार्ड बनने से आपकी नजर में क्या-क्या फायदे होंगे?

ईमेल करें: edit@epatrika.com

CCI NG 3.7 Product: NBTMumbaiBS PubDate: 08-09-2025 Zone: Mumbai Edition: 1 Page: NBTMP10 User: arvind.yadav1 Time: 09-07-2025 21:34 Color:

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । मुंबई । सोमवार, 8 सितंबर 2025

मिट रहीं दूरियां

सोशल मीडिया के जरिये ही सही, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के बीच हुआ संदेशों का आदान-प्रदान सकारात्मक संकेत है। दोनों देशों के रिश्तों में आई तल्खी को संवाद के जरिये ही दूर किया जा सकता है।

स्वागत योग्य कदम । डॉनल्ड ट्रंप सार्वजनिक मेसेज में भी नाराजगी दिखाने से नहीं चूकते, लेकिन इस बार उन्होंने भारत-US रिश्तों को विशेष बताते हुए इसके बारे में चिंता नहीं करने की जरूरत बताई है। इसे द्विपक्षीय संबंधों को सुधारने की पहल के रूप में देखा जा रहा, जिसे ट्रंप एडमिनिस्ट्रेशन की नीतियों की वजह से काफी धक्का लगा है। ट्रंप की इंडिया पॉलिसी की आलोचना बाहर नहीं, अमेरिका में भी हो रही है। अब अगर अमेरिकी राष्ट्रपति की तरफ से उसमें कुछ सुधार की कोशिश दिख रही है, तो उसका स्वागत किया जाना चाहिए।

अचानक नरम हुआ रुख

संतुलित प्रतिक्रिया । हालांकि अभी केवल एक मेसेज ही आया है। ट्रंप का मिजाज जिस तेजी से बदलता है, उसे देखते हुए यह मानना जल्दबाजी होगी कि अमेरिका ने एकदम से यूटर्न ले लिया है। इसी मेसेज में ट्रंप ने फिर रूस से तेल खरीद की बात दोहराई और 50% टैरिफ अब भी कायम है। यह भी महत्वपूर्ण है कि टीम ट्रंप के कई लोग भारत के खिलाफ लगातार अनर्गल बयानबाजी कर रहे हैं। ऐसे में पीएम नरेंद्र मोदी की तरफ से दी गई प्रतिक्रिया संतुलित रही।

बातचीत बढ़ाने का रास्ता । फिर भी, इस संक्षिप्त आदान-प्रदान ने तनाव को घटाने में कुछ मदद की है। अब इसका इस्तेमाल बातचीत को आगे बढ़ाने में करना चाहिए। यह अच्छी बात है कि नई दिल्ली-वॉशिंगटन के बीच ट्रेड टॉक अब भी जारी है, और मोदी-ट्रंप के आपसी रिश्ते भी बने हुए हैं। दोनों देशों के लिए यह डील बेहद जरूरी है। हां, कुछ व्यापारिक चिंताएं हैं, पर वार्ता की मेज पर उनका भी रास्ता निकल सकता है।

कोई पाला नहीं । नई सदी में भारत-अमेरिका जिस तरह करीब आए हैं, यह मुमकिन नहीं कि कोई तीसरा देश इनकी जगह ले सके। द्विपक्षीय संबंध वैसे भी किसी तीसरे के दखल से परे होने चाहिए। इसी नीति पर चलते हुए भारत ने अमेरिका, रूस और चीन के साथ संबंधों को संतुलित किया है। पश्चिम भले मान रहा हो कि मोदी की चीन यात्रा नई दिल्ली का पेइचिंग के पाले में जाना है, पर वास्तव में भारत ने अपना पाला खुद बनाया हुआ है, जिसमें सभी के लिए जगह है।

चक्र-व्यू

लालच की क़ीमत

राहुल पाण्डेय

क्या आने वाली कुछ सदियों में शेर हमारी जेब में होंगे और कुत्ते की कद-काठी घोड़े जैसी हो जाएगी? वैज्ञानिकों की मानें तो ऐसा होना नामुमकिन नहीं है। दरअसल, फ्रांस के मॉन्टपेलिए यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने 8,000 साल पुरानी 2,25,780 हड्डियों का पोस्टमार्टम करके यह पाया कि पिछले हजार सालों में जंगली और पालतू जानवरों की कद काठी अलग-अलग दिशा में बढ़ी। जंगली जानवर जैसे हिरण, लोमड़ी, खरगोश आदि छोटे होते गए। पालतू जानवर जैसे गाय, बकरी, भेड़, सूअर, मुर्गी वगैरह तगड़े होते गए। शोध में सामने आया कि मध्यकाल और आधुनिक युग में पालतू और जंगली जानवरों के आकार में अलग-अलग बदलाव हुए। घरेलू जानवरों को बड़ा करने के लिए दुनिया भर में जमकर जंगल काटे गए। जंगल सिमटे तो शिकार भी घटे। मध्यकाल के दौरान शिकार बढ़ने से भी जंगली जानवरों का आकार छोटा होता चला गया। शिकार घटे तो जंगली जानवरों का आकार भी घटा। दूसरी तरफ हमारे पालतू जानवर थे। इंसान ने उन्हें खास मकसद से पाला। गाय को दूध के लिए, मुर्गी को अंडे के लिए, भेड़ को ऊन के लिए, और बकरी को दावत के लिए। और तो और, इंसान तय करने लगा कि गाय की ब्रीड कौन सी बनानी है।

इंसान और प्रकृति का रिश्ता बराबरी का कभी नहीं रहा। इंसान ने अपना और अपने पालतुओं का तो विकास किया, मगर बाकी सबको एडजस्ट करना पड़ा। मसलन, जंगल काटे, तो जंगली जानवर सिकुड़े। खेत बढ़ाए, तो पालतू जानवर फूले-फले। शोध कहता है कि सभी प्रजातियों पर पर्यावरण का गहरा प्रभाव लंबे समय तक रहता है, मगर साथ ही पिछले हजार सालों में इंसानी गतिविधियों का असर भी बढ़ा है। सोचने वाली बात है कि अगर यही ट्रेंड चलता रहा तो आने वाले 1000 सालों में नजारा क्या होगा? गली का कुत्ता इतना बड़ा हो जाएगा कि घोड़े जैसी कद-काठी हो जाएगी? मुर्गी के दिए एक अंडे से बने ऑमलेट से कुछ लोगों का पेट भर जाएगा? बकरी और गाय की कद-काठी भी काफी बढ़ जाएगी। असल में यह रिसर्च हमें आईना दिखाती है। जानवर तो अपनी मर्जी से छोटे-बड़े नहीं हुए, इंसान ने उनका कद तय किया। जंगली जानवरों का सिकुड़ना हमारी लालच, तो पालतू जानवरों का मोटा होना हमारी जरूरत और लोभ की वजह से है। लगता नहीं कि यह लालच खत्म होने वाली है।

एकदा

दरिद्र नारायण की सेवा

सन 1901 के किसी दिन, स्वामी विवेकानंद ने बेलूर मठ में काम करने वाले संथाल श्रमिकों को अपने हाथों से स्वादिष्ट भोजन कराया और कहा, 'तुम लोग नारायण हो। आज मैंने साक्षात नारायण की सेवा की है।' फिर अपने शिष्यों की ओर मुड़कर कहा, 'देखो ये कितना सीधा-सादा जीवन जीते हैं। क्या तुम इनके दुखों को कम करने में थोड़ी भी सहायता कर सकते हो? यदि नहीं, तो हमारे गेरुआ पहनने का क्या लाभ, जब हमारे देशवासियों के पास पेट भरने को अनाज और तन ढकने को कपड़ा नहीं है?' स्वामी जी ने कहा कि हमें अपनी विद्वत्ता, शास्त्रों का अध्ययन और अपने मुक्ति के साधनों को त्यागकर गांव-गांव जाकर इनकी सेवा में जीवन लगाना चाहिए। अपने चरित्र, आध्यात्मिकता और संयम से संपन्न लोगों को समझाना कि गरीबों की सेवा उनका भी कर्तव्य है। देश तभी जागेगा जब यह वर्ग उन्नत होगा। उन्होंने कहा, 'मैं सूर्य के प्रकाश की तरह स्पष्ट देख पा रहा हूं कि जो शक्ति मुझमें है, वही उनमें भी है। केवल अभिव्यक्ति का अंतर है।' उन्होंने यह भी कहा कि किसी देश का विकास तब तक संभव नहीं हो सकता, जब तक उसके प्रत्येक हिस्से में समान रूप से राष्ट्र की चेतना और सामर्थ्य का संचार न हो। शिष्यों ने इस बात को स्वीकार किया और आज भी मठ में दरिद्र नारायण को सम्मान देने की परंपरा कायम है।

Subrata Dhar

संकलन : **सुभाष चन्द्र शर्मा**

भारत रत्न भूपेन हजारिका के जन्म शताब्दी वर्ष की शुरुआत हो रही है आज से

कालजयी नदी सी बहती है वह आवाज़

नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है। और विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है। वह भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाज़ों में से एक थे। ये बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है।

कालजयी नदी-सी आवाज । भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं जो धुन से भी आगे जाती थीं। वह केवल एक गायक नहीं थे, लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज़ निकली जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वह आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है।

जड़ों से गहरा जुड़ाव । भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वह असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले।

दुनिया को समझने की चाह । बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया। लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अग्रवाला और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला, और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया।

काशी में संगीत साधना । सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तक ले गई। वह बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं, और मुझे बहुत गर्व होता है।

अमेरिका प्रवास । काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वह पॉल रोबसन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे। रोबसन का गीत 'Ol' Man River' उनके कालजयी गीत 'बिश्टीरनो परोरे' की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया।

मां भारती के सच्चे उपासक । भूपेन हजारिका, संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वह भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए।

भारत के सच्चे रत्न
- उनके संगीत में होती थीं धुन से आगे जाने वाली भावनाएं
- अमेरिका में बसने का विकल्प छोड़कर भारत लौटे
- उनकी जीवन यात्रा पर 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' का प्रभाव

रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्युमेंट्री तक, हर माध्यम में वह पारंगत थे। जहां भी गए, नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया।

शक्ति और आशा का स्रोत । भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज़ दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं, साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे और आज भी पा रहे हैं।

दिल की गहराइयों को छूती पीड़ा । भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। 'दिल हूम हूम करे' में जो पीड़ा बहती है, वह सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वह पूछते हैं, 'गंगा बहती है क्यूं', तो ऐसा लगता है मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों। उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वे असम की आवाज बने।

जनप्रतिनिधि भी बने । भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे।

सपनों को पंख लगाते गीत । भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवॉर्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने, इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे। वह कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है, और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है।

अंतिम विदाई का मर्मस्पर्शी पल । मुझे 2011 का वह समय याद है जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। अब ये देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है। भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल - इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है।

करणा की शक्ति का एहसास । भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें माननीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है।

जीवन का संदेश । भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

सत् चित् आनंद ही है सत्यम शिवम सुंदरम?

AI Image

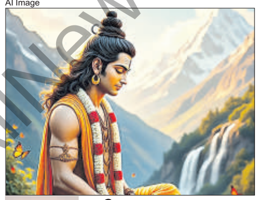

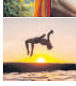

जीवन आनंद

शैलेंद्र पांडेय

ISRO के एक ऑफिसर ने पिछले दिनों स्पेस में भारतीय उपलब्धियों का बखान करते हुए दो बेहद महत्वपूर्ण आध्यात्मिक और दार्शनिक अवधारणाओं से उनको जोड़ा - सत् चित् आनंद और सत्यम शिवम सुंदरम। लेकिन, क्या दोनों विचार मिलाए जा सकते हैं?

अद्वैत का अर्थ है कोई दो नहीं और वेदांत का मतलब हुआ वेदों का अंत। यहीं से आदि शंकराचार्य ने दिया वह दर्शन जिसके मुताबिक, सभी अस्तित्व का मूल स्रोत परम सत्ता या ब्रह्म है। इसी ब्रह्म के बारे में बताता है - सत् चित् आनंद। आदि शंकराचार्य ने अद्वैत वेदांत के मूल सिद्धांतों से परिचित कराने के लिए 'तत्वबोध' नाम का ग्रंथ लिखा है। इसमें उन्होंने उस सर्वशक्तिमान की व्याख्या की है।

सत्किम्? कालत्रयेअपि तिष्ठतीतिसत् - सत् किसे कहते हैं? जो तीनों कालों में रहता है।

चित्किम्? ज्ञानस्वरूपः - चित् क्या है? जो ज्ञानस्वरूप है। आनंद कः? सुखस्वरूपः - आनंद क्या है? जो सुखस्वरूप है।

समय से परे । इंसान को हमेशा से तलाश रही है अमरता की। इंसानी चाहत जुड़ी है उम्र से कि मौत टल जाए। लेकिन, सत् वह है, जो इस जीवन-मौत से परे है। वह समय से भी परे है और मृत्यु से भी। उसका अस्तित्व हमेशा मौजूद रहा है - जब कुछ नहीं था और जब कुछ नहीं होगा। यह नश्वर संसार लगातार बदलता रहता है, लेकिन उसके पीछे जो स्थायी है, वही वास्तविक अस्तित्व है। जब साधक भीतर उतरता है, तो उसे यह अनुभव होने लगता है कि वह केवल शरीर नहीं है, एक अनंत सत्ता का अंश है।

प्रकाश का प्रकाश । फिर आते हैं चेतना पर, जो केवल जीवित रहने का भाव नहीं। यह चेतना दिमाग या शरीर तक बंधी न होकर सार्वभौमिक है। यह आत्मा की जागरूकता है। चित वह शक्ति है जो हमें यह समझने में मदद करती है कि हम कौन हैं, हमारा उद्देश्य क्या है, और जीवन का असली अर्थ क्या है।

सुख नहीं, सुखस्वरूप । फिर अगला प्रश्न आता है आनंद को लेकर, क्या है यह? आदि शंकराचार्य ने इसे सुख नहीं, सुखस्वरूप कहा। सुख की व्याख्या हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग हो सकती है। कोई नई कार खरीदकर सुखी महूसस कर सकता है, किसी को नई बाइक से ही संतोष है। लेकिन, यह सुख भी स्थायी नहीं। जो आज बाइक में खुश है, उसे कल कार की चाहत होगी। आदि शंकराचार्य ने इसीलिए कहा - सुखस्वरूप। यह किसी बाहरी वस्तु या परिस्थिति से मिलने वाला क्षणिक आनंद नहीं। यह भीतर की तृप्ति है, तब मिलती है जब मन इच्छाओं से मुक्त होकर अपने मूल स्वरूप को पहचान लेता है। कई बार मान लिया जाता है सत् चित् आनंद है जो, वही है सत्यम शिवम सुंदरम। हालांकि दोनों दर्शन में महीन-सा अंतर है। सत्यम शिवम सुंदरम कहता है कि जो सत्य, शाश्वत और वास्तविक है - जो शिव, शुभ, कल्याणकारी है - जो सुंदर, आनंदमयी है। यह दर्शन बाहरी जगत के सौंदर्य और अच्छाई की ओर भी इशारा करता है, जबकि सत् चित् आनंद ले जाता है आत्म साक्षात्कार की ओर।

सबकी भलाई, सबका कल्याण । हालांकि इनमें से किसी को भी एक खास उपलब्धि से जोड़ना या उस तक सीमित करना, इसके प्रभाव को कम करना है। सत् चित् आनंद आदि स्रोत है, जिससे सबकी उत्पत्ति हुई। भारतीय ऋषियों-मनीषियों ने इसे पहचाना, लेकिन इसका दायरा केवल भारत तक सीमित नहीं। आत्मा और ब्रह्म का रिश्ता यूनिवर्सल है। जिस तरह समय की पाबंदी इस पर लागू नहीं होती, वैसे ही राजनीतिक सरहदें भी बेमायने हैं इसके लिए। यह सभी को कल्याण की राह दिखाता है।

शेयर करें अपना अनुभव

जीवन की दिनचर्या के अनुभव में आप आनंद कैसे महसूस करते हैं, हमें लिखकर भेजिए इस मेल आईडी पर **nbtreader@timesofindia .com** और सब्जेक्ट में लिखें-'जीवन आनंद'

चीन-US में जंग हुई तो कौन जीतेगा

मृत्युंजय राय

चीन को इंजीनियर चलाते हैं। अमेरिका को वकील और इन दोनों देशों के बीच दुनिया की सबसे बड़ी ताकत बनने की होड़ चल रही है। **Breakneck: China's Quest to Engineer the Future** नाम की किताब में इसके लेखक डैन वांग (Dan Wang) ने यह दावा किया है। उनका कहना है कि इसी वजह से चीन किसी भी कंस्ट्रक्शन को तूफानी गति से पूरा करता है, जबकि अमेरिका में किसी निर्माण को लेकर बहस चलती रहती है कि उसकी जरूरत है भी या नहीं।

AI Image

विचार विंडो

इंजीनियरों की ताकत । डैन का यह भी दावा है कि चीन में सत्ता के शीर्ष पर बैठे लोगों में से कई इंजीनियर हैं और चीन का इन्फ्रास्ट्रक्चर देखकर आप इसे समझ सकते हैं। वह बताते हैं कि 1980 के दशक से लेकर अब तक चीन ने जो रोड नेटवर्क बनाया है, वह अमेरिका के मुकाबले दोगुना है। वहीं, चीन का हाई स्पीड रेल नेटवर्क जापान के साइज का 15 गुना है। चीन जितने सोलर और विंड पावर का इस्तेमाल करता है, वह समूची दुनिया के दूसरे देशों को मिला दें तो उसके बराबर ही ठहरेगा। वहीं, दुनिया की मैन्युफैक्चरिंग में अकेले उसका योगदान एक तिहाई है।

टेक्नॉलजिकल वॉर । लेकिन बात सिर्फ इतनी नहीं है। चीन आज अमेरिका के साथ टेक्नॉलजी वॉर में भी उलझा है और ऐसा मानने वालों की कमी नहीं है कि वह यह जंग जीत चुका है। कभी इस चीन की छवि खराब गुणवत्ता के सस्ते प्रॉडक्ट्स बनाने की थी, जबकि आज ऐसा नहीं है। इस बारे में डैन का कहना है कि यह सब प्रैक्टिस की वजह से हुआ है। आज चीन हाई क्वॉलिटी के टेक्नॉलजिकली एडवांस्ड प्रॉडक्ट्स बना रहा है। AI और रोबोटिक्स में वह दुनिया के अग्रणी देशों में शामिल है।

प्रैक्टिस पर जोर । डैन चीन की इंजीनियरिंग क्षमता की तुलना खाना बनाने से करते हैं। वह लिखते हैं कि जिस तरह से किसी शेफ को सही इक्विपमेंट दिए जाएं, अच्छी रेसिपी बताई जाए और अगर उसके अंदर intuition हो तो वह अच्छा खाना बना सकता है। बशर्ते उसके पास इसका तजुर्बा हो। उनका मानना है कि यही बात इंजीनियरिंग पर भी लागू होती है। अभ्यास के जरिये आप पहले से अच्छा प्रॉडक्ट बना सकते हैं।

कौन जीतेगा । चीन में करोड़ों वर्कर्स और मैनेजरों ने दशकों के प्रैक्टिस के बाद अपने काम में दक्षता हासिल की है। स्मार्टफोन, कंस्यूमर ड्रोन और कॉम्प्लेक्स इलेक्ट्रॉनिक प्रॉडक्ट्स के कॉन्ट्रैक्ट मैन्युफैक्चरर के तौर पर उनके पास शानदार तजुर्बा है। इन लोगों की स्किल अमेरिका की ऐपल और चीन की हुवावे जैसी कंपनियों के काम आ रही है। आज BYD को इलेक्ट्रिक वीइकल सेगमेंट में दुनिया का अगुआ माना जा रहा है। इस नॉलेज की वजह से ही चीन को आज अमेरिका पर बढ़त हासिल है। डैन यह भी लिखते हैं कि अमेरिका भी सेमीकंडक्टर और मेडिकल डिवाइसेज बनाने में काफी आगे है, लेकिन अगर दोनों देशों के बीच युद्ध होता है तो चीन में जनमे और अमेरिका में रह रहे डैन के मुताबिक पलड़ा ड्रैगन का भारी रहेगा।

कितनी महिला जज हों?

प्रणव प्रियदर्शी

देश के पूर्व मुख्य न्यायाधीश जस्टिस एन वी रमणा ने पिछले दिनों एक कार्यक्रम में न्यायपालिका के शीर्ष स्तर पर जेंडर डायवर्सिटी का सवाल उठाकर एक बार फिर इस तथ्य की ओर सबका ध्यान खींचा कि संवैधानिक अदालतों में आज भी महिला जजों का अनुपात बेहद कम है। हालांकि हायर जुडिशरी में डायवर्सिटी की जरूरत बताई जाती रहती है, लेकिन जेंडर डायवर्सिटी को वास्तविकता में तब्दील करने के ठोस प्रयास नहीं दिखते। पूर्व CJI जस्टिम डी वाय चंद्रचूड़ ने भी कहा था, 'जब लोगों को इंसाफ करने वालों में अपनी झलक दिखेगी, तब वे जुडिशरी पर यकीन करने लगेंगे।' सवाल उठता है, समाज के अलग-अलग हिस्सों को जजों की कुर्सी पर बैठे लोगों में अपनी झलक कैसे दिखेगी। इसका जवाब डायवर्सिटी में छिपा है।

AI Image

लेकिन अगर जस्टिस चंद्रचूड़ का ही कार्यकाल देखें तो उनकी अगुआई वाले कलीजियम ने जिन 17 नामों की सिफारिश की, उनमें एक भी महिला नहीं थी। जाहिर है, जिन मानकों के आधार पर फैसला होता है, उनमें बदलाव तो सुनिश्चित करना होगा। मिसाल के तौर पर, सीनियॉरिटी को एक प्रमुख आधार बताया जाता है, लेकिन जब-तब उसका उल्लंघन भी होता रहता है। हां, इस उल्लंघन के जरिए महिलाओं की एंट्री सुनिश्चित की जाए, इसके उदाहरण कम मिलते हैं। लेकिन बात सिर्फ जजों की नहीं। एक समाज के रूप में हम भी जिम्मेदार हैं इस स्थिति के लिए। इसे समझना हो तो खुद से यह सवाल पूछना होगा कि 1950 से 1989 तक की पूरी अवधि में सुप्रीम कोर्ट के सारे जज पुरुष थे, इस तथ्य को हम जितनी सहजता से लेते रहे, क्या उसी सहजता से इस मांग को भी लेंगे कि सुप्रीम कोर्ट में सभी 34 जज महिलाएं हों?

आधी दुनिया

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें www.speakingtree.nbt.in

कारोबार ही नहीं, जीवन में भी गणित की होती है ज़रूरत

सलिल पाण्डेय

गणित के अध्ययन में जैसे किसी फॉर्म्युले के अनुसार ही उत्तर निकलता है, वैसे ही जीवन में भी हर काम का अपना नियम और संतुलन है। यदि गणित का फॉर्म्युला गलत हो, तो उत्तर भी गलत आएगा। इसी तरह, जीवन में भी छोटी-छोटी बातों का ध्यान न रखने पर परिणाम गलत निकलते हैं। हर व्यक्ति खुशी और आनंद चाहता है, धिकांश लोग इसके लिए संघर्ष करते रहते हैं। इसलिए समझना जरूरी है कि जीवन का गणित कहां गड़बड़ हो रहा है, जो परिणाम बेहतर नहीं आ रहे।

सबसे पहले परिवार में संतुलन और समभाव होना आवश्यक है। सुखी जीवन और जीवन के हर काम के बदले बेहतर परिणाम पाने के लिए भी यह जरूरी है। रिश्तों में प्रेम, विश्वास और एक-दूसरे की भावनाओं की समझ ही आनंद की नींव है। घर के बड़े सदस्यों की जिम्मेदारी है कि वे प्रत्येक सदस्य के मनोभावों को समझें और उसी अनुसार आचरण करें।

आज के भौतिक युग में पैसा और तकनीक का बढ़ता प्रभाव जीवन का गणित बिगाड़ रहा है। सुबह उठकर रात सोने तक केवल अधिक कमाई की चाहत, मोबाइल और स्मार्टफोन पर निर्भरता ने रिश्तों को कमजोर कर दिया है। घर में लोग एक साथ होते हुए भी मोबाइल में उलझे रहते हैं, संवाद और हंसी-ठहाके कम हो गए हैं। सकारात्मक बदलाव के लिए परिवार के छोटे बच्चों के साथ मिलकर खेलना, हंसना, बोलना चाहिए। पिकनिक और प्राकृतिक सुंदरता का अनुभव आनंद और खुशियां बढ़ाता है। सुबह का उगता सूरज, शाम का ढलता सूरज, पूर्णिमा का चांद और तारे जीवन में ताजगी व ऊर्जा लाते हैं। इसके अलावा परिवार में आपसी संवाद, सकारात्मक चर्चा और अनुभव साझा करना आवश्यक है।

जीवन का गणित तभी सही रहेगा जब परिवार में समय रहते संतुलन और सुसंस्कार बनाए जाएं। इसके लिए घर के मुखिया की बातें माननी होंगी। इस तरह, सजग और समझदारी से अपनाया गया पारिवारिक गणित ही जीवन में कभी दो और दो को पांच बनने से बचा सकता है।

आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957 स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः(022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 28872324 से मुद्रित। **स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर** (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व रायगड जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

जन्मशती • उनकी रचनाओं ने भाषाई-क्षेत्रीय सीमाओं को पार किया

भूपेन दा का जीवन हमें जमीन से जुड़े रहने की शक्ति देता है

स्मरण

नरेंद्र मोदी
प्रधानमंत्री

भारतीय संस्कृति और संगीत के प्रति जुनून रखने वाले सभी लोगों के लिए आज, 8 सितंबर का दिन बेहद खास है। असम के मेरे भाइयों और बहनों के लिए तो यह और भी खास है। भारत की अब तक की सबसे अद्भुत आवाजों में शुमार रहे डॉ. भूपेन हजारिका की आज जयंती है। जैसा कि आप सभी जानते हैं, इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी समारोह की शुरुआत हो रही है। यह भारतीय कलात्मक अभिव्यक्ति और जनचेतना में उनके योगदान को याद करने का अनुपम अवसर है।

भूपेन दा ने हमें जो दिया, वह संगीत से कहीं बढ़कर है। उनकी रचनाओं में भावनाएं समाहित थीं, जो राग से परे थीं। वे महज एक आवाज से बढ़कर लोगों के दिलों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीतों को सुनकर बड़ी हुई हैं, जिनके हर शब्द में दया, सामाजिक न्याय, एकता और गहराई से जुड़े अपनत्व के भाव गूंजते हैं।

असम से एक ऐसी आवाज उभरी, जो अपने साथ मानवता की भावना लेकर एक कालातीत नदी की तरह बहते हुए, सीमाओं और संस्कृतियों को पार करती गई। भूपेन दा ने दुनिया भर की यात्रा की, समाज के सभी वर्गों के दिग्गजों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम किया, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से जुड़े रहे। उनके बचपन को असम की समृद्ध मौखिक परंपराओं, लोक धुनों और कहानी सुनाने की सामुदायिक प्रथाओं ने गहराई से आकार दिया। इन अनुभवों ने उनकी कलात्मक शब्दावली की बुनियाद रखी। वे असम की मौलिक पहचान और उसके लोगों के लोकाचार की भावना को हमेशा साथ लेकर चले।

भूपेन दा की प्रतिभा बहुत कम आयु में ही सामने आ गई थी। मात्र पांच साल की आयु में, उन्होंने एक सार्वजनिक कार्यक्रम में गायन किया और तत्काल असमिया साहित्य की अग्रणी हस्ती लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। किशोरावस्था में ही उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया था, लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का केवल एक हिस्सा था। भूपेन दा हृदय से उतने ही बुद्धिजीवी... जिज्ञासु, स्पष्टवक्ता और दुनिया को समझने की अदम्य इच्छा से प्रेरित थे। ज्योति प्रसाद अग्रवाल और बिष्णु प्रसाद राभा जैसी सांस्कृतिक विभूतियों ने उनके मन पर गहरी छाप छोड़ी और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को भी गहन बनाया। सीखने की यही इच्छा थी जिसने उन्हें बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के कॉटन कॉलेज में उत्कृष्ट बनाया और उन्हें अमेरिका ले गई, जहां वे उस समय के प्रमुख शिक्षाविदों, विचारकों और संगीतकारों के संपर्क में आए। उनकी मुलाकात महान कलाकार और सिविल राइट्स लीडर पॉल रॉब्सन से हुई। रॉब्सन का गीत ऑल मैन रिवर भूपेन दा की प्रतिष्ठित रचना बिस्तिर्नो पारोरे के लिए प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनोर रूजवेल्ट ने भारतीय लोक संगीत की उनकी प्रस्तुति के लिए उन्हें स्वर्ण पदक से सम्मानित किया।

उन्होंने असम को दृश्यमान और श्रव्य बनाया था...

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि उन्होंने असम में रहने वाले लोगों और दुनिया भर में फैले असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को आकार देने में योगदान दिया।

भूपेन दा के पास अमेरिका में ही रहने का विकल्प था, लेकिन वे भारत लौट आए और पूरी तरह संगीत में रम गए। रेडियो से रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर शैक्षिक वृत्तचित्रों तक, वे हर माध्यम में पारंगत थे। वे जहां भी गए, उन्होंने युवा प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करने पर जोर दिया। उनकी रचनाओं में गीतात्मकता के साथ ही साथ सामाजिक संदेश भी थे, जिनमें गरीबों के लिए न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिकों की शक्ति जैसे विषय शामिल थे। अपने संगीत के माध्यम से उन्होंने नाविकों, चाय बागानों के मजदूरों, महिलाओं, किसानों आदि की आकांक्षाओं को स्वर दिया।

एक भारत, श्रेष्ठ भारत की भावना भूपेन हजारिका की जीवन यात्रा में सशक्त रूप से अभिव्यक्त हुई। उनकी रचनाओं ने भाषाई और क्षेत्रीय सीमाओं को पार करते हुए देश भर के लोगों को एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बंगाली और हिंदी में फिल्मों के लिए संगीत रचना की। उन्होंने शेष भारत के लिए असम को दृश्यमान और श्रव्य बनाया। उन्होंने असम में रहने वाले लोगों और दुनिया भर में फैले असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को आकार देने में योगदान दिया।

यूं तो भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा क्षेत्र से निर्दलीय विधायक चुने गए, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि उनका सार्वजनिक व्यक्तित्व जनता के विश्वास में कितनी गहराई से निहित था। बीते वर्षों में भारत की जनता और सरकार ने उनके अमूल्य योगदान की सराहना की है। उन्हें पद्मश्री, पद्म भूषण, पद्म विभूषण, दादासाहेब फाल्के पुरस्कार सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। यह मेरे लिए व्यक्तिगत रूप से और एनडीए सरकार के लिए सम्मान की बात थी कि 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न से सम्मानित किया गया। उन्हें यह सम्मान दिए जाने पर दुनिया भर, खासकर असम और पूर्वोत्तर के लोगों ने खुशी जाहिर की। यह सम्मान उन सिद्धांतों का उत्सव है, जिन्हें भूपेन दा अपने दिल के करीब मानते थे- कि संगीत, जब सच्चाई पर आधारित होता है, तो सभी बाधाओं को पार कर सकता है, एक गीत लोगों के सपनों का भार उठा सकता है और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है।

मुझे याद है 2011 में भूपेन दा का निधन हुआ था। मैंने टेलीविजन पर देखा था कि कैसे लाखों लोग उनके अंतिम संस्कार में शामिल हुए थे। उस समय हर आंख नम थी। अपने शानदार जीवन की तरह मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को एकजुट किया। इसलिए यह उचित ही था कि उनका अंतिम संस्कार ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे जालुकबाड़ी पहाड़ी पर किया गया, वही नदी जो उनके संगीत, रूपकों और स्मृतियों की जीवन रेखा रही थी। खुशी की बात यह है कि असम सरकार ने भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों का समर्थन किया है, जो युवाओं के बीच उनकी जीवन-यात्रा को और लोकप्रिय बनाने के लिए काम कर रहा है।

भूपेन हजारिका को पाकर भारत धन्य हो गया है। उनके शताब्दी वर्ष के शुभारम्भ के अवसर पर, आइए हम उनके संदेश को दूर-दूर तक फैलाने की अपनी प्रतिबद्धता दोहराएं।

आर्थिक साथी एलआईसी की इन स्कीम में मिल रहा है 10 से 12% तक रिटर्न

ये दो प्लान हैं खास, आपको पेंशन देंगे; आपात स्थिति में आर्थिक मदद भी करेंगे

डॉ. चंद्रप्रकाश हेड़ा
चीफ लाइफ इंश्योरेंस एडवाइजर
भारतीय जीवन बीमा निगम

रिटायरमेंट के बाद वरिष्ठ नागरिक के लिए एलआईसी के दो पेंशन प्लान बेहतर विकल्प हो सकते हैं। इसमें मासिक से लेकर एकमुश्त निवेश तक किया जा सकता है। पेंशन भी जिस हिसाब से चाहें वैसी पा सकते हैं। इसमें मासिक से लेकर वार्षिक तक की सुविधा है। वहीं निवेश करने की उम्र अधिकतम 80 साल तक है। यदि निवेश के तुरंत बाद पेंशन चाहते हैं तो वह विकल्प भी है।

इंडेक्स प्लसः न्यूनतम प्रीमियम ढाई हजार, 10 साल निवेश, 12% तक मिलेगा रिटर्न

रिटायरमेंट के लिहाज से यह अच्छा प्लान है। इसमें सेविंग व इंश्योरेंस दोनों का फायदा मिलता है। 60 की उम्र तक यह प्लान ले सकते हैं। न्यूनतम प्रीमियम ढाई हजार रु. महीने है, अधिकतम की कोई सीमा नहीं है। रिटर्न 12% तक मिल सकता है। पॉलिसी चालू रहने तक जीवन बीमा के साथ निवेश भी कर सकते हैं। यूनिट लिंक्ड स्कीम होने से फ्लेक्सी ग्रोथ फंड व स्मार्ट ग्रोथ फंड जैसे विकल्प भी हैं। 5 साल में पैसा दोगुना हो सकता है, पर यह जोखिम के अधीन है।

2.5 लाख रु. प्रीमियम टैक्स फ्री
जोखिम कवर वार्षिक प्रीमियम का 7 से 10 गुना मिल जाता है। लॉक इन पीरियड 5 साल बाद आंशिक निकासी कर सकते हैं। कम से कम 10 व अधिकतम 25 साल तक निवेश कर सकते हैं। सालाना ढाई लाख रुपए तक प्रीमियम टैक्स फ्री है।

सरल पेंशन प्लानः एक बार में एकमुश्त निवेश करने पर जिंदगीभर मिलेगी पेंशन

इस प्लान में एक बार निवेश करने के बाद जीवनभर पेंशन मिलती रहेगी। 80 साल की उम्र तक निवेश कर सकते हैं। यदि आप इसमें 10 लाख निवेश करते हैं तो सालाना 64,350 रुपए की पेंशन मिलेगी। यह पेंशन आप अपने हिसाब से मासिक, तिमाही, छमाही और वार्षिक ले सकते हैं। इसमें निवेश की कोई अधिकतम सीमा नहीं है। इसमें एक खास बात है कि निवेश के एक माह बाद ही पेंशन शुरू हो जाती है। पॉलिसी लेने के 6 माह बाद लोन भी ले सकते हैं।

इमरजेंसी में पैसा निकाल सकते हैं
इलाज के लिए पैसों की जरूरत है तो पॉलिसी में जमा पैसा निकाल सकते हैं। पॉलिसी सरेंडर करने पर बेस प्राइस का 95% हिस्सा वापस मिल जाता है। पॉलिसीधारक की मृत्यु होने पर निवेश की 100% राशि के साथ सालभर की पेंशन राशि नामिनी को मिल जाती है।

ओल्ड इज ऑलवेज गोल्ड

125 साल के टोलेंटिनो की जिंदादिल मुस्कान

ये हैं पेरू के 125 साल के मार्सेलिनो अबाद टोलेंटिनो। इन्हें माशिको के नाम से जाना जाता है। संभवतः ये दुनिया के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति हैं। ये एक छोटे से केयर होम में रहते हैं, जो वनस्पतियों व जीवों से घिरा है। माशिको ने अपने बगीचे में उगाई चीजों से एक आहार तैयार किया है। उनके भोजन में ढेर सारे ताजे फल, सब्जियां शामिल हैं। वे कहते हैं इस आहार ने उनकी लंबी उम्र में अहम भूमिका निभाई है।

आपकी योजना...

एम्स दिल्ली में बुजुर्गों के इलाज की खास सुविधा

60 वर्ष से अधिक उम्र के मरीजों के लिए एम्स नई दिल्ली में इलाज की खास सुविधा है। यहां स्थित राष्ट्रीय वृद्धजन केंद्र (एनसीए) में जेरियाट्रिक मेडिसिन, आर्थोपेडिक, मनोचिकित्सा सहित कई विभागों की ओपीडी एक ही जगह चलती है। इससे बुजुर्गों को इधर-उधर नहीं भटकना पड़ता। एनसीए की क्षमता 200 बेड की है। हालांकि एम्स के मुख्य अस्पताल सहित अन्य सेंटर में भी बुजुर्गों को इलाज की सुविधा है। वे अपनी इच्छा से तय कर सकते हैं कि उन्हें एनसीए में इलाज कराना या एम्स के अन्य सेंटर में।

आप अपने ऐसे अनुभव, जो दूसरों के लिए प्रेरणा बनें, srcitizen@dbcorp.in पर भेज सकते हैं। चुनिंदा अनुभव हम प्रकाशित करेंगे।

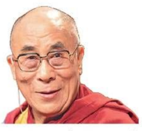

जब कभी भी सम्भव हो, विनम्र बनें। और वास्तव में ऐसा करना सदैव सम्भव है।

-दलाई लामा

खुशी की गाइड

बहुत सकारात्मक प्रभाव हैं करुणा के

डॉ. रितु पाण्डेय शर्मा, reetupost@yahoo.com

कहते हैं कि जब बुद्ध को सत्य का बोध हुआ, तो उनकी आंखों से आंसू बह निकले और वे धरती पर नतमस्तक हुए। तप का चरम करुणा के परिणाम के रूप में फलीभूत हुआ। यह अनुभूति इस सत्य का प्रतीक थी कि जो बाहर खोजा जाता है, वह हमारे भीतर मौजूद है।

- विज्ञान भी इस अनुभव को पुष्ट करता है, जब हम किसी प्रियजन के प्रति दयालुता महसूस करते हैं, तो शरीर में सेरोटोनिन की मात्रा बढ़ती है और प्रतिरक्षा-प्रणाली मजबूत होती है। इसे 'हेल्पर्स हाई' के रूप में जाना जाता है।
- अधिक आश्चर्यजनक है कि जब हम करुणा की ऊर्जा का अनुभव करते हैं, तो उसके प्रभाव दर्शकों या आसपास मौजूद अजनबियों तक भी अबाध रूप से पहुंचते हैं। उदाहरणतः एक अध्ययन में, बच्चों के क्लिनिक में दिखाए गए 'काइंडनेस मीडिया' ने न केवल दर्शकों के मनोभाव सुधारे, बल्कि उनमें उदारता और सकारात्मकता भी बढ़ाई।
- ईईजी आधारित अध्ययन के अनुसार जब लोग करुणा भरे माहौल में होते हैं- जैसे सामाजिक मेल-मिलाप- तो उनके मस्तिष्क में थीटा व अल्फा रिदम सक्रिय होते हैं, जो सहयोग, विश्वास और सकारात्मक भावना से जुड़े रहते हैं।
- इसलिए, आपकी एक छोटी-सी करुणा की यह तरंग- जो एक प्राकृतिक एंटी डिप्रेसेंट के तरह है- आपमें शांति लाने के साथ-साथ आपके आस-पास भी ऊर्जा भरती है, और दूर तक सकारात्मक प्रभाव फैलाती है। ▪ 1 मिनट रीड

सकारात्मक संकल्प

कोई खेल जरूर खेलें...

अगर देखें तो जीवन और खेलों में बहुत सारी समानताएं हैं। दोनों में ही प्रतिस्पर्धा और चुनौतियां होती हैं और दोनों में ही खेल-भावना का सर्वाधिक महत्व है। दोनों के लिए परिश्रम, लगन और एकाग्रता जरूरी हैं। जीवन की ही तरह खेलों में भी दबाव होता है, तुरंत निर्णय लेने होते हैं, उतार-चढ़ावों का सामना करना पड़ता है। सच कहें तो खेल हमें जीना सिखाते हैं। कोशिश करें कि अपनी व्यस्त जीवनशैली में किसी न किसी प्रतिस्पर्धात्मक खेल को शामिल करें और उसके लिए समय निकालना ना भूलें। उसमें भी अगर आउटडोर एक्टिविटी वाले खेल हों तो और बेहतर, हालांकि इनडोर खेल भी जीवन के अनेक गुर सिखा सकते हैं। ***सकारात्मक संकल्प लें कि किसी न किसी खेल को अपने जीवन में जरूर शामिल करेंगे।*** ▪ 1 मिनट रीड

उम्मीद के 7 मिनट

ऐसा जीवन जीएं जो सफल ही नहीं पवित्र भी हो

जीवन-सूत्र

स्वामी मुकुंदानंद
आध्यात्मिक गुरु और लेखक

बचपन से लेकर आजीवन हमारे विश्वास सांस्कृतिक, पारिवारिक, सामाजिक स्रोतों से सचेत या अवचेतन रूप से हममें समाहित होते रहते हैं। कुछ हमें ऊर्ध्वगति की ओर ले जाते हैं, जबकि कुछ हमारे अंतर्निहित सामर्थ्य को धीरे-धीरे सीमित कर देते हैं।

यह स्वाभाविक रूप से एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न करता है : कैसी श्रद्धा वास्तव में संवर्धन के योग्य है?

जब श्रद्धा वास्तविक ज्ञान पर आधारित होती है, तो वह आत्मबल और स्पष्ट दृष्टि का आधार बनती है। संत तुलसीदास ने रामायण में इसे सुंदरता से व्यक्त किया है : जानें बिनु न होइ परतीति अर्थात् वास्तविक ज्ञान के बिना वास्तविक श्रद्धा नहीं हो सकती।

श्रीकृष्ण भी भगवद्गीता में कहते हैं :

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।

अर्थात्, इस संसार में दिव्य ज्ञान के समान और कुछ भी शुद्ध नहीं है।

वे अर्जुन को उपदेश देते हैं : दिव्य ज्ञान की नाव में सवार होकर जीवन-मृत्यु के भवसागर को पार करो।

इतिहास के महान संग्राम के मध्य अर्जुन असाधारण नैतिक और भावनात्मक द्वंद्व से जूझ रहे थे, पर उन्होंने श्रीकृष्ण के ईश्वरीय ज्ञान में अडिग श्रद्धा रखी। यही श्रद्धा उन्हें भ्रम से ऊपर उठाकर, कर्तव्य-पथ पर गरिमा और आत्मबल के साथ आगे बढ़ने का आधार बनी।

हमारे संघर्ष भले ही भिन्न हों, सिद्धांत एक है : विशुद्ध ज्ञान-आधारित श्रद्धा हमें कठिनाइयों में स्थिर, विवेकशील और साहसी बनाती है।

यहां वर्णित ज्ञान मात्र बौद्धिक ही नहीं, अपितु परिवर्तनकारी भी है। यह हमारी चेतना को ऊर्ध्वगामी बनाता है एवं हमारी अंतःप्रज्ञा को प्रखर करता है। ऐसे ज्ञान को ही हमारी श्रद्धा की सुदृढ़ नींव बनना चाहिए।

जब हमारी श्रद्धा दिव्य ज्ञान के स्रोत से उद्भूत होती है, तो यह श्रेष्ठ चरित्र का निर्माण करती है- जो हमें ऐसा जीवन जीने की प्रेरणा देती है जो मात्र सफल नहीं, पावन भी हो।

अतः भगवद्गीता, रामायण और महाभारत जैसे आध्यात्मिक ग्रंथ केवल प्राचीन अवशेष नहीं हैं; ये जीवन के मार्गदर्शक हैं, जिनमें समस्त मानवता के लिए शाश्वत ज्ञान के रत्न समाहित हैं। जब हमारी श्रद्धा इस दिव्य ज्ञान के स्रोत से उद्भूत होती है, तो यह एक श्रेष्ठ चरित्र का निर्माण करती है- जो हमें ऐसा जीवन जीने की प्रेरणा देती है जो मात्र सफल नहीं, पावन भी हो।

और इस प्रक्रिया में हम यह अनुभव करते हैं कि वास्तविक श्रद्धा कभी अंधी नहीं होती- वह दृष्टि से परे देखती है, और कहीं अधिक गहराई व स्पष्टता से सत्य को पहचानती है।

यह सत्य ही है कि हम दृष्टि से नहीं, श्रद्धा से चलते हैं। वास्तव में हमारे जीवन का प्रत्येक निर्णय इस पर आधारित होता है कि हमारा विश्वास किसमें है। और यही विश्वास हमारे जीवन की दिशा तय करता है।

यदि हमें लगता है कि स्वास्थ्य सबसे महत्वपूर्ण है, तो हम आहार-व्यायाम को प्राथमिकता देते हैं। श्रद्धा धन और यश में है, तो हमारी ऊर्जा उन्हीं में लगती है। अगर विश्वास ईश्वर में हो, तो हमारे निर्णय आत्मिक शुद्धि के प्रति समर्पित होते हैं। देखें तो श्रद्धा कोई निष्क्रिय नहीं; बल्कि एक प्रबल शक्ति है, जो हमारे विचारों, मूल्यों, कार्यों और नियति को अहर्निश प्रभावित करती है। ▪ 2 मिनट रीड

सबक वाला पाठ

किसी का जुर्म, किसी को सजा

एक पेड़ पर एक हंस और एक कौआ रहते थे। दोनों ही आपस में अच्छे मित्र थे। लेकिन कौआ जलनशील स्वभाव का था, जबकि उसके विपरीत हंस दयालु स्वभाव का था। एक बार गर्मी के मौसम में एक थका-हारा यात्री वृक्ष के नीचे आकर बैठ गया। थोड़ी देर में वह अपना धनुष-बाण बगल में रखकर सो गया।

जब वह सोया तब वृक्ष की छांव उस पर आ रही थी, लेकिन शीघ्र ही सूर्य की तेज किरणें उसके मुंह पर पड़ने लगीं। दयालु हंस ने यह देखा तो अपने पंखों को पसारकर उसके मुंह पर छाया कर दी। लेकिन जलनशील कौए से यह देखा न गया तो वह यात्री के मुंह में बीट करके उड़ गया। इससे यात्री जाग उठा। हंस को देखकर उसने समझा कि यह कृत्य हंस ने किया है। उसने हंस पर तीर चलाकर उसे मार डाला। इस प्रकार उस दयालु और परोपकारी हंस को दूसरे के अपराध की सजा मिली। उसकी भूल बस इतनी ही थी कि कौआ उसका मित्र था।

मोरल ऑफ द स्टोरी : आप चाहे जितने नेक और परोपकारी हों, लेकिन अगर किसी दुष्ट और कुटिल से मित्रता है तो यह आपके लिए घातक ही साबित होगी। ▪ 1 मिनट रीड

मायनों की तलाश

संत-परम्परा के इस पद का अर्थ जानते हैं?

संत पलटूदास का एक पद साधु-परम्परा के साधकों और भक्तों में प्रायः बहुत प्रसिद्ध रहा है। यह है : **'पूरन ब्रह्म रहै घट में सठ, तीरथ कानन खोजन जाई।'** लेकिन क्या आप इन शब्दों के मायने जानते हैं? पलटूदास जी इन साधारण-से शब्दों के माध्यम से हमें संकेत कर रहे हैं कि जो पूर्णब्रह्म है, वह घट में ही है, यानी हमारे भीतर ही है। उसके लिए हमें तीर्थयात्रा पर जाने की भी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि परमात्मा की प्राप्ति बाहर की नहीं भीतर की यात्रा से होती है। परमात्मा अंतर्यात्रा की दिशा में विराजित हैं। इतना ही नहीं, पलटूदास जी 'सठ' शब्द का भी प्रयोग कर रहे हैं- जिसका अर्थ होता है धूर्त या बेईमान। वे हमें लगभग फटकार लगाकर कहते हैं कि हम किससे बेईमानी करते हैं, किसे छलते हैं? जो हमारे ही भीतर है, उसे खोजने बाहर कहां चल पड़ते हैं?

अर्थ के पीछे सीख : संत-काव्य में अनेक अनमोल रत्न छिपे हैं, हम उनके समुद्र में प्रवेश करें तो मूल्यवान अंतर्दृष्टियां प्राप्त होती हैं। ▪ 1 मिनट रीड

संघर्ष की कहानी **मनोज वाजपेयी,** भारतीय अभिनेता

कभी 50 रु. उधार लेकर दिल्ली आए थे, अब ओटीटी के हाईएस्ट पेड एक्टर्स में शामिल

मनोज वाजपेयी (56) को आज भारतीय सिनेमा में अपने दमदार अभिनय के लिए जाना जाता है।। ***फिलहाल वे चर्चा में हैं, क्योंकि नेटफ्लिक्स पर उनकी फिल्म 'इंस्पेक्टर जेंडे' सुर्खियां बटोर रही है।*** *मनोज ने यहां तक पहुंचने के लिए कई कठिनाइयों का सामना किया है। जानते हैं उनकी संघर्ष से सफलता की कहानी...*

संघर्ष का दौर: पड़ोसी मजाक उड़ाते थे, आत्महत्या का ख्याल भी आया

मनोज वाजपेयी का जन्म बिहार के चंपारण जिले के बेलवा गांव में हुआ था। मनोज के पिता किसान थे। 6 भाई-बहनों में सबसे बड़े होने के कारण मनोज पर हमेशा परिवार की जिम्मेदारी रही। बचपन से ही मनोज अभिनय के शौकीन थे। मनोज के इस शौक का पड़ोसी अकसर मजाक उड़ाते थे। 17 साल की उम्र में मनोज सिर्फ 50 रुपए उधार लेकर दिल्ली चले गए। यहां उन्होंने नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा (एनएसडी) में दाखिले के लिए तीन बार कोशिश की, लेकिन हर बार रिजेक्ट हो गए। इस असफलता के चलते वे डिप्रेशन में चले गए और आत्महत्या तक की सोचने लगे। इसके बाद मनोज ने दिल्ली से मुंबई की ओर रुख किया। यहां वे एक छोटे बरसाती कमरे में पांच दोस्तों के साथ रहते थे। यहां गर्मी और सर्दी दोनों में कष्ट सहना पड़ता था। आर्थिक तंगी इतनी ज्यादा थी कि कई बार वे भूखे ही सोते थे। भूख मिटाने के लिए वे कई बार फिल्म सेट पर छुपकर बचा हुआ खाना खाते थे।

उतार-चढ़ाव: सेट से निकाले गए लेकिन हिम्मत नहीं हारी

मनोज को ऑडिशन के दौरान कई बार सेट से निकाल दिया जाता था। हालांकि 1994 में 'बैंडिट क्वीन' जैसी फिल्मों में छोटे रोल्स से फिल्मी करियर की शुरुआत तो की, लेकिन लंबे समय तक मनोज को बड़ा रोल भी नहीं मिलता था। मनोज को 1998 में आई फिल्म 'सत्या' में गैंगस्टर के किरदार ने पहचान दिलाई। इस भूमिका के लिए उन्हें नेशनल फिल्म अवॉर्ड (सपोर्टिंग एक्टर) और फिल्मफेयर क्रिटिक्स अवॉर्ड भी मिला।

सफलता: पद्मश्री से सम्मानित 170 करोड़ रुपए नेटवर्थ

मनोज ने 'शूल', 'गैंग्स ऑफ वासेपुर', 'अलीगढ़' और 'द फैमिली मैन' जैसी फिल्मों और वेब सीरीज में अपनी एक्टिंग से लोगों का दिल जीता है। मनोज के नाम अब तक 4 राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार और 4 फिल्मफेयर अवॉर्ड्स हैं। 2019 में उन्हें भारत सरकार ने पद्मश्री से नवाजा था। मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक मनोज भारत में ओटीटी के हाईएस्ट पेड एक्टर्स में शामिल हैं। मनोज की नेटवर्थ 170 करोड़ रुपए है। ▪ 1 मिनट रीड

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

पायनियर
नई दिल्ली, सोमवार, 8 सितंबर 2025

जननांकिकीय बदलाव

क्या बढ़ रही है वृद्धों की संख्या

यह एक क्लासिक दुविधा है: किसी भी चीज की अति बुरी होती है, लेकिन उसकी कमी भी उतनी ही चिंताजनक होती है। भारत को लंबे समय से एक युवा राष्ट्र के रूप में जाना जाता है, जिसकी बड़ी कार्यशील आयु वाली आबादी इसकी विकास कहानी को गति दे रही है।

हालांकि, हालिया आंकड़े बताते हैं कि एक शांत जनसांख्यिकीय परिवर्तन चल रहा है। नवीनतम नमूना पंजीकरण प्रणाली (एसआरएस) सांख्यिकीय रिपोर्ट 2023 से पता चलता है कि भारत की कुल प्रजनन दर (टीएफआर) पिछले वर्ष के 2.0 से घटकर 1.9 हो गई है, जो प्रति महिला 2.1 जन्मों के प्रतिस्थापन स्तर से काफी नीचे है। पहली बार, ग्रामीण भारत की टीएफआर ने 2.1 की प्रतिस्थापन दर को छुआ है, जबकि शहरी भारत की दर और भी कम 1.5 है।

प्रजनन क्षमता में गिरावट सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के संयोजन से प्रेरित है इसके अलावा, कम बच्चे और उच्च शिक्षा ऊर्ध्वगामी गतिशीलता सुनिश्चित करते हैं। हालांकि यह गिरावट प्रगति का संकेत है, विशेष रूप से स्वास्थ्य सेवा और लैंगिक सशक्तिकरण के संदर्भ में, लेकिन इसके आर्थिक विकास पर जटिल प्रभाव हैं।

सबसे तात्कालिक चिंता भारत के जनसांख्यिकीय लाभांश के लिए जोखिम है। देश का युवा कार्यबल इसका सबसे बड़ा आर्थिक लाभ रहा है, लेकिन अब कार्यशील आयु वर्ग की आबादी आने वाले दशकों में चरम पर पहुँच जाएगी और फिर घटने लगेगी। इसका अर्थ होगा बढ़ती अनुत्पादक

आबादी का भरण-पोषण करने वाले कम श्रमिक।

राज्यों में असमान प्रजनन दर भी जटिलता की एक परत जोड़ती है। बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में अपेक्षाकृत उच्च प्रजनन दर दर्ज की जा रही है, जबकि दिल्ली, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल जैसे राज्य औसत से काफी नीचे हैं। इसके परिणामस्वरूप अंतर-राज्यीय श्रमिक प्रवास हो सकता है, जिससे सामाजिक तनाव पैदा हो सकता है। कृषि, विनिर्माण और सेवा जैसे क्षेत्रों को युवा श्रमिकों की कमी का सामना करना पड़ सकता है, जबकि पेंशन, स्वास्थ्य सेवा और वृद्धों की देखभाल पर दबाव बढ़ेगा।

इस बदलाव से निपटने के लिए एक सावधानीपूर्वक और संतुलित नीतिगत प्रतिक्रिया की आवश्यकता होगी। परिवार नियोजन नीतियों को क्षेत्रीय विविधताओं के अनुरूप ढालना होगा, जहाँ उच्च प्रजनन क्षमता वाले राज्यों को जनसंख्या स्थिरीकरण पर ध्यान केंद्रित करना होगा, वहीं निम्न प्रजनन क्षमता वाले राज्यों को बाल देखभाल सुविधाओं, माता-पिता की छुट्टी और वित्तीय प्रोत्साहन जैसे सहायक उपायों के माध्यम से बच्चे पैदा करने को प्रोत्साहित करना पड़ सकता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत को मानव पूंजी में भारी निवेश करना होगा। कम बच्चों के जन्म के साथ, संख्या से हटकर गुणवत्ता पर जोर देना होगा - अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और रोजगार के अवसर सुनिश्चित करना। भारत की गिरती प्रजनन दर एक जीत और एक परीक्षा दोनों है। जनसांख्यिकीय लाभ की संभावनाएँ कम होती जा रही हैं, और जब तक भारत अनुकूलन के लिए निर्णायक रूप से कार्य नहीं करता, तब तक यह लाभ ही उसके भविष्य के लिए एक चुनौती बन सकता है।

भूपेन दा: भारत के रत्न

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है।

नरेंद्र मोदी
लेखक, भारत के प्रधानमंत्री हैं।

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है। और विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे। ये बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है।

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वो आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है।

भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले।

बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया।

लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अग्रवाला और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला, और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया।

सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तक ले गई। वो बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं, और मुझे बहुत गर्व होता है।

काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वे पॉल रोबसन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे। रोबसन का गीत ह्लओल्ड मैन रिवरह्व उनके कालजयी गीत ह्वबिश्टीरनो परोरेह्व की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया। भूपेन हजारिका, संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वे भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए। रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्यूमेंट्री तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे। जहां भी गए, नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया।

भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं, साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे...और आज भी पा रहे हैं।

भूपेन दा की जीवन यात्रा में ह्वएक भारत, श्रेष्ठ भारतह्व की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वो बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। ह्वदिल हूम हूम करेह्व में जो पीड़ा बहती है, वो सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वे पूछते हैं, ह्वगंगा बहती है क्यूंह्व, तो ऐसा लगता है मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों।

उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वो असम की आवाज बने।

भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे।

भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवार्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने, इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे। वो कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है, और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है।

मुझे 2011 का वह समय याद है जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। अब ये देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है।

भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल...इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है।

भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें माननीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है।

भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

कैसे माओ ने नेहरू को भ्रमित किया?

नेहरू जल-बंटवारे के जरिए पाकिस्तान के साथ शांति स्थापित करना चाहते थे, वहीं माओ इस्लामाबाद के साथ एक ऐसी साझेदारी की नींव रख रहे थे जो दक्षिण एशिया के सुरक्षा समीकरण को नए सिरे से परिभाषित करेगी।

यह लेख उत्तम सिन्हा द्वारा लिखित पुस्तक ट्रायल बाई वाटर से लिया गया है।

जब भारत और पाकिस्तान ने 1960 में विश्व बैंक की मध्यस्थता से सिंधु जल संधि पर हस्ताक्षर किए और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहयोग के एक आदर्श के रूप में इसकी सराहना की, तो यह अन्यथा तनावपूर्ण संबंधों में स्थिरता का एक दुर्लभ क्षण प्रतीत हुआ।

फिर भी, जब प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने पाकिस्तान के साथ सुलह की दिशा में अपना हाथ बढ़ाया, तब भी उत्तर में एक अधिक अशुभ चुनौती चुपचाप आकार ले रही थी–चीन-पाकिस्तान धुरी जो जल्द ही दक्षिण एशिया के रणनीतिक परिदृश्य को बदल देगी।

उत्तम सिन्हा की एक नई पुस्तक, ट्रायल बाय वॉटर: इंडस बेसिन एंड इंडिया-पाकिस्तान रिलेशंस, बताती है कि कैसे, जब सिंधु जल संधि पर बातचीत चल रही थी, माओत्से तुंग पहले से ही पाकिस्तान के साथ एक रणनीतिक संबंध पर अपनी नजर गड़ाए हुए थे। नेहरू को उम्मीद थी कि यह एक पड़ोसी के साथ शांति की दिशा में एक कदम होगा, 1950 में तिब्बत पर कब्जा करने के बाद, माओ की नजर अक्साई चिन पर थी, जो लद्दाख का एक उजाड़ लेकिन रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण उच्च-ऊंचाई वाला रेगिस्तान था। 1950 के दशक के मध्य तक, चीन ने इस क्षेत्र से होकर एक सड़क बना ली थी, जो झिंजियांग को तिब्बत से जोड़ती थी। नेहरू ने इसके महत्व को कम आंकते हुए 1959 में संसद में कहा कि इस क्षेत्र में ₹घास का एक तिनका भी नहीं है, यह टिप्पणी 1962 के युद्ध के दौरान चीन द्वारा अपनी पकड़ मजबूत करने के बाद भारत को परेशान करती रही।

एशियाई एकजुटता के माओ के बयानों के पीछे, उनकी महत्वाकांक्षाएँ सोची-समझी और विस्तारवादी थीं। 1954 में जब वे नेहरू से मिले, तो माओ ने पश्चिमी साम्राज्यवाद के खिलाफ साझा संघर्षों की बात करके भारतीय नेता को मंत्रमुग्ध कर दिया। उन्होंने शांति की बात की, युद्ध को लाभहीन बताया, और विदाई समारोह में कविता भी सुनाई। लेकिन इन भावों के पीछे एक भव्य योजना छिपी थी। माओ के लिए, नदियाँ, पहाड़ और बंजर विस्तार खाली परिदृश्य नहीं थे; वे रणनीतिक लीवर थे। तिब्बत और अक्साई चिन में सिंधु नदी के मुख्य जल स्रोतों पर नियंत्रण ने चीन को लाखों लोगों की जीवनरेखाओं को प्रभावित करने की क्षमता प्रदान की।

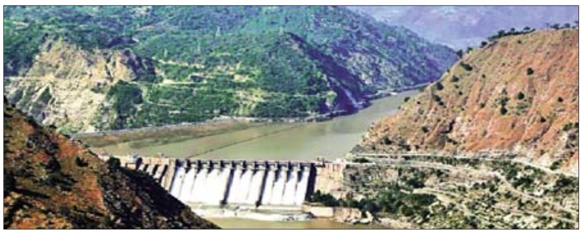

जब भारतीय इंजीनियर सिंधु नदी प्रणाली को लेकर पाकिस्तान के साथ नाजुक बातचीत में लगे थे, तब चीन इन विवादित क्षेत्रों पर अपनी पकड़ मजबूत कर रहा था। तिब्बत के पवित्र कैलाश पर्वत से शुरू होकर, सिंधु नदी लद्दाख पहुँचने से पहले अक्साई चिन से होकर गुजरती है और अंततः पाकिस्तान में मिल जाती है। 1963 में अक्साई चिन और बाद में शक्सगाम घाटी पर पाकिस्तान द्वारा कब्जा करने के साथ, चीन कश्मीर के रणनीतिक भूगोल में खुद को एक निर्णायक खिलाड़ी के रूप में स्थापित कर रहा था।

यह विश्वासघात तब स्पष्ट हो गया जब 1950 के दशक के अंत और 1960 के दशक की शुरूआत में पाकिस्तान और चीन करीब आए। जहाँ नेहरू ने सिंधु जल संधि को पाकिस्तान के साथ शांति की दिशा में एक कदम बताकर उसका बचाव किया, वहीं इस्लामाबाद चुपचाप बीजिंग के साथ अपनी साझा सीमा निर्धारित करने के लिए बातचीत कर रहा था। 1963 में, पाकिस्तान ने शक्सगाम घाटी का 5,180 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र चीन को सौंप दिया, जिससे बीजिंग को गिलगित-बाल्टिस्तान में पैर जमाने का मौका मिला और एक दीर्घकालिक रणनीतिक साझेदारी की नींव मजबूत हुई।

भारत के विरोध को अनसुना कर दिया गया। 1962 में चीन को भेजे गए एक आधिकारिक नोट में पूरे जम्मू-कश्मीर राज्य पर भारत की संप्रभुता का दावा किया गया था, लेकिन तब तक जमीनी हकीकत बदल चुकी थी।

जैसे-जैसे नई दिल्ली ने कूटनीति और संयम में अपना विश्वास जताया, बीजिंग और इस्लामाबाद एक ऐसा गठबंधन बना रहे थे जो अंततः भारत को दो मोर्चों पर चुनौती देगा–युद्धों में सैन्य रूप से और वैश्विक मंचों पर कूटनीतिक रूप से।

सिंधु जल संधि की कहानी, जिसे अक्सर सहयोग की विजय के रूप में मनाया जाता है, रणनीतिक चूक की एक समानांतर कहानी को छुपाती है। जहां नेहरू जल-बंटवारे के जरिए पाकिस्तान के साथ शांति स्थापित करना चाहते थे, वहीं माओ इस्लामाबाद के साथ एक ऐसी साझेदारी की नींव रख रहे थे जो दक्षिण एशिया के सुरक्षा समीकरण को नए सिरे से परिभाषित करेगी।

असली परीक्षा सिर्फ. सिंधु जल में नहीं, बल्कि दो पड़ोसियों के खतरनाक गठबंधन में थी - एक ऐसी धुरी जो आज भी भारत की परीक्षा ले रही है।

आप की बात

ईवीएम की जगह मत पत्र

कर्नाटक सरकार ने स्थानीय निकाय चुनावों को इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन के बजाय बैलेट पेपर से कराने का जो निर्णय लिया है, उसके राजनीतिक और व्यावहारिक दोनों ही अर्थ हैं। डिप्टी सीएम डी.के. शिवकुमार ने इसे राज्य का अधिकार बताया है, लेकिन सवाल यह है कि क्या बैलेट पेपर से चुनाव कराने से उस भरोसे की बहाली हो पाएगी जो विपक्ष पर सवाल उठाकर खोया हुआ मान रहा है? विपक्षी दलों का तर्क है कि ईवीएम में धांधली की गुंजाइश है। कांग्रेस नेता राहुल गांधी सहित कई नेताओं ने आरोप लगाया है कि हाल के वर्षों में मतदाता सूची में बड़े पैमाने पर हेरफेर हुआ, जिसका फायदा भाजपा को मिला। ऐसे आरोपों ने चुनाव आयोग की साख पर भी असर डाला है। लेकिन केवल बैलेट पेपर पर लौट जाने से समस्या का समाधान नहीं होगा। इतिहास गवाह है कि जब तक मतपत्रों से चुनाव होते रहे, तब तक बूथ कैप्चरिंग, बैलेट बॉक्स की लूट और फर्जी वोटिंग जैसी गड़बड़ियों की शिकायतें आम थीं। यही वजह थी कि चुनाव प्रक्रिया को पारदर्शी और त्वरित बनाने के लिए ईवीएम की शुरूआत हुई थी। ने चुनावों की पारदर्शिता बढ़ाई है, मतगणना का समय घटाया है और खर्च कम किया है। बैलेट पेपर की ओर लौटने का अर्थ होगा–लंबी और खचीली प्रक्रिया, मानव संसाधन पर अतिरिक्त दबाव और गड़बड़ियों की बढ़ती संभावना।

– **सुभाष बुड़ावनवाला**, रतलाम

ट्रंप के विरोधाभासी बयान

दिलचस्प यह है कि जब ट्रंप से पत्रकारों ने भारत-अमेरिका संबंधों को लेकर सवाल पूछा तो उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को ह्लमहान नेताह्व और ह्लअच्छा मित्रह्व बताते हुए रिश्तों को मजबूत बताया। लेकिन इसी बातचीत में उन्होंने भारत की कुछ नीतियों पर असहमति भी जता दी। यह विरोधाभास ट्रंप की शैली का हिस्सा माना जाता है–जहां वे एक ओर दोस्ती की बात करते हैं और दूसरी ओर कठोर टिप्पणी भी कर देते हैं। भारत-अमेरिका संबंध पिछले दो दशकों से धीरे-धीरे एक रणनीतिक साझेदारी के रूप में विकसित हुए हैं। चाहे रक्षा सहयोग हो, तकनीकी आदान-प्रदान या एशिया-प्रशांत क्षेत्र की सुरक्षा, दोनों देशों ने साझा हितों पर काम किया है। लेकिन ट्रंप की असंगत टिप्पणियों ने इस साझेदारी पर बार-बार आंच डाली है। भारत जिस व्यापारिक मुद्दों पर अडिग है, वहां अमेरिका दबाव बनाने की कोशिश करता है, और यही टकराव अक्सर रिश्तों को तनावपूर्ण बना देता है। माना जा रहा है कि ट्रंप अपने कुछ सलाहकारों, खासकर पीटर नवारो जैसे आर्थिक रणनीतिकारों से प्रभावित होकर भारत के खिलाफ तीखे बयान देते हैं। ये लोग अमेरिका-चीन की प्रतिस्पर्धा को भारत के नजरिये से देखने के बजाय पूरी तरह अमेरिकी वर्चस्व की दृष्टि से आंकते हैं। परिणाम यह होता है कि ट्रंप का रवैया अस्थिर और असंतुलित दिखाई देता है।

– **विभूति बुपक्या**, दिल्ली विश्वविद्यालय

दोस्ती निभाने में विफल ट्रंप

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प भारतीय प्रधानमंत्री मोदी से अपनी दोस्ती निभाने के मामले में आज एक कमजोर कड़ी सिद्ध हुए हैं कारण नरेंद्र मोदी एवं डोनाल्ड ट्रम्प की शुरूआती दोस्ती को देखकर तो यही लग रहा था कि यह दोस्ती लम्बी रेस का घोड़ा सिद्ध होगी ,मगर ऐसा कतई सही साबित नहीं हुआ है कारण हमारे प्रधानमंत्री तो अपनी और से इस दोस्ती को मजबूत बनाने के लिए हमेशा ही हर तरह से प्रयास करते रहे हैं। पहले उन्होंने दोस्ती की शुरूआत में ट्रम्प को भारत आने की दावत दी एवं उनका यहां शानदार स्वागत भी किया एवं फिर बाद में ट्रम्प के बुलावे पर न केवल अमेरिका गये बल्कि वहां ट्रम्प के पहले राष्ट्रपति चुनाव के दौरान उनका जमकर प्रचार प्रसार भी किया था। परंतु लगता है कि अपने इस दूसरे कार्य काल में राष्ट्रपति बनने के बाद अब वे अपनी प्रधानमंत्री मोदी से हुई दोस्ती को भुल गए हैं एवं उनके साथ अनजान अजनबी की तरह का व्यवहार कर रहे हैं। कारण भारत में उनके दूसरी बार राष्ट्रपति बनने पर यही आशा की जा रही थी कि अब भारत एवं अमेरिका के साथ व्यापार व्यवसाय में काफी बढ़ोतरी होगी एवं दोनों की दोस्ती का ग्राफ भी बढ़ेगा । परन्तु ऐसा तो बिल्कुल भी नहीं दिख रहा है कारण ट्रम्प ने भारत पर ट्रम्प टैरिफ शुल्क काफी अधिक यानी पच्चीस से बड़ा कर डबल पचास पर्सेंट कर दिया है। अतः ट्रम्प के इस तरह के व्यवहार को आज सारा विश्व आश्चर्य से देख रहा है।

– **मनमोहन राजावत** , शाजापुर

कथित शांति दूत के कृत्य

जो आदमी खुद को शांति का दूत कहता है। जो आदमी 2025 के दुनिया में कई युद्धों को रुकवाने या युद्धविराम कराने का दावा करता है। जो आदमी खुद के लिए नोबल का शांति पुरस्कार पाने का सबसे बड़ा हकदार मानता है। क्या उसी आदमी के कार्यकाल में हमलोग तीसरा विश्व युद्ध का विभीषिका भी झेलेंगे ? अमेरिका का युद्ध विभाग 158 वर्षों तक अस्तित्व में रहा, 7 अगस्त, 1789 से 18 सितंबर, 1947 तक, जब 1947 के राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत, यह सेना विभाग और वायु सेना विभाग में विभाजित हो गया। 1949 में, राष्ट्रीय सैन्य प्रतिष्ठान का नाम बदलकर रक्षा विभाग कर दिया गया। उस दरमियान दुनिया को दो विश्व युद्ध झेलना पड़ा था। मगर 1947 में जबसे इसका नाम बदलकर ₹अमेरिकी रक्षा विभाग₹ रखा गया था। तबसे दुनिया में किसी तरह का विश्व युद्ध नहीं हुआ। मगर शुक्रवार को ट्रम्प ने कार्यकारी अध्यादेश पर हस्ताक्षर कर दिए हैं जिससे अब इसका नाम फिर 'युद्ध विभाग' हो गया है। व्हाइट हाउस के एक तथ्य पत्रक के अनुसार, यह आदेश रक्षा सचिव पीट हेगसेथ, रक्षा विभाग और अधीनस्थ अधिकारियों को आधिकारिक पत्राचार और सार्वजनिक संचार में 'युद्ध सचिव', 'युद्ध विभाग' और 'युद्ध उप सचिव' जैसे द्वितीयक पदों के नामों से अब जाना जाने लगा है।

– **जंग बहादुर सिंह**, जमशेदपुर

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 173

डेटा गुणवत्ता में सुधार

प्रस्तावित राष्ट्रीय औद्योगिक वर्गीकरण (एनआईसी-2025) उन्नयन भारतीय अर्थव्यवस्था की निगरानी में सुधार लाने में मदद करेगा। औद्योगिक वर्गीकरण पहली बार वर्ष 1962 में तैयार किया गया था और इसके बाद उसमें 1970, 1987, 1998, 2004 और 2008 में सुधार किया गया। यह राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) द्वारा विकसित एक मानकीकृत अंकीय प्रणाली है जो विभिन्न उद्योगों की गतिविधियों का वर्गीकरण करती है। एनआईसी कोड राष्ट्रीय लेखा आंकड़ों की गणना, सांख्यिकीय सर्वेक्षणों, निवेश के प्रवाह और नीति निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। हालांकि जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था डिजिटल सेवाओं, हरित ऊर्जा और गिग कार्यों की ओर बढ़ रही है, ऐसा लगता है कि पुरानी वर्गीकरण प्रणाली जल्दी ही अप्रासंगिक हो सकती है। वर्ष 2025 का मसौदा इस खाई को दूर करने का वादा करता है जिसमें ओटीटी प्लेटफॉर्म से लेकर इलेक्ट्रिक वाहन चार्जिंग स्टेशनों तक जैसे नवीनतम क्षेत्रों को स्पष्ट रूप से मान्यता दी गई है। यह क्यों मायने रखता है? साधारण सी बात है, इसलिए क्योंकि अगर कोड हकीकत को नहीं दर्शाते हैं तो यह जोखिम उत्पन्न हो जाता है कि शायद राष्ट्रीय लेखा पूरी आर्थिक गतिविधियों को पूरी तरह न दर्शा सकें। संभव है कि नए उद्योगों को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिल सके, जबकि पुराने उद्योग शायद उससे अधिक महत्त्वपूर्ण नजर आएं जितने कि वे वास्तव में हैं। इससे नीति-निर्माताओं के लिए ऐसी हालत बन सकती है जहां वे शायद सही तरीके से यह न जान सकें कि रोजगार कहां निर्मित हो रहे हैं और निवेश कहां आ रहा है।

एक ऐसा देश जो दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने जा रहा है और बहुत तेजी से विकसित हो रहा है, वहां सटीक वर्गीकरण आवश्यक है। यह इस बात को भी रेखांकित करता है कि परिवर्तन पर नजर रखने के लिए परिवारों के निरंतर सर्वेक्षण और संशोधन की आवश्यकता है ताकि बदलाव पर नजर रखी जा सके। कुछ आर्थिक संकेतकों के लिए एक लंबे अंतराल के बाद आधार वर्ष में बदलाव किया जा रहा है। हालांकि, वर्गीकरण की प्रक्रिया अपने आप में कई चुनौतियों से भरी हुई है। अतीत के साथ निरंतरता बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि शोधकर्ता अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक बदलावों को समझने के लिए दीर्घकालिक समय श्रृंखला डेटा पर निर्भर करते हैं। अगर कोडिंग की परंपराओं में अचानक बदलाव किया गया, तो ये प्रवृत्तियां धुंधली हो सकती हैं और देश के डेटा की अपने ही ऐतिहासिक रिकॉर्ड से तुलना करना कठिन हो जाएगा। इससे बचने के लिए, राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय को चाहिए कि वह स्पष्ट 'सामंजस्य तालिकाएं' प्रदान करे, जो यह दिखाएं कि पुराने कोड नए कोड से कैसे मेल खाते हैं, और जिन्हें शोधकर्ता आसानी से उपयोग कर सकें। तेजी से बढ़ती गिग अर्थव्यवस्था और अनौपचारिक अर्थव्यवस्था को सावधानीपूर्वक एकीकृत करने की आवश्यकता होगी। नीति आयोग का अनुमान है कि 2020-21 में इस क्षेत्र में 77 लाख कर्मचारी काम कर रहे थे लेकिन 2029-30 तक यह तीन गुना होकर 2.35 करोड़ हो जाएंगे। भारत में खाद्य आपूर्ति, फ्रीलांस सेवाएं और डिजिटल सूक्ष्म उद्यमिता आदि आय के खास स्रोत बन गए हैं-खासतौर पर युवा कर्मचारियों के लिए। इन गतिविधियों को सांख्यिकीय मूल ढांचे से बाहर रखने का जोखिम यह है कि इससे रोजगार और मूल्य संवर्धन दोनों का कम आकलन हो सकता है, जिससे संभावित रूप से नियामक स्तर पर भी खामियां उत्पन्न हो सकती हैं।

इसमें एक वैश्विक पहलू भी है। आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) का कहना है कि जिन देशों के पास आधुनिक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तुलनीय कोड होते हैं, वे अधिक निवेश आकर्षित करते हैं क्योंकि निवेशक आसानी से क्षेत्रीय डेटा को पढ़ और समझ सकते हैं। भारत के लिए, जैसा कि योजना बनाई गई है, एनआईसी-2025 को अंतरराष्ट्रीय औद्योगिक वर्गीकरण मानक के अनुरूप बनाना विश्वसनीयता और निवेशकों के विश्वास को बढ़ाने में मदद करेगा। अर्थव्यवस्था की समग्र निगरानी के संदर्भ में, वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) फाइलिंग और अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म से प्राप्त डेटा का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। नई प्रणाली भविष्य की ओर उन्मुख हो सकती है। जैसे कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस, पर्यावरण अनुकूल क्षेत्र की नौकरियां, और चक्रीय अर्थव्यवस्था जैसी गतिविधियों को शामिल करके। इसलिए, व्यापक संदर्भ में एनआईसी का उन्नयन करना अत्यंत आवश्यक है। एक तेजी से बदलती दुनिया में, खासकर तकनीक में हो रहे तीव्र बदलाव और उसके व्यापक उपयोग के कारण नीतियां और व्यवसाय तभी अनुकूल हो सकते हैं जब उन्हें सतत और मजबूत डेटा प्रवाह का समर्थन प्राप्त हो।

पंजाब के साथ खड़े होने का है वक्त

पंजाब बाढ़ की विभीषिका से जूझ रहा है। यह बीते कई दशकों में राज्य का कठिनतम समय है। ऐसे में स्वाभाविक है कि राज्य ने यह उम्मीद की होगी कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी वहां का दौरा करें।

राष्ट्र की बात
शेखर गुप्ता

एक सितंबर को थ्यानचिन से लौटने के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक ट्वीट करके अफगानिस्तान में आए भूकंप को लेकर दुख प्रकट किया। इस पर ज्ञानी हरप्रीत सिंह ने भी ट्वीट के जरिये प्रतिक्रिया दी। सिंह अकाल तख्त और तख्त श्री दमदमा साहिब गुरुद्वारा के पूर्व मुख्य पुजारी हैं। वह खुद को सिखों की धार्मिक राजनीति का दावेदार मानते हैं जो शिरोमणि अकाली दल द्वारा खतरनाक ढंग से विभाजित हो चुका है। इस राजनीतिक-धार्मिक निर्वात में ज्ञानी नवां (नए) अकाली दल के प्रमुख के रूप में अपनी जगह तलाश रहे हैं।

वह खुद को टूटे धड़े का नेता कहे जाने पर आपत्ति करते हैं। वह जोर देकर कहते हैं कि सुखबीर सिंह बादल का अकाली दल टूटा हुआ धड़ा है। इसके अलावा सिख राजनीति में तीसरी ताकत है अमृतपाल सिंह का शिरोमणि अकाली दल (वारिस पंजाब दे)। खतरनाक ताकतें खासकर पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी इंटर सर्विसेज इंटेलिजेंस (आईएसआई) इसका लाभ ले रही हैं।

वह अक्सर ट्वीट करते हैं और वह भी पंजाबी (गुरमुखी) में। अब उनके ट्वीट में बाढ़ की विभीषिका ही नजर आती है। नई दिल्ली का विरोध सिख धार्मिक राजनीति के केंद्र में है और ज्ञानी जी ने तुरंत अफगानिस्तान पर प्रधानमंत्री के ट्वीट को लपक लिया और लिखा, 'प्रधानमंत्री जी, यह अच्छी बात है कि आपने अफगानिस्तान से सहानुभूति जताई है लेकिन पंजाब भी देश का हिस्सा है। जहां करीब 1,500 गांव और 3,00,000 लोग 17 अगस्त से ही बुरी तरह प्रभावित हैं। आपका पंजाब पर ध्यान नहीं देना बहुत कष्टप्रद है।' इसके बाद उन्होंने प्रधानमंत्री को तीन पन्नों का खत लिखा और उसे अपने एक्स हैंडल पर शेयर कर दिया। अब हम जानते हैं कि प्रधानमंत्री ने वापस आते ही तत्काल पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान से बात की और हर प्रकार के सहयोग का वादा किया। केंद्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया। वह पैदल चले और कई बार घुटनों तक पानी में भी। परंतु पंजाबियों के लिए यह कोई सांत्वना नहीं है।

दशक के अपने सबसे कठिन समय में वह उम्मीद कर रहे होंगे कि प्रधानमंत्री वहां आएंगे। भले ही वह भारतीय जनता पार्टी से हैं, जिनके लिए आमतौर पर पंजाब के सिख मतदान नहीं करते। अगर प्रधानमंत्री पिता, बड़े भाई जैसे या सभी भारतीयों के लिए परिवार के मुखिया जैसे हैं तो वह क्यों नहीं आए? क्या हम पंजाबी (खासकर सिख) परिवार के सदस्य नहीं हैं? अगर उनके पास बिहार जाने का समय है तो वह पंजाब क्यों नहीं आ सकते? तीन कृषि कानूनों के समय जो अलगाव का भाव उत्पन्न हुआ था वह इससे बढ़ रहा है। सिख समुदाय के लिए यह दिल्ली के पुराने संदेहपूर्ण व्यवहार की ही पुष्टि है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिस तरह अब तक हमने 'आंखों से ओझल, दिल से दूर' की उपमा पूर्वोत्तर के संदर्भ में इस्तेमाल की है, वही उपमा अब एक ऐसे राज्य पर भी लागू होती दिख रही है जो भौगोलिक रूप से बेहद करीब है, राजनीतिक रूप से संवेदनशील है, और रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण भी। वरना प्रधानमंत्री लौटते ही सबसे पहले यहां आते। भाजपा जैसी चतुर पार्टी की इस समझ के आधार पर दो संभावित कारण हो सकते हैं। पहला यह कि पार्टी और प्रधानमंत्री उस राज्य और उसके सिख समुदाय से नाराज हैं, क्योंकि दिल्ली में कृषि कानूनों के खिलाफ जो आंदोलन हुआ था, उसमें मुख्य भूमिका इसी समुदाय की थी। वहीं विदेश में बसे कुछ सिखों द्वारा चलाए जा रहे अलगाववादी अभियानों ने इस पीड़ा को और बढ़ा दिया है।

तथ्य यह है कि उस समय भी केंद्र और राज्य (तब कांग्रेस) सरकारों के बीच संवाद और विश्वसनीयता की कमी वजह बनी थी। तब 'किसान नेता' हर तरफ से वहां आ गए। इनमें वैचारिक वाम, धार्मिक दक्षिण से लेकर अराजकतावादी तक सभी शामिल थे।

इसके चलते केंद्र से भारी नाराजगी हो गई। भाजपा में सबकुछ जीत लेने की मानसिकता है। वे हर उस राज्य में जीतना चाहते हैं जहां उनका कोई खास कद नहीं रहा। तमिलनाडु, तेलंगाना, केरल और पश्चिम बंगाल के उदाहरण हमारे सामने हैं। इन चारों राज्यों पर उसका खासा जोर था। असम, त्रिपुरा और मणिपुर में पार्टी दशकों तक संघ प्रचारकों की कड़ी मेहनत के बाद जीतने में कामयाब रही। लेकिन पंजाब क्यों नहीं?

पंजाब में भाजपा केवल एक बार सत्ता में रही और वह भी शिरोमणि अकाली दल के कनिष्ठ साझेदार के रूप में। यह कदम अटल बिहारी वाजेपयी ने 1990 के दशक में उठाया था। भाजपा के मौजूदा नेतृत्व ने पंजाब में अकेले चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। पार्टी को किसी सीट पर जीत तो नहीं मिली लेकिन उसका मत प्रतिशत 2022 के विधान सभा चुनाव के 6.6 फीसदी से तीन गुना होकर 2024 के लोक सभा चुनाव में 18.56 फीसदी हो गया। अकाली दल का मत प्रतिशत उससे कम यानी 13.2 फीसदी रहा। कांग्रेस और आम आदमी पार्टी दोनों को 26-26 प्रतिशत मत मिले।

भाजपा निरंतर चुनाव के लिए काम करने वाला दल है और उसके कमांडर सोच सकते हैं कि अगर सिखों के वोट शिरोमणि अकाली दल, कांग्रेस और कट्टरपंथियों में बंट गए और हिंदू मत एकजुट हो गए तो पार्टी सत्ता में आ सकती है। जिन जगहों पर मुस्लिम अल्पसंख्यक हैं वहां हिंदू-मुस्लिम ध्रुवीकरण करके चुनाव जीतना आसान है लेकिन पंजाब में यह संभव नहीं है। वहां सिख बहुसंख्यक हैं। पिछले लोक सभा चुनाव में भी अकाली दल का प्रदर्शन इतना खराब इसलिए रहा क्योंकि उसके आधे वोट यानी करीब 13 फीसदी वोट कट्टरपंथियों को चले गए।

चाहे किसी को पसंद हो या नहीं, पंजाब इस समय एक गंभीर समस्या का सामना कर रहा है। वह है कट्टरपंथियों की बढ़ती लोकप्रियता। यह स्थिति तब पैदा हुई है जब अकाली दल के प्रति लोगों का मोहभंग बढ़ रहा है और भाजपा को ध्रुवीकरण करने वाली पार्टी के रूप में देखा जा रहा है। अनेक नए यूट्यूब चैनल और सोशल मीडिया हैंडल दुष्प्रचार कर रहे हैं। वे चालाकी से यह संदेश दे रहे हैं कि मुस्लिम और सिख दोनों एकेश्वरवादी हैं इसलिए उनके बीच कोई वास्तविक समस्या नहीं है। असल दिक्कत हिंदुओं की वजह से है और सिखों को अलग ढंग से सोचने की आवश्यकता है। यह दुष्प्रचार पंजाबियत का भी कार्ड खेलता है। यानी साझा संस्कृति, भाषा, संगीत और सीमाओं के पार के सांस्कृतिक रिश्ते की।

मैंने इनमें से कई देखे हैं। इनमें से कई लोकप्रिय पॉडकास्ट कनाडा और ब्रिटेन के सिखों द्वारा संचालित हैं। वे बेहद दबे ढंग से राजनीति की बातें करते हैं। मैंने कनाडा से प्रसारित 66 मिनट का एक शो देखा जहां एंकर पाकिस्तानी वायुसेना के एक पुराने अधिकारी से ऑपरेशन सिंदूर के बारे में बात कर रहा था। इसमें भारतीय वायुसेना की खूब तारीफ की गई थी लेकिन साथ ही एक संदेश भी था कि पाकिस्तान की छोटी सी वायु सेना ने कहीं बेहतर प्रदर्शन किया। पंजाब में यह सब खूब देखा जा रहा है। आईएसआई और उसकी जनसंपर्क शाखा को सिख और पंजाब आसान शिकार नजर आ रहे हैं।

जो राष्ट्र अपने इतिहास से नहीं सीखता, उसे इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ती है। लगभग 60 वर्ष पहले मिजोरम (तब असम का लुशाई हिल्स जिला) में बांस के फूलों के कारण चूहों के जरिये भुखमरी की हालत बन गई थी। बांस के फूलों में मौजूद एल्कलॉइड ने चूहों को अत्यधिक प्रजननशील बना दिया और उन्होंने अनाज के सारे भंडार खा लिए, जिससे लोग भुखमरी का शिकार हो गए।

जब राज्य सरकार असहाय हो गई और केंद्र बहुत दूर था, तब ललडेंगा, जो अपनी बटालियन में समस्याओं के बाद सेना से निकाले गए थे, वे सामने आए और मिजोरम नेशनल फैमिन फ्रंट (एमएनएफएफ) की स्थापना की। यह संगठन 1966 की शुरुआत में मिजो नेशनल फ्रंट बन गया और अगले दो दशकों तक चीन और पाकिस्तान के सहयोग से उग्रवाद चलाता रहा।

भारत को वही गलती फिर नहीं दोहरानी चाहिए और इस बार यह पंजाब के संदर्भ में है। एक आपदा वास्तव में केंद्र सरकार, प्रधानमंत्री और उनकी पार्टी के लिए पंजाब के साथ खड़े होने का एक बड़ा अवसर है। राजनीतिक रूप से भाजपा के लिए यह एक अवसर है कि वे राज्य के साथ ऐसा रिश्ता बनाएं जैसा पहले कभी नहीं था। भारत की यह जिम्मेदारी है कि वह पंजाब और उसके लोगों के लिए हर संभव प्रयास करे। उनके स्नेह और योगदान के बिना भारतीय गणराज्य अकल्पनीय है।

बरकरार रहे मौद्रिक नीति का मौजूदा ढांचा

अर्थतंत्र
राजेश कुमार

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने मौद्रिक नीति ढांचे की समीक्षा पर एक परिचर्चा पत्र जारी कर अच्छा कदम उठाया है। इस परिचर्चा पत्र में चार प्रमुख बिंदुओं पर सुझाव मांगे गए हैं। लचीले मुद्रास्फीति लक्ष्य (एफआईटी) ढांचे को कानूनी शक्ल देने के लिए वर्ष 2016 में आरबीआई अधिनियम में संशोधन किया गया था। 'आर्थिक वृद्धि के लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करते हुए मूल्य स्थिरता बनाए रखने' का इस अधिनियम में आरबीआई को स्पष्ट निर्देश दिया गया है। इसके अनुसार आरबीआई से यह उम्मीद है कि वह उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (सीपीआई) आधारित मुद्रास्फीति दर 4 फीसदी पर नियंत्रित रखेगा। इसमें 2 फीसदी अंक घट-बढ़ हो सकती है। इस कानून के प्रावधानों के अनुसार केंद्र सरकार को आरबीआई के साथ मिलकर हर पांच वर्ष में एक बार मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारित करना है। वर्ष 2021 में इस लक्ष्य की समीक्षा की गई थी जिसमें इसे (4 फीसदी लक्ष्य) अपरिवर्तित छोड़ दिया गया था। यह लक्ष्य मार्च 2026 तक वैध है जिसे देखते हुए आरबीआई ने परिचर्चा पत्र जारी किया है।

एफआईटी हाल के दशकों के सबसे प्रमुख सुधारों में एक रहा है। एफआईटी ने केंद्रीय बैंक को एक स्पष्ट लक्ष्य दिया जिससे नीतिगत स्तर पर पारदर्शिता बढ़ गई और संवाद के आदान-प्रदान की प्रक्रिया भी काफी सुधर गई। इस ढांचे का एक अन्य महत्त्वपूर्ण तत्त्व मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) है। इस छह सदस्यीय समिति में गवर्नर सहित आरबीआई के तीन सदस्य और तीन बाहरी सदस्य होते हैं। एमपीसी मुद्रास्फीति का लक्ष्य हासिल करने एवं इसे स्थिर रखने के लिए नीतिगत रीपो दर का निर्धारण करती है।

यह ढांचा प्रभाव में आने के बाद न केवल नीति निर्धारण प्रक्रिया मजबूत हुई बल्कि इसमें और अधिक पारदर्शिता आ गई। पूर्व में जो व्यवस्था की गई थी उसमें मौद्रिक नीति पर आरबीआई गवर्नर निर्णय लेता था जिसकी अक्सर आलोचना होती थी और केंद्र सरकार के साथ केंद्रीय बैंक का टकराव बढ़ जाता था। अब तक जो आंकड़े सामने आए हैं उनके अनुसार एमपीसी ने आम सहमति के बजाय वैचारिक असहमति वाले फैसले अधिक किए हैं। यह एक स्वस्थ संकेत हैं और इस प्रक्रिया की मजबूती को दर्शाता है। एमपीसी की बैठक में सदस्यों के विचार भी बाद में सार्वजनिक किए जाते हैं। इस तरह, एफआईटी ढांचा पूर्व से चली आ रही व्यवस्था की तुलना में काफी मजबूत है। पहले आरबीआई को अक्सर विभिन्न उद्देश्यों के लिए एक मात्र जरिया यानी नीतिगत दरों का इस्तेमाल करते देखा जाता था।

एफआईटी व्यवस्था पिछले लगभग नौ वर्षों से प्रभाव में है। इस अवधि के दौरान औसत मुद्रास्फीति दर 4.9 फीसदी रही है जबकि पुरानी व्यवस्था (मौजूदा सीपीआई सीरीज) में यह 6.8 फीसदी थी। इस अवधि के दौरान मुद्रास्फीति में उतार-चढ़ाव काफी हद तक कम हो गया है। उल्लेखनीय है कि कोविड महामारी के बाद विभिन्न कारणों से भारत सहित दुनिया में मुद्रास्फीति दर काफी बढ़ गई है। कुल मिलाकर, इस ढांचे को जारी रखने पर कोई बड़ी चर्चा नहीं हो रही है। वास्तव में एक बार अमल में आने के बाद किसी भी बड़े देश ने मुद्रास्फीति नियंत्रण लक्ष्य की व्यवस्था अब तक समाप्त नहीं की है।

परिचर्चा पत्र में चार महत्त्वपूर्ण सवाल उठाए गए हैं। पहला, क्या हेडलाइन यानी समग्र या कोर यानी मुख्य मुद्रास्फीति मौद्रिक नीति तय करने का सबसे बड़ा आधार है? दूसरा, क्या 4 फीसदी मुद्रास्फीति दर का लक्ष्य अनुकूल है? तीसरा, क्या 2 फीसदी की घट-बढ़ का दायरा संशोधित किया जाना चाहिए? चौथा, क्या मुद्रास्फीति लक्ष्य एक स्तर न होकर एक दायरे के रूप में निर्धारित किया जाना चाहिए? यह देखना दिलचस्प होगा कि आरबीआई को किस तरह के सुझाव मिलते हैं। तकनीकी तौर पर बात करें तो केवल मुद्रास्फीति लक्ष्य की समीक्षा होनी है। किसी अन्य बदलाव के लिए आरबीआई अधिनियम में बदलाव करना होगा। जो भी हो, परिचर्चा पत्र में उठाए गए प्रश्न विचारणीय हैं।

यह ढांचा अपनाए जाने के बाद मुख्य या समग्र मुद्रास्फीति को आधार बनाए जाने का मुद्दा सिर उठाता रहा है। उदाहरण के लिए वित्त वर्ष 2023-24 की आर्थिक समीक्षा में कहा गया कि आपूर्ति से जुड़ी बाधाओं के कारण उत्पन्न मुद्रास्फीति से निपटने के लिए लघु अवधि की मौद्रिक नीति का इस्तेमाल करना जोखिम भरा हो सकता है। जैसा कि आरबीआई के शीर्ष अधिकारियों सहित कई लोग कहते रहे हैं कि आम जनता की नजर में वस्तुओं की कीमतों में कुल बढ़ोतरी मायने रखती है और इसे लेकर उनके अनुमान समग्र मुद्रास्फीति दर से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए उपभोग बास्केट से खाद्य पदार्थों को हटाने से (जो खपत बास्केट में लगभग 46 फीसदी हिस्सेदारी रखते हैं) नीतिगत विश्वसनीयता का महत्त्व कम हो सकता है। सीपीआई में खाद्य पदार्थों के भार को देखते हुए सरकार भी आपूर्ति से जुड़े व्यवधान दूर करने के लिए अक्सर हस्तक्षेप करती है, हालांकि ऐसे हस्तक्षेपों के दूसरे परिणाम भी सामने आते हैं। इसके अलावा युगांडा के अलावा अन्य सभी देशों में मुद्रास्फीति को लक्ष्य बनाने वाले केंद्रीय बैंक समग्र मुद्रास्फीति दर पर विचार करते हैं। लिहाजा, समग्र मुद्रास्फीति दर के साथ आगे बढ़ने के मजबूत कारण मौजूद हैं।

इसी तरह, 4 फीसदी मुद्रास्फीति लक्ष्य और 2 फीसदी अंक घट-बढ़ की गुंजाइश का चयन सावधानीपूर्वक किए गए विश्लेषण और व्यावहारिक आंकड़ों के आधार पर किया गया था। जब तक अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं में कोई स्पष्ट बदलाव नहीं होता है तब तक लक्ष्य और सहनशीलता दायरा दोनों जारी रखना युक्तिसंगत माना जाएगा। आरबीआई के एक शोध के अनुसार भारत के लिए 4 फीसदी मुद्रास्फीति दर उपयुक्त है। जैसा कि परिचर्चा पत्र में उल्लेख किया गया है, समय के साथ कुछ देशों ने सहनशीलता का दायरा घटा दिया है। भविष्य में उपयुक्त समय पर नीतिगत ढांचे में अधिक निश्चितता लाने के लिए यह दायरा कम करना आवश्यक होगा।

फिलहाल सीपीआई में खाद्य पदार्थों की बड़ी हिस्सेदारी देखते हुए मौजूदा सहनशीलता दायरे को जारी रखना ही बुद्धिमानी होगी। जैसे-जैसे समग्र आर्थिक विकास के साथ उपभोग बास्केट में खाद्य पदार्थों की उपस्थिति कम होती जाएगी मुद्रास्फीति से जुड़े पहलुओं में अस्थिरता कम हो जाएगी। एक नई सीपीआई श्रृंखला अगले साल की शुरुआत में शुरू होने की उम्मीद है। एक निश्चित लक्ष्य के बजाय एक दायरा तय करने से नीति निर्धारण और इसका संचार दोनों से जुड़ी चुनौतियां पैदा हो सकती हैं जिससे विश्वसनीयता को चोट पहुंच सकती है। लिहाजा, इस समय एफआईटी ढांचे में बदलाव के लिए कोई ठोस एवं आवश्यक कारण मौजूद नहीं है। फिलहाल इस व्यवस्था के साथ बने रहने से तेजी से बदल रहे आर्थिक हालात में नीतिगत निश्चितता भी सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी।

आपका पक्ष

नई शिक्षा नीति और सरकारी स्कूलों की दशा

आज भी देश के लगभग 56 फीसदी बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ते हैं। केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय और पीएमश्री जैसे स्कूल अपनी गुणवत्ता और साख से पहचाने जाते हैं। लेकिन अधिकांश सरकारी स्कूलों की स्थिति संतोषजनक नहीं है। इन स्कूलों में शिक्षकों की स्थिति और भी गंभीर है। सरकारी शिक्षक जहां 50,000 रुपये से अधिक मासिक वेतन पाते हैं, वहीं निजी स्कूलों में यही काम करने वाले शिक्षक औसतन 15,000 रुपये पर काम कर रहे हैं। कई संविदा शिक्षक तो 300 रुपये प्रतिदिन पर शिक्षा दे रहे हैं, जबकि मजदूर की दिहाड़ी 500 रुपये तक पहुंच चुकी है। यह असमानता दर्शाती है कि समस्या संसाधनों की कमी से ज्यादा कार्यसंस्कृति और जवाबदेही में है। जापान में शिक्षकों ने समय-पालन, आत्मसम्मान और उत्तरदायित्व को अपनाकर राष्ट्र का पुनर्निर्माण किया। उन्हें यह एहसास दिलाया गया कि वे ही भविष्य निर्माता हैं। नतीजा यह है कि आज जापानी समाज समय और अनुशासन का प्रतीक है। देश में नई शिक्षा नीति (एनईपी 2020) ने भी शिक्षकों की भूमिका को केंद्र में रखा है। इसमें स्पष्ट कहा गया है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए शिक्षक प्रशिक्षण, डिजिटल लर्निंग, नवाचार और लोकल से ग्लोबल सोच को बढ़ावा देना जरूरी है। अगर शिक्षक इन सुधारों को अपनाएं तो बच्चों में न केवल ज्ञान, बल्कि मूल्य और नेतृत्व क्षमता भी विकसित होगी। अध्यापकों का सम्मान केवल समाज से नहीं, बल्कि उनके अपने आचरण और प्रयासों से भी जुड़ा है। अगर वे आदर्श कार्यसंस्कृति अपनाएं, समय पर विद्यालय पहुंचें और बच्चों में नैतिकता तथा मानवीय मूल्यों का संचार करें, तो यही संस्कार आगे चलकर प्रशासन, उद्योग और समाज की जड़ों तक दिखाई देंगे। अतः राष्ट्र निर्माण में अध्यापक की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण है। अगर वे अपनी साख को अनुकरणीय आचरण से मजबूत बनाएं और नई शिक्षा नीति की दिशा को व्यवहार में उतारें, तो भारत के भविष्य को नई ऊंचाइयां मिलनी तय है।

विभूति बुपक्या, दिल्ली

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए शिक्षक प्रशिक्षण, डिजिटल लर्निंग, नवाचार और लोकल से ग्लोबल सोच को बढ़ावा देना जरूरी है

ट्रंप शुल्क के बाद चीन से सुधरते रिश्ते

अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने भारत पर 50 फीसदी व्यापार शुल्क लगाया जिसके जवाब में भारत ने अपने विकल्पों को खुला रखा तथा हाल में एससीओ की बैठक में चीन से अपने कारोबारी रिश्ते में सुधार की पहल की। भारत और चीन के बीच सीमा विवाद चल रहा है और दोनों देश इस विवाद को सुलझाने में प्रयासरत हैं। ट्रंप के चीन और भारत पर लगाए गए शुल्क के बाद दोनों देश मिल कर ट्रंप को जवाब देने में जुट गए हैं। चीन के थ्यानचिन में हाल में हुई एससीओ की बैठक में रूस के राष्ट्रपति व्लादीमिर पुतिन और चीन के राष्ट्रपति शी चिनफिंग से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मुलाकात की। तीनों की मुलाकात की तस्वीर ट्रंप शुल्क का करारा जवाब है। अमेरिका अपनी मनमानी नहीं कर सकता और धीरे-धीरे उन्हें यह समझ में आने लगेगा कि उनका फैसला अमेरिका को गर्त में ले जाएगा।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

शिकागो में अप्रवासी एवं शरणार्थी अधिकारों के लिए गठबंधन से जुड़े लोगों ने 'शिकागो कहता है ट्रंप नहीं, सैनिक नहीं' (शिकागो सेज नो ट्रंप नो ट्रूप्स) का नारा लगाते हुए विरोध प्रदर्शन किया।

रोल और खामियां

ईसीआई को अपनी प्रणालीगत खामियों को सुधारने में सक्रिय होना चाहिए

टी बिहार में मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) ने चिंताएँ बढ़ा दी हैं, क्योंकि कुछ क्षेत्रों में जनसांख्यिकीय पैटर्न और सांख्यिकीय अपेक्षाओं के विपरीत नाम हटाए गए हैं। विपक्ष ने देश भर में मतदाता सूचियों में गंभीर समस्याओं का दावा किया है, लेकिन अभी तक किसी भी राजनीतिक दल को लाभ पहुँचाने के लिए धोखाधड़ी से छेड़छाड़ का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। हालाँकि, कर्नाटक के अलंद निर्वाचन क्षेत्र से मिली जानकारियाँ खतरे की घंटी बजा सकती हैं। अधिकारियों ने शरारती तत्वों द्वारा भेजे गए हज़ारों फॉर्म-7 आवेदनों का पता लगाया है, जिनमें से अधिकांश वैध मतदाताओं के नाम सूची से हटाने के लिए डिज़ाइन किए गए थे। यह समय पर हस्तक्षेप भी भारत के चुनाव आयोग (ईसीआई) की पहल के बजाय स्थानीय राजनीतिक नेताओं की तत्परता से संभव हो पाया।

एक स्वतंत्र जाँच, जिसने पुष्टि की कि आवेदन फर्जी थे, अब स्थगित हो गई है क्योंकि चुनाव आयोग ने तकनीकी रिकॉर्ड तक पहुँच देने से इनकार कर दिया है, जिसके बिना पूरा रिकॉर्ड गतिशील आईपी एड्रेस और डिस्पोजेबल फ़ोन नंबरों के धुंध में खो जाता है। बिहार एसआईआर और अलंद दो मुद्दों से एकजुट हैं: सत्यापन योग्य विवरणों का अभाव और चुनाव आयोग का सक्रिय रुख के बजाय प्रतिक्रियात्मक रुख। अलंद में, जाँच का भाग्य अब उस चुनाव निकाय के विवेक पर निर्भर करता है जिसकी प्रणालियों से समझौता किया गया था। बिहार में, चुनाव आयोग ने नामों और हटाने के कारणों को उस रूप में जारी नहीं किया जिससे बाहरी सत्यापन की अनुमति मिलती, जब तक कि सर्वोच्च न्यायालय ने उसे ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया।

सामाजिक चुनाव आयोग के दावों की स्वतंत्र जाँच की अनुमति देने वाले तंत्रों का अभाव वह दोष रेखा है जिसके साथ राजनीतिक दलों और चुनाव आयोग के बीच विश्वास का घाटा बढ़ा है। पार्टियों के लिए, मतदाता सूचियों में हर बदलाव चुनावी मैदान को बदल देता है। हालाँकि बिहार में कई निर्वाचन क्षेत्रों में कांटे की टक्कर है, अलंड में पिछले चुनाव में 700 से कम मतों के अंतर से जीत ने 2023 में लगभग 6,000 मतदाताओं के फर्जी नाम हटाने के प्रयास को पहले ही राजनीतिक रूप से आरोपित कर दिया है। जब स्पष्टीकरण आंशिक होते हैं या उन्हें बड़ी मेहनत से निकालना पड़ता है, तो आसानी से उपलब्ध आंकड़ों से सुलझाए जा सकने वाले विवादों के पक्षपात के दावों की पुष्टि करना मुश्किल हो सकता है। तब से बिहार में न्यायिक हस्तक्षेप केंद्रीय हो गया है, जो निवारण की सुविधा प्रदान करता है, लेकिन यह भी उजागर करता है कि आदेश मिलने तक आवश्यक कदम नहीं उठाए गए थे। खुलासे सुनिश्चित करने के लिए अदालतों पर निर्भर रहना अधिकार संतुलन को बदल देता है और चुनाव आयोग की प्रक्रियाओं को सवालों के घेरे में छोड़ देता है। प्रत्येक मामले को तकनीकी विफलताओं या प्रशासनिक चूकों से समझाया जा सकता है, लेकिन कुल मिलाकर ये दर्शाते हैं कि कैसे सत्यापन योग्य साक्ष्यों का अभाव परिचालन संबंधी चिंताओं को प्रणालीगत संदेह में बदल देता है। इन चिंताओं को दूर करने की ज़िम्मेदारी पूरी तरह से चुनाव आयोग पर है। इस उद्देश्य से, एक और न्यायिक हस्तक्षेप की प्रतीक्षा करने के बजाय, आयोग को अलंद के आरोपों को गंभीरता से लेना चाहिए और जाँच में सहायता करनी चाहिए। उसे फॉर्म-7 के दुरुपयोग को रोकने के लिए भी कदम उठाने चाहिए, खासकर प्रॉक्सी द्वारा मतदाताओं के नाम हटाने को रोकने के लिए।

शान से सफ़ेद बाल

बदलती जनसंख्या गतिशीलता के लिए सरकारों को अपनी नीतियों में बदलाव की ज़रूरत है। अगर भारत में जनसांख्यिकीय बदलाव को लेकर

मैं कोई संदेह था, तो नमूना पंजीकरण प्रणाली (एसआरएस) की सांख्यिकीय रिपोर्ट से इसकी पुष्टि हुई, जिसमें देश की अशोधित जन्म दर (सीबीआर) और कुल प्रजनन दर में गिरावट का संकेत दिया गया है। 2023 के एसआरएस आंकड़ों के अनुसार, भारत की सीबीआर, जिसे प्रति 1,000 लोगों पर वार्षिक जीवित जन्मों की संख्या के रूप में परिभाषित किया जाता है, घटकर 18.4 रह गई है, जो 2022 में 19.1 थी।

देश का टीएफआर भी 2021 और 2022 में 2.0 पर मँडराते हुए 1.9 पर आ गया था। टीएफआर उस पीढ़ी को बदलने के लिए एक महिला द्वारा अपने जीवनकाल में पैदा किए जाने वाले बच्चों की औसत संख्या को इंगित करता है, और प्रति महिला 2.1 जन्मों का टीएफआर प्रतिस्थापन-स्तर प्रजनन क्षमता माना जाता है, जो समय के साथ एक स्थिर जनसंख्या में तब्दील होता है। 2.1 से अधिक का कोई भी आंकड़ा बढ़ती जनसंख्या का सुझाव देता है जबकि 2.1 से नीचे की दरें जनसंख्या में गिरावट और उम्र बढ़ने की स्पष्ट प्रवृत्ति को दर्शाती हैं। बेशक, हमेशा की तरह, इस आकार और विविधता वाले देश के लिए, व्यापक क्षेत्रीय अंतर थे। उच्चतम सीबीआर बिहार में 25.8 था, और सबसे कम तमिलनाडु में 12 था। बिहार ने भी उच्चतम टीएफआर (2.8) और दिल्ली ने सबसे कम (1.2) की सूचना दी। अठारह राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में प्रतिस्थापन स्तर से नीचे टीएफआर था

दिल्ली के बाद, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और महाराष्ट्र में भी कुल जन्म दर 2.0 से कम है। साथ ही, इस जनसांख्यिकीय बदलाव से जैसी उम्मीद थी, एसआरएस के आंकड़ों से पता चला कि 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगों का अनुपात एक वर्ष में 0.7 प्रतिशत अंक बढ़कर 9.7% हो गया। केरल में वृद्ध जनसंख्या का अनुपात सबसे अधिक, 15% है, जबकि असम, दिल्ली और झारखंड में 60 वर्ष से अधिक आयु की जनसंख्या का अनुपात सबसे कम है।

दीवार पर लिखी इबारत से मुँह मोड़ना मूर्खता होगी। 1.46 अरब से ज़्यादा लोगों की आबादी वाले सबसे ज़्यादा आबादी वाले देश के तौर पर, मौजूदा घटती प्रवृत्ति का आबादी पर असर दिखने में कई साल लगेंगे। हालाँकि, इसमें कोई शक नहीं कि इतने सालों में कम से कम सैद्धांतिक रूप से 'और ज़्यादा' के लिए तैयार रहने वाले इस देश को अब एक अलग भविष्य के लिए तैयारी करनी चाहिए, साथ ही अपेक्षाकृत युवा कार्यबल की बदौलत अभी भी मौजूद जनसांख्यिकीय लाभांश का लाभ उठाना जारी रखना चाहिए। एक बूढ़ा होता देश अपनी चिंताओं और ज़रूरतों के साथ आएगा—कम गतिशीलता वाले लोगों के लिए वित्तीय, सार्वभौमिक पहुँच, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सेवाएँ और सामाजिक सहायता सेवाएँ। आखिरकार, एक 'युवा' देश को बढ़ती बुज़ुर्ग आबादी की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर पुनर्गठन की ज़रूरत होगी।

निकोबार में पारिस्थितिक आपदा का निर्माण

सोनिया गांधी

अध्यक्ष हैं,
कांग्रेस
संसदीय दल

टी पिछले 11 वर्षों में अधूरे और बिना सोचे-समझे नीति-निर्माण की कोई कमी नहीं रही है। इस सुनियोजित कुप्रयासों की श्रृंखला में नवीनतम है ग्रेट निकोबार मेगा-इंफ्रास्ट्रक्चर परियोजना। ₹72,000 करोड़ का यह पूरी तरह से बेतरतीब खर्च द्वीप के मूल आदिवासी समुदायों के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा करता है, दुनिया के सबसे अनोखे वन और जीव-जंतुओं के पारिस्थितिकी तंत्रों में से एक के लिए ख़तरा है, और प्राकृतिक आपदाओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। फिर भी, इसे असंवेदनशीलता से आगे बढ़ाया जा रहा है, जिससे सभी कानूनी और विचार-विमर्श प्रक्रियाओं का मज़ाक उड़ाया जा रहा है।

आदिवासियों का विस्थापन महान
निकोबार द्वीप दो मूल समुदायों, निकोबारी जनजाति और शोम्पेन जनजाति (एक विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह) का घर है। निकोबारी आदिवासियों के पैतृक गाँव इस परियोजना के प्रस्तावित भू-क्षेत्र में आते हैं। 2004 में हिंद महासागर में आई सुनामी के दौरान निकोबारी लोगों को अपने गाँव छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा था। यह परियोजना अब इस समुदाय को स्थायी रूप से विस्थापित कर देगी, जिससे उनके अपने पैतृक गाँवों में लौटने का सपना टूट जाएगा।

शोम्पेन को और भी बड़े खतरे का सामना करना पड़ रहा है। केंद्रीय जनजातीय मामलों के मंत्रालय द्वारा उल्लिखित द्वीप की शोम्पेन नीति, अधिकारियों से "बड़े पैमाने पर विकास प्रस्तावों" पर विचार करते समय जनजाति के कल्याण और "अखंडता" को प्राथमिकता देने की विशेष रूप से अपेक्षा करती है। इसके बजाय, यह परियोजना शोम्पेन जनजातीय अभ्यारण्य के एक बड़े हिस्से को प्रभावित करती है, शोम्पेन जनजाति के निवास स्थान वाले वन पारिस्थितिकी तंत्र को नष्ट करती है, और द्वीप पर बड़े पैमाने पर लोगों और पर्यटकों की आमद का कारण बनेगी। अंततः, शोम्पेन अपनी पैतृक भूमि से कट जाएँगे और अपने सामाजिक और आर्थिक अस्तित्व को बनाए रखने में असमर्थ हो जाएँगे। फिर भी, सरकार हठधर्मिता और अड़ियल रवैये पर अड़ी हुई है।

संवैधानिक और वैधानिक निकायों की स्थापना
इस पूरी प्रक्रिया में आदिवासी अधिकारों के संरक्षण के लिए उठाए गए कदमों को नज़रअंदाज़ किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 338-ए के अनुसार, सरकार को राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग से परामर्श करना चाहिए था। वह ऐसा करने में विफल रही है। सरकार को ग्रेट निकोबार और लिटिल निकोबार द्वीप समूह की जनजातीय परिषद से परामर्श करना चाहिए था। इसके बजाय, परिषद के अध्यक्ष की इस दलील को नज़रअंदाज़ कर दिया गया है कि निकोबारी आदिवासियों को उनके पैतृक गाँवों में लौटने की अनुमति दी जाए।

महान
निकोबार द्वीप
यह परियोजना एक गंभीर दुस्साहस है, जो जनजातीय अधिकारों को कुचल रही है तथा कानूनी और विचार-विमर्शपूर्ण नीतियों का मजाक उड़ा रही है।

प्रक्रियाओं

परिषद से अनापत्ति पत्र प्राप्त कर लिया गया था, लेकिन अब इसे रद्द कर दिया गया है, परिषद ने कहा है कि प्राधिकारियों ने उन्हें पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए "जल्दबाजी" की थी।

स्थानीय समुदायों की सुरक्षा के लिए स्थापित उचित प्रक्रिया और विनियामक सुरक्षा उपायों की अनदेखी की गई है।
भूमि अधिग्रहण, पुनर्वासन और पुनर्स्थापन में उचित मुआवज़ा और पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम, 2013 के तहत किए गए सामाजिक प्रभाव आकलन (एसआईए) में निकोबारी और शोम्पेन को इस प्रक्रिया के हितधारक मानकर परियोजना के उन पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन किया जाना चाहिए था। इसके बजाय, इसमें उनका कोई भी ज़िक्र नहीं है। वन अधिकार अधिनियम (2006), जो शोम्पेन को वनों की सुरक्षा, संरक्षण, विनियमन और प्रबंधन का अधिकार देता है, को किसी भी नीतिगत कार्रवाई का आधार होना चाहिए था। इसके बजाय, इस मुद्दे पर शोम्पेन से परामर्श नहीं किया गया है - एक तथ्य जिसकी पुष्टि अब जनजातीय परिषद ने भी की है। देश के कानूनों का जमकर मज़ाक उड़ाया जा रहा है।

अनजाने में, देश के सबसे कमजोर समूहों में से एक को इसकी अंतिम कीमत चुकानी पड़ सकती है।

प्रतिपूरक वनरोपण का प्रहसन पारिस्थितिक दृष्टि से, यह परियोजना एक पर्यावरणीय और मानवीय आपदा से कम नहीं है।

इस परियोजना के लिए द्वीप की अनुमानित 15% भूमि पर पेड़ों को काटना पड़ेगा, जिससे राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर अद्वितीय वर्षावन पारिस्थितिकी तंत्र नष्ट हो जाएगा। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय का अनुमान है कि 8.5 लाख पेड़ काटे जा सकते हैं। यह एक निराशाजनक आंकड़ा है, लेकिन यह एक बहुत ही कम आँकड़ा भी हो सकता है - स्वतंत्र अनुमानों के अनुसार अंततः 32 लाख से 58 लाख पेड़ काटे जा सकते हैं।

सरकार का इस समस्या का समाधान
अंधाधुंध वृक्षारोपण की भावना 'प्रतिपूरक वनरोपण' की है, जो प्राकृतिक, पुराने वनों के नुकसान का एक बहुत ही खराब विकल्प है। अस्पष्ट रूप से, नियोजित वनरोपण हरियाणा में है, जो हजारों किलोमीटर दूर है, और एक बिल्कुल अलग पारिस्थितिकी वाला राज्य है। एक हास्यास्पद त्रासदी में, वनरोपण के लिए नियोजित इस भूमि का एक-चौथाई हिस्सा अब हरियाणा सरकार द्वारा खनन के लिए नीलाम कर दिया गया है। किसी भी स्थिति में, प्रतिपूरक वनरोपण अपराधबोध को शांत करने में मदद कर सकता है, लेकिन यह किसी भी तरह से वनरोपण का विकल्प नहीं है।

बहु-प्रजातियों वाले, जैव विविधता से भरपूर प्राकृतिक वनों का विनाश। नियोजित बंदरगाह स्थल भी विवादास्पद है क्योंकि इसका कुछ भाग तटीय विनियमन क्षेत्र (सीआरजेड) 1ए के अंतर्गत आता है। कछुओं के घोंसले बनाने वाले स्थानों और प्रवाल भित्तियों की उपस्थिति के कारण सीआरजेड 1ए क्षेत्रों में बंदरगाह निर्माण निषिद्ध है।

इसकी पुष्टि करने वाले प्रचुर प्रमाणों, जिनमें राष्ट्रीय हरित अधिकरण का आदेश भी शामिल है, के बावजूद सरकार ने एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति (एचपीसी) के माध्यम से इस सच्चाई को तोड़-मरोड़ कर पेश करने के तरीके खोज निकाले हैं। इस एचपीसी की रिपोर्ट और बंदरगाह स्थल को सीआरजेड 1ए से बाहर करने के लिए उसके द्वारा की गई जमीनी हकीकत की जाँच-पड़ताल को सार्वजनिक नहीं किया गया है।

कार्यप्रणाली में खामियाँ वन्यजीवों के दृष्टिकोण
से भी, यह परियोजना गंभीर चिंताएँ पैदा करती है। प्राइमेटोलॉजिस्टों ने सरकार को पत्र लिखकर निकोबार के लंबी पूंछ वाले मकाक पर इस परियोजना के प्रभाव के बारे में गंभीर चिंताएँ व्यक्त की हैं। इन चिंताओं को नज़रअंदाज़ कर दिया गया है।

परियोजनाओं के लिए जैव विविधता आकलन महत्वपूर्ण कार्यप्रणाली संबंधी सवालों के घेरे में आ गए हैं। समुद्री कछुओं के घोंसले बनाने के स्थानों का आकलन घोंसले बनाने के मौसम में किया गया था। परियोजना के डुगोंग पर प्रभाव का आकलन करने के लिए ड्रोन का इस्तेमाल किया गया था, लेकिन इन ड्रोन की क्षमता सीमित है और ये केवल उथले क्षेत्रों का ही आकलन कर सकते हैं। इस बात के प्रमाण सामने आए हैं कि संस्थानों को ये आकलन बेहद असामान्य परिस्थितियों में, लगभग दबाव में, करने के लिए मजबूर किया गया था।

अंत में, यह परियोजना – जिसमें बंदरगाह भी शामिल है – भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील और संवेदनशील क्षेत्र में बन रही है। दिसंबर 2004 की सुनामी में लगभग 15 फीट ज़मीन का स्थायी धंसाव हुआ था।

जुलाई 2025 में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में आया 6.2 तीव्रता का भूकंप हमें इस सतत खतरे की याद दिलाता है। यहाँ इतनी बड़ी परियोजना को जानबूझकर स्थापित करना निवेश, बुनियादी ढाँचे, लोगों और पारिस्थितिकी को खतरे में डालना है।

हमारा सामूहिक विवेक ऐसा नहीं कर सकता, और ऐसा होना भी चाहिए नहीं, जब शोम्पेन और निकोबारी जनजातियों का अस्तित्व ही दांव पर हो, तो चुप रहना उचित नहीं है। भावी पीढ़ियों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता, एक अत्यंत विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र के इतने बड़े पैमाने पर विनाश की अनुमति नहीं दे सकती। हमें न्याय के इस उपहास और हमारे राष्ट्रीय मूल्यों के साथ इस विश्वासघात के विरुद्ध आवाज़ उठानी होगी।

भारत की एफडीआई कहानी में एक जटिल मोड़

Amarbahadur यादव

अर्थशास्त्र के सहायक प्रोफ़ेसर हैं,

ज़ाकिर हुसैन दिल्ली
कॉलेज (शाम),
दिल्ली विश्वविद्यालय

एफ प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) एक प्रमुख योगदान कारक बना हुआ है।
1991 के आर्थिक सुधारों के बाद से निवेश की पहली लहर शुरू होने के बाद से भारत का आर्थिक परिदृश्य बदल गया है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) ने भारत के औद्योगिक आधार के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे तकनीकी नवाचार को बढ़ावा मिला है और देश वैश्विक बाजारों के साथ और भी गहराई से जुड़ पाया है।

ई-कॉमर्स तथा कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर क्षेत्र दो ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें भारी मात्रा में एफडीआई आया, जिससे इन क्षेत्रों में व्यापक बदलाव आया।

हालाँकि, हालिया रुझान एक जटिल मोड़ की ओर इशारा करते हैं क्योंकि निवेश में गिरावट आ रही है। हालाँकि भारत अभी भी विदेशी पूंजी आकर्षित करने में सक्षम है, लेकिन इन निवेशों का मुख्य लक्ष्य दीर्घकालिक औद्योगिक विकास के बजाय अल्पकालिक लाभ प्राप्त करना रहा है। साथ ही, भारतीय कंपनियाँ विदेशों में भारी निवेश कर रही हैं, जिससे घरेलू निवेश माहौल की सेहत पर सवाल उठ रहे हैं।

निवेश और बहिर्गमन के बीच अंतर हाल के आंकड़े उत्साहजनक लग सकते हैं। वित्त वर्ष 2024-25 में सकल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 81 अरब डॉलर तक पहुँच गया, जो पिछले वर्ष की तुलना में 13.7% अधिक है। 2011 और 2021 के बीच, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 46.6 अरब डॉलर से बढ़कर 84.8 अरब डॉलर हो गया, जिसने भारत के निवेशकों के आकर्षण को उजागर किया। वित्त वर्ष 2021-22 में चरम पर पहुँचने के बाद, वित्त वर्ष 2023-24 में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 71 अरब डॉलर तक गिर गया, और फिर थोड़ा सुधार हुआ। कोविड-19 महामारी के बाद के चार वर्षों में, सकल निवेश 0.3% की वार्षिक दर से बढ़ा, जबकि विदेशी निवेशकों द्वारा विनिवेश और प्रत्यावर्तन 18.9% वार्षिक दर से बढ़ा।

निवेश और बहिर्प्रवाह के बीच यह अंतर गहरा है। हालाँकि महामारी के बाद की अवधि में भारत में सकल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 308.5 अरब डॉलर रहा, लेकिन विदेशी निवेशकों ने 153.9 अरब डॉलर की निकासी या प्रत्यावर्तन भी किया। इससे भी ज़्यादा चौंकाने वाली बात है शुद्ध प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में गिरावट - सकल निवेश में से प्रत्यावर्तन और ऋण चुकौती को घटाकर - जो वित्त वर्ष 2021-22 से वित्त वर्ष 2024-25 तक तेज़ी से घटी।

भारतीय कंपनियों द्वारा किए गए बाहरी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) को समायोजित करने के बाद, भारत में शुद्ध अवशिष्ट पूंजी घटकर 0.4 अरब डॉलर रह गई, जो चिंताजनक है। इस प्रकार, बड़ी निकासी एफडीआई के दीर्घकालिक विकासात्मक प्रभाव को सीमित करती है। ये आंकड़े दर्शाते हैं कि पूंजी लंबे समय तक नहीं टिकती, जिससे इसका दीर्घकालिक विकासात्मक प्रभाव सीमित हो जाता है।

विनिवेश में तीव्र वृद्धि ने इस गिरावट में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वित्त वर्ष 2023-24 में, यह 51% बढ़कर 44.4 अरब डॉलर हो गया और वित्त वर्ष 2024-25 में फिर से बढ़कर 51.4 अरब डॉलर हो गया। अब यह 63% से अधिक है, जो एक उल्लेखनीय बदलाव का संकेत है।

ऐसी स्थिति जहां विदेशी

आरएमएस हैं

अल्पकालिक लाभ के बाद धन निकालना

और भारतीय

आरएमएस हैं

विदेश में निवेश प्रणालीगत कमियों को उजागर करता है जिन्हें संबोधित किया जाना चाहिए

निवेशक व्यवहार में - दीर्घकालिक रणनीतिक प्रतिबद्धताओं से लेकर अल्पकालिक लाभ-प्राप्ति तक, अक्सर कर मध्यस्थता और संधि-आधारित मार्ग के माध्यम से।

तीव्र वित्तीय लाभ के उद्देश्य से किए गए अल्पकालिक निवेश, निरंतर औद्योगिक या तकनीकी विकास में योगदान देने वाले निवेशों का स्थान ले रहे हैं। उदाहरण के लिए, जो कभी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) आकर्षित करने वाला प्राथमिक क्षेत्र था, अब विनिर्माण क्षेत्र में अविश्वसनीय वृद्धि देखी गई है, और कुल एफडीआई में इसकी हिस्सेदारी घटकर मात्र 12% रह गई है।

एफडीआई शुद्ध प्रवाह में गिरावट यह दर्शाती है कि पूंजी देश के आर्थिक परिदृश्य में सार्थक योगदान देने के लिए पर्याप्त समय तक नहीं टिक पा रही है। विनिर्माण, बुनियादी ढाँचे और नवाचार में निरंतर निवेश की कमी भारत के विकास पथ को बाधित कर रही है। भारतीय कंपनियों द्वारा बाहरी निवेश में वृद्धि चिंता का एक और कारण है। एफडीआई प्रवाह वित्त वर्ष 2011-12 में 13 अरब डॉलर से बढ़कर वित्त वर्ष 2024-25 में 29.2 अरब डॉलर हो गया है। कई कंपनियां भारत की सीमाओं से परे देखने के लिए नियामक अक्षमताओं, बुनियादी ढाँचे की कमियों और अप्रत्याशित नीतिगत ढाँचों को दोषी ठहराती हैं। पूंजी का यह प्रवाह घरेलू अर्थव्यवस्था को कमजोर करता है, रोजगार सृजन में बाधा डालता है, नवाचार को रोकता है और औद्योगिक विकास को बाधित करता है।

रैंकिंग में सुधार और सरकारी सुधारों के बावजूद, नियामक अस्पष्टता, कानूनी अनिश्चितता और असंगत शासन जैसी संरचनात्मक बाधाएँ विदेशी और घरेलू निवेशकों को हतोत्साहित करती रहती हैं। विदेशी कंपनियों द्वारा धन निकालने और भारतीय कंपनियों द्वारा विदेशों में निवेश करने के व्यवहार में बढ़ती समानता गहरी प्रणालीगत खामियों को उजागर करती है, जिन्हें दूर करना ज़रूरी है अगर भारत इस प्रवृत्ति को उलटना चाहता है।

दीर्घकालिक ही मायने रखता है। अल्पकालिक पूंजी प्रवाह में दीर्घकालिक विकास को सहारा देने की क्षमता नहीं होती। भारत को ऐसे सुधारों को प्राथमिकता देनी चाहिए जो दीर्घकालिक प्रतिबद्धताओं को पुरस्कृत करें ताकि एक अधिक लचीला निवेश पारिस्थितिकी तंत्र बनाया जा सके। इसमें नियमों को सरल बनाना, नीतिगत स्थिरता सुनिश्चित करना, बुनियादी ढाँचे में निवेश करना और उद्योग की बदलती माँगों को पूरा करने के लिए शैक्षिक और कौशल-निर्माण पहलों का विस्तार करना शामिल है।

भारत को वैश्विक आर्थिक परिवेश में अपने विकासात्मक लक्ष्यों के अनुरूप निवेश को आकर्षित करने और बनाए रखने के लिए सक्रिय रूप से काम करने की आवश्यकता है, विशेष रूप से ऐसे निवेश जो प्रौद्योगिकीय परिवर्तन में सहायक हों।

सकल एफडीआई आंकड़े आशाजनक लग सकते हैं लेकिन वे जितना बताते हैं उससे कहीं अधिक छिपाते हैं।
बढ़ता विनिवेश, निवेश में बदलाव

पैटर्न और बढ़ते पूंजी प्रवाह भारत के आर्थिक परिदृश्य में विश्वास के गहरे क्षरण को दर्शाते हैं। इसके अलावा, भारत के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) में सिंगापुर और मॉरीशस जैसे वित्तीय केंद्रों का प्रभुत्व दर्शाता है कि इस पूंजी का अधिकांश हिस्सा उत्पादक निवेश के बजाय कर रणनीतियों से प्रेरित हो सकता है। इसके अलावा, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और यूनाइटेड किंगडम जैसे औद्योगिक एफडीआई के पारंपरिक स्रोतों ने अपनी भागीदारी कम कर दी है।

वित्तीय सेवाओं, ऊर्जा वितरण और आतिथ्य जैसे सेवा और किराया-प्राप्ति क्षेत्रों में पूँजी प्रवाह में वृद्धि देखी गई। सकल घरेलू उत्पाद में उनके योगदान के बावजूद, ऐसे निवेशों में विनिर्माण, बुनियादी ढाँचे या उन्नत प्रौद्योगिकी से जुड़े व्यापक गुणक प्रभावों का अभाव है। यह बदलाव दीर्घकालिक विकास क्षमता को कमज़ोर कर रहा है और आर्थिक लचीलेपन को कम कर रहा है।

भारत की व्यापक आर्थिक स्थिरता भी निकट भविष्य में प्रभावित होगी। यह उसके प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) पारिस्थितिकी तंत्र की सेहत से जुड़ा है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) पूंजी के स्रोत के रूप में काम करता है, भुगतान संतुलन को सहारा देता है और मुद्रा को सहारा प्रदान करता है। जैसे-जैसे एफडीआई शुद्ध निवेश घटता है, बाह्य खाता प्रबंधन और मौद्रिक नीति की लचीलेपन के निहितार्थ और अधिक चिंताजनक होते जाते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक ने इस प्रवृत्ति को स्वीकार किया है और कहा है कि बढ़ते निवेश अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के रुझानों के अनुरूप हैं, लेकिन ये जोखिम भी प्रस्तुत करते हैं जिनका सावधानीपूर्वक प्रबंधन आवश्यक है। भारत का लगभग आधा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) विकसित अर्थव्यवस्थाओं की ओर निर्देशित है, जो अनुकूल कर व्यवस्थाओं, बाजार स्थिरता और रणनीतिक संसाधनों तक पहुँच के कारण आकर्षित होते हैं।

क्या किया जाना चाहिए अगर भारत एक
वैश्विक निवेश केंद्र के रूप में अग्रणी बनना चाहता है, तो उसे मुख्य एफडीआई आंकड़ों से आगे बढ़कर पूंजी प्रवाह की गुणवत्ता, स्थायित्व और रणनीतिक संरेखण पर ध्यान केंद्रित करना होगा। बड़े आंकड़ों पर अत्यधिक ज़ोर देने और उनके मूल या आर्थिक प्रभाव की उपेक्षा करने से गहरी कमज़ोरियों के छिपने का खतरा है।

देश को वास्तव में प्रतिबद्ध पूँजी निवेश की आवश्यकता है जो घरेलू क्षमता का निर्माण करे और राष्ट्रीय प्राथमिकताओं को आगे बढ़ाए। सुव्यवस्थित नियमन, बुनियादी ढाँचे का उन्नयन, नीतिगत स्थिरता और संस्थानों में नए सिरे से विश्वास इन प्राथमिकताओं को पूरा करने में मदद कर सकते हैं। उन्नत विनिर्माण, स्वच्छ ऊर्जा और प्रौद्योगिकी जैसे उच्च-मूल्य वाले क्षेत्रों को आकर्षित करने के लिए मानव पूँजी में निवेश करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। भारत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) की दुविधा में एक दोराहे पर खड़ा है।

द टटर्सटूदएडिटर

गाजा पर सामूहिक याचिका 4 सितंबर, 2025 को प्रकाशित और 4,500 से ज़्यादा वैज्ञानिकों द्वारा हस्ताक्षरित गाजा पर अंतर्राष्ट्रीय याचिका कई कारणों से अभूतपूर्व है। हस्ताक्षरकर्ताओं में आज दुनिया के सबसे महत्वपूर्ण वैज्ञानिक और गणितज्ञ शामिल हैं, जिनमें 14 नोबेल पुरस्कार विजेता, पाँच फील्ड्स मेडलिस्ट और 20 अन्य शामिल हैं।

,

निर्णायक पुरस्कार

यद्यपि याचिका में अपने उद्देश्य को मानवीय बताया गया है, तथापि सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से हस्तक्षेप करने का विशेष आह्वान किया गया है, फिर भी यह अनिवार्य रूप से गहन राजनीतिक है।

यह याचिका अधिक महत्वपूर्ण होने की संभावना है, क्योंकि इसमें सभी देशों से बड़ी संख्या में हस्ताक्षरकर्ता शामिल हैं, उनकी महान प्रतिष्ठा है, तथा इसके समय पर भी हस्ताक्षर किए गए हैं।

प्रकाशन। इस महीने के तीसरे और चौथे सप्ताह में संयुक्त राष्ट्र महासभा के 80वें सत्र में फिलिस्तीन मुद्दे पर चर्चा की जाएगी।

गाजा में नरसंहार की स्थिति को देखते हुए, कई पश्चिमी और जी-7 राष्ट्रों ने, जिन्होंने अब तक बिना शर्त इजरायल का समर्थन किया था, घोषणा की है कि वे इस सितंबर में फिलिस्तीन राज्य को मान्यता देंगे।

इस पृष्ठभूमि में, यह

यह संभव है, यहां तक कि संभावना है कि 80वीं संयुक्त राष्ट्र महासभा उन उपायों को आरंभ करने और लागू करने का निर्णय लेगी, जिन्होंने 1990 में दक्षिण अफ्रीका को रंगभेद समाप्त करने के लिए बाध्य किया था।

विवेक मोंटेइरो, मुंबई

ट्रंप की टिप्पणियों से भारत को डोनाल्ड ट्रंप के पलटी मारने को एक रणनीतिक शोर समझना चाहिए और लचीली शासन कला में निवेश करना चाहिए। उनका दूसरा कार्यकाल प्रधानमंत्री मोदी की प्रशंसा और

भारतीयों पर कठोर आरोप
निर्यात, और साथ ही उस अमानवीय तरीके का भी जिक्र नहीं किया जा सकता, जिससे अवैध भारतीय आप्रवासियों को निर्वासित किया गया।
आज की "दोस्ती" कल के दबाव में बदल सकती है। यह 'गरमागरम-ठंडा' रवैया ट्रम्प का पुराना तरीका है।

एम. जमील अहमद, मैसूर

सुधार और स्पष्टीकरण

उमर खालिद पर एक लेख, "सलाखों के पीछे कार्यकर्ता" ('प्रोफाइल' पृष्ठ, 7 सितंबर, 2025) में, एक वाक्य "... उसकी लंबी कैद पर" होना चाहिए था, न कि अवतार।

पाठक संपादक की राय से टेलीफोन: +91-44-28576347/28576300; ई-मेल: readereditor@thehindu.co.in पर संपर्क किया जा सकता है।

letters@thehindu.co.in
पर भेजे गए पत्रों में डाक पता अवश्य होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

राष्ट्रीय सहारा

नई दिल्ली • सोमवार • 8 सितम्बर • 2025

www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

मनुष्य अपनी दुर्बलता से भली-भांति परिचित रहता है, पर उसे अपने बल से भी अवगत होना चाहिए।

-जयशंकर प्रसाद

ट्रंप की अकड़ ढीली

जैसी कि उम्मीद थी ठीक वैसा ही हुआ। अभी तक भारत से खुंदक निकाल रहे अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप आखिर, पलटी मार गए। भारत को धो-धो कर कोस रहे ट्रंप समझ चुके हैं कि उनकी तिरछी चाल से भारत का तो जो होगा सो होगा बेइज्जती तो अमेरिका और उनकी खुद की होने वाली है। शुल्क और रूसी तेल खरीद को लेकर अमेरिका और भारत के मध्य भारी तनाव पैदा करने के बाद ट्रंप ने कहा कि दोनों देशों के बीच विशेष संबंध हैं। इस पलटी को खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे के सिवा और क्या कहा जा सकता है। दोनों देशों के बीच संबंध पिछले दो दशकों में सबसे खराब दौर से गुजर रहे हैं। अपने मित्र मोदी से

मित्रता को याद करते हुए ट्रंप कहे बिना नहीं रह सके कि 'मैं हमेशा मोदी का दोस्त रहूंगा...वह शानदार प्रधानमंत्री हैं।' ट्रंप की इस चालबाजी को भांपते हुए भारत को गद्‌गद्‌ होने की जरूरत नहीं है। ट्रंप ने पिछले कुछ समय में भारत के साथ जो अपमानकारी हरकतें की हैं, उन्हें भारत को नहीं भूलना चाहिए। अपनी आदत से बाज न आते हुए अब भी उन्होंने यह तो कह ही दिया कि उन्हें इस समय मोदी द्वारा किए जा रहे काम पसंद नहीं आ रहे। वह इस बात से निराश हैं कि भारत रूस से बहुत ज्यादा तेल खरीद रहा है। इससे पहले ट्रंप ने 'ट्रुथ सोशल' पर अपनी पोस्ट में कहा था, 'लगता है हमने भारत और रूस को चीन के हाथों खो दिया है। ईश्वर करे कि उनका भविष्य दीर्घकालिक और समृद्ध हो।' ट्रंप चीन से भारत के सुधरते रिश्तों में खटास लाने की पुरजोर कोशिश कर रहे हैं। तियानजिन में शंघाई सहयोग संगठन के शिखर सम्मेलन से आए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी, चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग और रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के ठहाके लगाते चित्रों ने पूरी दुनिया का ध्यान खींचा। इससे ट्रंप की बेचैनी बढ़ी हुई है। वह किसी भी तरह इन तीनों नेताओं में दूरी पैदा करना चाहते हैं। भारत को चाहिए कि वह बदलती वैश्विक जरूरतों में अपना फायदा देखते हुए किसी चालबाजी में न फंसे। अपनी शर्तों पर व्यापार करना एक सार्वभौमिक राष्ट्र का अपना मसला है, हम किससे तेल खरीदें या न खरीदें और कितना खरीदें अमेरिका को बीच में पड़ने की जरूरत नहीं है। मोदी ने ट्रंप की चाल को भांपते हुए जो सधी हुई प्रतिक्रिया दी है, उसकी प्रशंसा की जा सकती है क्योंकि परिदृश्य में आया बदलाव ट्रंप और अमेरिका पर पड़े दबाव को दिखाता है। भारत को किसी की लल्लोचप्पो में आने की जरूरत नहीं है। ये ट्रंप के सीधी लाइन पर आने के संकेत हैं।

शांति स्थापना जरूरी

वर्तमान में मणिपुर देश का एकमात्र राज्य है, जहां राष्ट्रपति शासन लागू है। मैतई-कुकी के खूनी संघर्ष के चलते इसी साल फरवरी में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया था। 1967 के बाद से मणिपुर में राष्ट्रपति शासन लगने का ग्यारहवां उदाहरण है। अब मणिपुर अखंडता पर समन्वय समिति ने कुकी-जो समुदाय के दो प्रमुख संगठनों द्वारा सरकार के साथ समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए। कोकोमी शांति स्थापित करने के लिए रोडमैप तैयार कर रहा है। केंद्र व राज्य सरकार ने कुकी-जो विद्रोही समूहों के साथ पनुर्निधारित नियमों, शर्तों या

आधारभूत नियमों के साथ विशेष सैन्य समझौते पर हस्ताक्षर किए। गृह मंत्रालय का कहना है कि नागरिक समाज संगठनों के इन समूहों द्वारा राष्ट्रीय राजमार्ग-2 को यात्रियों और जरूरी वस्तुओं की आवाजाही के लिए खोलने पर सहमति व्यक्त की है। मई, 2023 में राज्य में कुकी-मैतई के दरम्यान हिंसा के बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अपेक्षित यात्रा को लेकर यह व्यवस्था किए जाने की चर्चा है। पूर्वनिर्धारित कार्यक्रमानुसार मोदी 13 सितम्बर को वहां जा सकते हैं। जातीय संघर्ष में ढाई सौ से ज्यादा जानें जा चुकी हैं। जनजीवन अस्त-व्यस्त है। सरकारी इमारतों को क्षति पहुंचाने के अलावा स्थानीय रोजगार ठप पड़े हैं। सुरक्षा बलों के साथ मुठभेड़ों ने आम नागरिकों के भीतर दहशत भर दी है। साठ हजार से ज्यादा लोग अपने घरों को अब तक लौट नहीं पाए हैं। सामान्य स्थिति की बहाली को लेकर जनता में निश्चितता देखी जा सकती है। हालांकि यह राजनीतिक दांव भी हो सकता है क्योंकि अरसे से मोदी के लगातार चुनावी रैलियों में शामिल होने पर विपक्ष निशाना साध रहा था। मणिपुर में शांति बहाली के लिए केंद्र का उपेक्षाभाव देख सवाल उठना लाजिमी था। बिहार में विधानसभा चुनाव को लेकर सरगर्मियां बढ़ चुकी हैं। ऐसे में कयास लगाए जा रहे हैं कि आलोचनाओं को थामने के लिए मोदी की यह यात्रा हो सकती है, जहां कुछ योजनाओं का ऐलान कर वे अपने जिम्मेदाराना व्यवहार का अहसास कराना चाहेंगे। संघर्षग्रस्त राज्य में शांति बहाली केंद्र को अपनी प्राथमिकताओं में रखना चाहिए। चुनावी चकल्लस के अतिरिक्त प्रधानमंत्री मोदी को ख्याल रखना होगा कि देश के किसी भी कोने को उपेक्षित न रहने दिया जाए और शांति स्थापित करने के प्रति यथाशीघ्र विशेष सतर्कता बरती जाए।

परिधि/राजीव मंडल

हेकड़ी दिखाने का हासिल!

हमारे देश में सत्ता का दुरुपयोग या सत्ता की आड़ में राजनेताओं की ऐंठ नई बात नहीं है। अखबारों के पन्ने और खबरी चैनल के कैसेट्स नेताओं की हनक भरी कारगुजारियों से भरी पड़ी है। चाहे मुलायम सिंह यादव बनाम आईपीएस अधिकारी अभिताभ ठाकुर का मामला हो या जद (एस) नेता एच.डी. कुमारस्वामी का हो। कह सकते हैं कि नेता खुदा तो नहीं मगर खुद को खुदा से कमतर भी नहीं समझते हैं। ताजा मामला महाराष्ट्र का है, जहां एक महिला डिप्टी एसपी को सत्ता में साझीदार दल एनसीपी के नेता अजित पवार धमका रहे हैं। पूरे प्रकरण में एनसीपी नेता पवार की तरफ से जिस भाषा, तेवर और आचरण का प्रदर्शन किया गया है, वह यह बताने को पर्याप्त है कि नेता अपनी ताकत का कितना भद्‌दा और बेजा इस्तेमाल करते हैं।

अवैध मिट्‌टी खनन की शिकायत मिलने के बाद घटनास्थल पर पहुंची आईपीएस अधिकारी अंजना कृष्णा से अजित पवार ने जिस टोन में बात की, वह उनकी अकड़ और अधिकारियों खासकर महिला अधिकारियों को लेकर उनकी सोच को परिलक्षित करता है। पुलिस अधिकारी और अजित पवार के बीच फोन पर हुई बातचीत कुछ इस प्रकार हुई- 'मैं उप मुख्यमंत्री अजित पवार बोल रहा हूं'। इस पर अंजना कृष्णा ने जवाब दिया, 'मेरे मोबाइल पर कॉल करें।' इसके बाद खुद को अजित पवार बताने वाले शख्स भड़क गए और अंजना कृष्णा को वीडियो कॉल कर डांटते हुए कहा, 'क्या आपकी इतनी हिम्मत है? क्या आप मेरा चेहरा भी नहीं पहचानतीं?' अब अजित सफाई पेश कर रहे हैं, लेकिन बात जब जुबां से निकल गई तो उसका असर दूरगामी होगा। जो समझाइश पवार महिला अधिकारी को धमकाने के अंदाज में दे रहे थे, उसे शांत और सहज भाव से भी व्यक्त कर सकते थे? शांत भाव और स्वभाव में बात करने में पता नहीं क्यों नेताओं को बोझ क्यों महसूस होता है? यहां तक कि अजित की पार्टी एनसीपी से विधानपरिषद सदस्य अमोल मिटकर ने तो अंजना कृष्णा के शैक्षिक और जाति प्रमाणपत्रों पर सवाल उठा दिया। हालांकि बाद में उन्होंने इस मामले में माफी मांग ली। बहरहाल, सियासत को ऐसे लोगों ने ही बदरंग किया है। नेताओं के व्यवहार में सौम्यता और शांति की झलक सिर्फ चुनाव के समय ही देखने को मिलती है। बाकी समय तो ये गजब मिजाज के दिखते हैं। हो सके तो नेताओं को इस बाबत आत्ममंथन करने की जरूरत है।

भूपेन दा...भारत के रत्न

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितम्बर का दिन बहुत खास है और विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे। यह बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है।

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वो आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है। भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले।

बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया, लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अग्रवाल और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया। सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तक ले गई।

वो बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं, और मुझे बहुत गर्व होता है। काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वे पॉल रोबसन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे। रोबसन का गीत ''Ol' Man River" उनके कालजयी गीत 'बिश्टीरनो परोरे' की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया।

भूपेन हजारिका, संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वे भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए। रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्यूमेंट्री तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे। जहां भी गए, नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया। भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय,

ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं, साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे...और आज भी पा रहे हैं।

भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़ कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वो बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। 'दिल हूम हूम करे' में जो पीड़ा बहती है, वो सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वे पूछते हैं, 'गंगा बहती है क्यूं', तो ऐसा लगता है मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों।

उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वो असम की आवाज बने। भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे। भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्‌मश्री, पद्‌मभूषण, पद्‌मविभूषण, दादा साहेब फाल्के अवार्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने, इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे।

वो कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है, और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है। मुझे 2011 का वह समय याद है जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है।

अब यह देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है। भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्‌घाटन का अवसर मिला तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल...इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है। भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का अहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्‌टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें माननीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है।

भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए, यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

नरेन्द्र मोदी

प्रधानमंत्री, भारत

> भारत की जनता और सरकार भूपेन हजारिका के योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्‌मश्री, पद्‌मभूषण, पद्‌मविभूषण, दादा साहेब फाल्के अवार्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने, इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे

प्राकृतिक आपदा | विनीत नारायण

बरपता कहर, बढ़ती दुश्वारियां

भारत, अपनी प्राकृतिक सुंदरता और विविध भौगोलिक संरचना के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। लेकिन हर साल मानसून के आगमन के साथ यह देश प्राकृतिक आपदाओं की चपेट में आ जाता है। भारत में मानसून का मौसम जून से सितम्बर तक रहता है। इस दौरान देश के कई हिस्सों में भारी बारिश, बाढ़ और भूस्खलन की घटनाएं अब आम हैं। हाल के महीनों में उत्तराखंड के उत्तरकाशी जिले के धराली गांव में बादल फटने से भारी तबाही मची जिसमें कम से कम पांच लोगों की मौत हुई और 50 से अधिक लोग लापता हो गए। हिमाचल प्रदेश में भी अगस्त, 2025 में भारी बारिश के कारण दर्जनों सड़कें बंद हो गईं और कई लोगों की जान चली गई। इन घटनाओं ने एक बार फिर सवाल उठाया है कि सरकारी तंत्र इन आपदाओं के प्रभाव को कम करने में क्यों विफल है?

बादल फटने की घटनाएं, जिन्हें भारत मौसम विज्ञान विभाग 100 मिमी. प्रति घंटे से अधिक बारिश के रूप में परिभाषित करता है, विशेष रूप से हिमालयी क्षेत्रों में आम हैं। ये घटनाएं न केवल प्राकृतिक हैं, बल्कि जलवायु परिवर्तन और मानवीय गतिविधियों जैसे अनियोजित निर्माण, जंगलों की कटाई और नदियों के प्राकृतिक प्रवाह में हस्तक्षेप के कारण और भी घातक हो गई हैं।

केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने हाल में अपने बयान में कहा कि पहाड़ी राज्यों में होने वाले निर्माण और नुकसान के लिए 'घर में बैठकर तैयार की गई फर्जी डीपीआर बनाने वाले दोषी हैं। ये लोग बिना जमीनी हकीकत जाने डीपीआर बना देते हैं, जिससे ऐसे हादसे होते हैं।' यह बयान न केवल सरकारी तंत्र की कार्यप्रणाली पर सवाल उठाता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि विकास परियोजनाओं में पारदर्शिता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण की कमी कितनी घातक हो सकती है। डीपीआर, जो किसी भी योजना का आधार होती है, में भ्रष्टाचार और लापरवाही बरती जाती है, तो इसका परिणाम ऐसे हादसों और त्रासदियों के रूप में सामने आता है। इसे 'करप्शन ऑफ डिजाइन' कहा जाता है।

हादसों ने स्पष्ट कर दिया है कि सरकार को पहले से तैयारी की जरूरत है। फिर भी, हर साल न सिर्फ एक जैसी

आपदाएं दोहराई जाती हैं, बल्कि राहत और बचाव कार्यों में अव्यवस्था भी दिखाई देती है। दूसरा, जल निकासी प्रणालियों की कमी और रखरखाव की अनदेखी भी बड़ा मुद्दा है। दिल्ली-एनसीआर जैसे शहरी क्षेत्रों, जहां 2024 में 108 मिमी. बारिश ने भारी जलभराव पैदा किया, में नालों की सफाई और उचित जल निकासी की कमी साफ दिखाई दी। पहाड़ी क्षेत्रों में नदियों के किनारे अनियोजित निर्माण और अतिक्रमण ने प्राकृतिक जल प्रवाह को बाधित किया है, जिससे बाढ़ का खतरा बढ़ गया है।

तीसरा, स्थानीय समुदायों की भागीदारी और जागरूकता की कमी भी बड़ी समस्या है। ऐसे में स्थानीय ज्ञान का उपयोग करके सड़क निर्माण हो तो शायद भूस्खलन में रोकथाम हो सके। लेकिन स्थानीय लोगों की सलाह को नजरअंदाज किया जाता है और परियोजनाएं केवल ठेकेदारों और अधिकारियों के हितों को ध्यान में रख कर बनाई जाती हैं। इन समस्याओं का समाधान तभी संभव है, जब सरकार और समाज मिल कर एक समग्र और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएं। सबसे पहले, डीपीआर तैयार करने की प्रक्रिया को पारदर्शी और वैज्ञानिक बनाना होगा। भूगर्भीय सर्वेक्षण, पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन और स्थानीय विशेषज्ञों की राय को शामिल करना अनिवार्य होना चाहिए। भ्रष्टाचार को रोकने के लिए स्वतंत्र ऑडिट और निगरानी तंत्र स्थापित किए जाने चाहिए। दूसरा, आपदा प्रबंधन के लिए एक मजबूत ढांचा तैयार करना होगा। इसमें न केवल राहत और बचाव की तैयारी शामिल होनी चाहिए, बल्कि प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियों, जैसे बादल फटने की निगरानी, को भी मजबूत करना होगा। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग भूस्खलन और जलभराव की संभावना वाले स्थानों की पहचान के लिए किया जाना चाहिए। पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ विकास को भी प्राथमिकता देनी होगी। जंगलों की कटाई को रोकना, नदियों के प्राकृतिक प्रवाह को बहाल करना और अंधाधुंध निर्माण पर रोक लगाना जरूरी है। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड जैसे राज्यों में इको-सेंसिटिव जोन में निर्माण को सख्ती से विनियमित करना होगा।

बादल फटने, भूस्खलन और बाढ़ की त्रासदियां केवल प्राकृतिक नहीं हैं, बल्कि मानवीय लापरवाही और भ्रष्टाचार का भी परिणाम हैं। अब समय है कि सरकार, समाज और विशेषज्ञ मिल कर ऐसी व्यवस्था बनाएं जो न केवल आपदाओं को रोके, बल्कि उनके प्रभाव को कम करने में भी सक्षम हो। टिकाऊ विकास, पारदर्शी प्रशासन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही इस दिशा में बढ़ने का रास्ता है।

(लेख में व्यक्त विचार निजी हैं)

दुष्प्रवृत्ति | श्रीराम शर्मा आचार्य

खेतड़ी नरेश ने स्वामी विवेकानंद को एक बार अपनी सभा में आमंत्रित किया। स्वामी जी वहां गए भी और लोगों को तत्त्वज्ञान का उपदेश भी किया। समाज सेवा का प्रसंग आया और वे समझाने लगे कि बिना किसी भेदभाव के ईश्वर उपासना की तरह ही समाज-सेवा का व्रत भी पालन करना चाहिए। आगे की बात स्वामी जी पूरी नहीं कर सके क्योंकि उधर से नर्तकियों का एक दल आ पहुंचा। सामंतों का स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि उनका ध्यान उधर चला गया, इसलिए प्रवचन अपने आप समाप्त हो गया। जैसे ही एक नर्तकी ने सभा मंडप में प्रवेश किया कि स्वामी जी का मन घृणा और विरक्ति से भर गया। वे उठ कर चल दिए। नृत्य प्रारंभ हुआ। नर्तकी ने अलाप किया-'प्रभु मेरे अवगुण चित न धरो' और वह ध्वनि स्वामी जी के कानों में पड़ी। स्वामी जी चौंक पड़े। मस्तिष्क में जोर के झटके से विचार उठा-परमात्मा का अवगाहन हम इसीलिए तो करते हैं कि पाप परिस्थितियों के कारण हमारे अंतकरण कलुषित हुए पड़े हैं, हम उनमें निर्मल और निष्पाप बनें। 'सामाजिक परिस्थितियों से कौन बचा है' यह बेचारी नर्तकी ही दोषी क्यों? मालूम नहीं समाज की किस अवस्था के कारण इस बेचारी को इस वृत्ति का सहारा लेना पड़ा अन्यथा वह भी किसी प्रतिष्ठित घराने की बहू और बेटी होती। अब तक मस्तिष्क में जो स्थान घृणा ने भर रखा था, अब भस्मीभूत हो गया। स्वामी विवेकानंद वापस लौटे, अपना स्थान पुन-ग्रहण किया। लोगों के मन में उनके प्रति जो श्रद्धा थी, वह और द्विगुणित हो उठी। स्वामी जी जब तक नृत्य हुआ, कला की सूक्ष्मता और उससे होने वाली मानसिक प्रसन्नता का अध्ययन करते रहे। विद्यार्थी के समान उन्होंने संपूर्ण रास केवल अध्ययन दृष्टि से देखा, न कोई मोह था, न आसक्ति। नृत्य समाप्त होने पर ही वापस अपने डेरे को लौटे। इतनी भूल सुधार के कारण उन्होंने सभी सभासदों और नर्तकी को भी यह शिक्षा तो दी ही दी कि 'व्यक्ति को घृणास्पद मानने का अर्थ यह नहीं कि वृत्ति को भी घृणा न की जाए। उससे तो बचना ही चाहिए।' आजीविका के लिए वह नर्तकी कला प्रदर्शन तो करती रही, पर उस दिन उसे स्वामी जी के प्रति श्रद्धा ने वासना से विरक्ति दे दी और उसने आजीवन व्रतशील जीवन यापन किया। साथ ही, सभासदों में से भी अनेक ने अपनी दोष दृष्टि का परित्याग किया।

रीडर्स मेल

कृषि की उपेक्षा उचित नहीं

देश के कुछ राज्यों में पिछले कुछ दिनों से भारी बारिश हो रही है। यह बारिश धान और अन्य मौसमी फसलों के लिए बहुत हानिकारक सिद्ध हो रही है। क्या हमने आधुनिकता और भौतिकतावाद की अंधी दौड़ में खुद ही अपने हाथों प्रकृति के विरुद्ध जाकर बेमौसम बारिश को न्यौता दे दिया है? कुदरत के आगे इंसान अभी तक बौना है, अगर हम बीज बबूल के बोएं और फिर आम जैसे फल की इच्छा रखेंगे तो हमारी सबसे बड़ी नासमझी होगी? देश की जीडीपी में कृषि का बहुत बड़ा योगदान है, इसलिए कृषि विशेषज्ञों को चाहिए कि ऐसी तकनीक विकसित करें कि मौसम की बेरुखी से होने वाले फसलों के नुकसान से किसानों को बचाया जा सके अर्थात जिस तरह मौसम का चक्र परिवर्तन हुआ है, उसी हिसाब से फसलों की खेती की जाए। प्रकृति के कहर के कारण अगर किसानों की फसल बर्बाद होती है तो उसको उसका उचित मुआवजा मिलना चाहिए और अगली फसल के लिए कर्जे की जरूरत पड़ती है तो वो भी आसानी से मिलना चाहिए। किसानों को कर्ज मिलने या मुआवजे के लिए परेशानी न हो इसके लिए संबंधित अधिकारियों को सख्त निर्देश दिए जाएं।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

टूव्हीलर वालों की जल्दबाजी

मनुष्य की जान कीमती है। जान की उसे एहतियात बरतनी चाहिए। आज मनुष्य शानबाजी में इस तथ्य को भूल रहा है। खबर है, रोड पर टूव्हीलर सवार स्टंटबाजी कर रहे थे। उनका ध्यान मोबाइल पर रील बनाने पर था। संकरे रास्ते में गाड़ी की स्पीड ज्यादा थी। जिस अनहोनी का डर था वही हुई। बाइक पर रील बनाने के चक्कर में वह ट्रक से टकरा गए। फिर उन्हें बचाया नहीं जा सका। आज लोग मोबाइल पर ऐसे ही वीडियो शूट करते हैं, जिससे ज्यादा लोग देखें। कोई नदी की बीच धार में रील बनाने पर लगा है। एक ने तो हद कर दी। शर्त लग गई कि कौन बाढ़ग्रस्त नदी में तैर कर दूसरी तरफ जाएगा। फिर जो तैरने को उतरा उसे बचाया नहीं जा सका। शहर में इन टूव्हीलर वालों को स्पीड का नशा चढ़ा है। संकरे रास्ते में ये दाएं-बाएं तेजी से होकर निकलते हैं। आप देखें हाइवे पर भी टूव्हीलर वाले बड़े वाहनों से ओवरटेक कर खुद के साथ दूसरों के लिए भी मुसीबत बनते हैं। बिहार सरकार ने फरमान जारी किया है कि रविवार वाले दिन शहर में टूव्हीलर वाले हॉर्न न बजाएं। अब टूव्हीलर वाले रोड पर जल्दबाजी न मचा पाएंगे।

सीमा गुप्ता, बरेली

चेतावनी है लंबी हिरासत

उमर खालिद एवं शरजील इमाम समेत दर्जनों युवाओं को वर्षों से जेल में रखा गया है। क्या यह कानून के तहत हो रहा है? बिना सबूत के लंबी हिरासत इंसाफ और मानवाधिकारों को कमजोर कर रही है। यह उनके लिए चेतावनी है जो मानते हैं कि कानून का शासन निष्पक्ष और तटस्थ होता है। यूएपीए, जिसे आतंकवाद से निपटने के लिए बनाया गया था, का इस्तेमाल असहमति को दबाने के हथियार के रूप में किया गया है। इस कानून की कठोर प्रकृति, विशेष रूप से इसकी जमानत विरोधी धाराएं, अभियुक्तों के लिए निर्दोषता साबित करना लगभग असंभव बना देती हैं। वरिष्ठ अधिवक्ता कपिल सिब्बल ने बताया कि उमर खालिद के मामले में जमानत याचिकाओं पर शीघ्र सुनवाई पर जोर देने वाले सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों का उल्लंघन किया गया है।

जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण

वर्ष-35, अंक 25

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3, 4 सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा तथा 1209-1210, बारहवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 011-23352369, 011-23352372, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750

आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026

*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

पंजाब केसरी संपादकीय

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

चुनाव आयोग की जल्दबाजी !

हमारे संविधान निर्माताओं ने जब स्वतन्त्र होने के बाद चुनाव आयोग को पूर्ण रुपेण स्वायत्तशासी व सरकार से निरपेक्ष दर्जा दिया था तो प्रत्येक भारतवासी को सत्ता में भागीदारी करने की गारंटी दी थी। क्योंकि लोकतन्त्र का मतलब ही जनता की पसन्द की अपनी सरकार होता है। चुनाव आयोग जनता की इसी इच्छा की पूर्ति कराता है और तय करता है कि हर भारतवासी की इसमें शिरकत हो। अभी तक हम देखते आ रहे थे कि हर चुनाव से पहले चुनाव आयोग 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने वाले हर मतदाता का वोट बनाने के लिए अभियान चलाया करता था और अपील करता था कि बड़ी से बड़ी संख्या में लोग अपने मताधिकार का प्रयोग करने जायें परन्तु पहली बार यह देखने में आ रहा है कि चुनाव आयोग खुद मतदाता सूची से मतदाताओं के नाम काट रहा है। वह नाम काटने का कारण भी सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद ही बताता है। ऐसा बिहार में हुआ है जहां 65 लाख मतदाताओं के नाम काटे गये हैं। बिहार में चुनाव आयोग ने कहा कि वह विशेष मतदाता पुनरीक्षण अभियान चला रहा है। यह कार्य जब बिहार में शुरू किया गया तो इसका विरोध देश की विपक्षी पार्टियों ने किया और आरोप लगाया कि चुनाव आयोग का यह कार्य कानून को धत्ता बता कर किया जा रहा है। इस बारे में देश के सर्वोच्च न्यायालय में भी कई याचिकाएं दायर की गईं जिन पर सुनवाई चल रही है और सबसे ताजा सुनवाई 8 सितम्बर को ही होनी है।

> **सवाल यह है कि चुनाव आयोग सर्वोच्च न्यायालय के अन्तिम फैसले का इन्तजार क्यों नहीं करना चाहता? भारत का संविधान स्पष्ट रूप से जब यह कहता है कि भारत में रहने वाले किसी भी व्यक्ति की नागरिकता की जांच केवल गृह मन्त्रालय ही कर सकता है तो चुनाव आयोग किस वजह से अपनी टांग इस क्षेत्र में अड़ाना चाहता है? चुनाव आयोग ने अभी राज्यों के मुख्य चुनाव अधिकारियों की बैठक आगामी 10 सितम्बर को दिल्ली में बुलाई है। इस बैठक का मन्तव्य यह माना जा रहा है कि वह आगामी 1 जनवरी, 2026 से पूरे देश में मतदाता सूची पुनरीक्षण अभियान चलाना चाहता है।**

चुनाव आयोग ने कहा कि किसी वैध मतदाता के लिए आधार कार्ड, राशन कार्ड व खुद उसके द्वारा जारी किया गया वोटर कार्ड ऐसे दस्तावेज नहीं हैं जो उसके वैध भारतीय नागरिक होने के प्रमाण हों। अत: उसने 11 ऐसे दस्तावेजों की फेहरिस्त पकड़ा दी जिनकी जरूरत आम आदमी को मुसीबत के वक्त ही पड़ती है। इनमें जन्म प्रमाणपत्र से लेकर जाति प्रमाणपत्र व निवासी प्रमाणपत्र शामिल थे। मगर सर्वोच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग को निर्देश दिया कि वह आधार कार्ड को किसी भी नागरिक के वैध होने का सबूत समझे और अपने ही जारी किये गये वोटर कार्ड का भी संज्ञान ले। अब चुनाव आयोग पूरे भारत में बिहार की तर्ज का मतदाता पुनरीक्षण अभियान चलाना चाहता है जबकि सर्वोच्च न्यायालय में यह याचिका लम्बित है कि चुनाव आयोग क्या इस प्रकार का कोई अभियान चला सकता है। चुनाव आयोग को आखिरकार जल्दी किस बात की है?

सवाल यह है कि चुनाव आयोग सर्वोच्च न्यायालय के अन्तिम फैसले का इन्तजार क्यों नहीं करना चाहता? भारत का संविधान स्पष्ट रूप से जब यह कहता है कि भारत में रहने वाले किसी भी व्यक्ति की नागरिकता की जांच केवल गृह मन्त्रालय ही कर सकता है तो चुनाव आयोग किस वजह से अपनी टांग इस क्षेत्र में अड़ाना चाहता है? चुनाव आयोग ने अभी राज्यों के मुख्य चुनाव अधिकारियों की बैठक आगामी 10 सितम्बर को दिल्ली में बुलाई है। इस बैठक का मन्तव्य यह माना जा रहा है कि वह आगामी 1 जनवरी, 2026 से पूरे देश में मतदाता सूची पुनरीक्षण अभियान चलाना चाहता है। जाहिर है उसके इस कदम का विरोध देश के विपक्षी दल करेंगे क्योंकि वे कह रहे हैं कि इसके बहाने आयोग देश में राष्ट्रीय नागरिकता पंजीकरण का काम करना चाहता है। निश्चित रूप से यह कार्य चुनाव आयोग का नहीं है। उसे सिर्फ यह देखना होता है कि किसी भी वयस्क भारतीय नागरिक का वोट बनने से न रह जाये। इसके अलावा उसका काम होता है कि पूरे देश में हर चुनाव पूरी तरह स्वतन्त्र तरीके से हों और मतदाता अपने अधिकार का प्रयोग बिना किसी खौफ-ओ-खतर के करें। उनका वोट कोई भी उन्हें डरा कर या लालच देकर न ले सके। मगर चुनाव आयोग यदि नागरिकों की नागरिकता की जांच करने लगेगा तो इससे वह अपने लक्ष्य से भटक जायेगा और पूरे भारतीय समाज में बेवजह डर व्याप्त हो जायेगा। लोकतन्त्र में डर केवल कानून का ही होना चाहिए। जो लोग भारत के वैध नागरिक नहीं हैं और मतदाता बने हुए हैं उनमें कानून का डर होना चाहिए। मगर यह डर भारत के उस वैध नागरिक में नहीं होना चाहिए जिसके पास किसी कारणवश जन्म प्रमाणपत्र नहीं है। भारत की पुरानी पीढ़ियों में जन्म प्रमाणपत्र बनवाने की परंपरा ही नहीं थी और सारे कार्य उनकी वल्दियत के नाम पर ही होते थे। इस हकीकत को हमें स्वीकार करना चाहिए। नई पीढ़ियों में जन्म प्रमाणपत्र रखने की परम्परा जरूर पैदा हुई है जो कि देश में बढ़ती शिक्षा व्यवस्था की वजह से है। अब यदि राज्यों के मुख्य चुनाव अधिकारियों की बैठक चुनाव आयोग पूरे देश में मतदाता सूची के पुनरीक्षण की गरज से बुला रहा है तो यह उसकी जल्दबाजी होगी क्योंकि देश में इससे अगले वर्ष 2027 में जनगणना शुरू होनी है।

जनगणना के दौरान नागरिकता की पहचान भी हो सकती है। इससे चुनाव आयोग का कार्य और सरल ही होगा। बिहार में जिस तरह 65 लाख मतदाताओं के नाम चुनाव आयोग ने काटे हैं उससे पूरे देश में आशंका का वातावरण बना हुआ है जिससे लोगों का रोष चुनाव आयोग के प्रति पैदा हो सकता है। अभी तक चुनाव आयोग लोगों का मित्र ही समझा जाता है। उसकी छवि लोकमित्र जैसी है। अत: चुनाव आयोग को अपनी छवि की चिन्ता भी करनी चाहिए क्योंकि यह एक संवैधानिक संस्था है।

आंसू और पीड़ा के बीच...

मान कि इन आपदाओं में लोगों ने सब कुछ गंवाया है,
पर मुश्किल की इन घड़ियों ने समाज को एकजुट बनाया है,
आंसू और पीड़ा के बीच उम्मीद का दीप जलाया है,
आज भी जब बहुत से लोगों ने इंसानियत का धर्म निभाया है !!

गीता पाढा

भूपेन दा... भारत के रत्न

नरेन्द्र मोदी
प्रधानमंत्री भारत

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है और विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाज़ों में से एक थे। ये बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है। भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुई। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वो आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है।

भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले। बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेड़ा बरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अग्रवाला और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला और उनकी जिज्ञासु प्रवृति को और बढ़ावा दिया। सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तक ले गई। वो बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं और मुझे बहुत गर्व होता है।

काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वे पॉल रोबसन से मिले जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे। रोबसन का गीत "Ol' Man River" उनके कालजयी गीत 'बिश्टीरनो परोरे की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया। भूपेन हजारिका संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था लेकिन वे भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए। रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्यूमेंट्री तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे। जहां भी गए नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया।

भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं, साथ ही उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे... और आज भी पा रहे हैं।

भूपेन दा की जीवन यात्रा में एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी वो बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। दिल हूम हूम करे' में जो पीड़ा बहती है वो सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है और जब वे पूछते हैं, 'गंगा बहती है क्यूं, तो ऐसा लगता है मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हो। उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वो असम की आवाज बने।

भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे।

भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवार्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे। वो कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है और दुनियाभर के दिलों को छू सकता है।

मुझे 2011 का वह समय याद है जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। अब ये देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है। भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल... इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है।

भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें माननीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियां, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है। भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

> **"भूपेन दा की जीवन यात्रा में एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिन्दी फिल्मों के लिए संगीत रचा।**

बाढ़ों ने रैडक्लिफ-रेखा का कोई निशान नहीं छोड़ा

डा. चन्द्र त्रिखा
chandertrikha@gmail.com

बाढ़ ने इस बार रैडक्लिफ द्वारा 78 वर्ष पूर्व खींची गई विभाजन रेखाओं को पूरी तरह अपनी लपेट में ले लिया। लगता था कि क्षुब्ध लहरें उस विभाजन को पूरी तरह नकार रही थी। न कोई 'एलओसी' न कोई 'एलएसी'। आंधियों, तूफानों व बाढ़ों के अपने तौर-तरीके हैं। यदि 'लूटपाट' खून व सत्ता के प्यासे लोगों ने 78 वर्ष पहले अराजकता दिखाई थी तो आंधी, तूफान व बाढ़ क्यों न अराजक हो जाएं। हुसैनीवाला-सीमा फिरोजपुर व फाजिल्का-सीमा पर स्थित सादगी की 'रिट्रीट-सैरेमनी' वाले मंच भी बाढ़ ने इस बार बहा दिए। इस समय भारत-पाक के सैकड़ों गांवों के खेत बाढ़ के पानी में डूबे हैं। आज रैडक्लिफ जीवित होता तो 113 वर्ष का होता। अगर रूहें कब्रों के आसपास वाकई भटकती हैं तो रैडक्लिफ की रूह भी सिर धुनने पर विवश हो जाती। भारत-पाक सीमा के पार वे लगभग सभी गांव पानी में डूबे हैं जिनका प्रयोग आतंकी संगठन अपने प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करने और 'लांचिंग पैड' बनाने के लिए करते आ रहे थे। वहां 700 वर्ग किलोमीटर का पूरा क्षेत्र प्रभावित है और 33 लाख लोग बुरी तरह प्रभावित हैं।

रैडक्लिफ भारत विभाजन की विभीषिका का संभवत: सर्वाधिक चर्चित व अभिशप्त पात्र था। उसके अंतिम दिन अच्छे नहीं बीते। वह सदैव उदास रहता। उसे यही लगता कि वह 'विश्व के सबसे बड़े माइग्रेशन' का अपराधी था। ये हादसों के दिन थे। पूरे घटनाक्रम की कमोबेश हर घटना हादसों की मानिंद घट रही थी। चारों तरफ विसंगतियां, विरोधाभास भरे पड़े थे। यह एक ऐतिहासिक विरोधाभास था कि जिस तारीख को पाकिस्तान अस्तित्व में आया, इस दिन तक उस देश की सीमाएं तय नहीं हो पाई थीं। लगभग साढ़े चार लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को लगभग आठ करोड़ लोगों के लिए आवंटित किया जाना था। स्वतंत्र पाकिस्तान 14 अगस्त को अस्तित्व में आ गया था। 15 अगस्त को लाल किले पर तिरंगा फहरा। मगर दोनों देशों के बीच सीमा रेखा एक दिन बाद 16 अगस्त को ही खींची जा सकी। यानि आज़ादी पहले मिल गई, सीमाएं बाद में तय हुईं। इन सीमा रेखाओं की निशानदेही जिस सीमा आयोग ने की, उसके अध्यक्ष एक आर्किटैक्ट सर सिरिल रैडक्लिफ थे। यह भी शायद उस काल की सबसे बड़ी विसंगति थी कि एक ऐसे शख्स को इस ऐतिहासिक निशानदेही का काम सौंपा गया जो इससे पहले एक पर्यटक के रूप में भी कभी भारत नहीं आया था। उसने यहां की संस्कृति, भूगोल, धर्म, जातियों के बारे में जो कुछ भी जाना यहां आकर जाना।

अब थोड़ा पीछे लौटें। ब्रिटिश पॉर्लियामेंट ने 15 जुलाई, 1947 को 'इंडियन इंडिपैंडेंस एक्ट 1947' पारित किया। इन कानून के तहत सिर्फ एक माह बाद अर्थात 15 अगस्त, 1947 को 'ब्रिटिश भारत के प्रांतों' को दो सार्वभौम प्रभुसत्ता सम्पन्न देशों के बीच विभाजित किया जाना था। एक का प्रस्तावित नाम 'यूनियन ऑफ इंडिया' और दूसरे का 'डौमिनियन ऑफ पाकिस्तान' था। विभाजन से पहले भारत का लगभग 40 प्रतिशत भाग छोटे-बड़े राजाओं, महाराजाओं, नवाबों के अधिकार में था।

कोई भी रेखा, सड़क तंत्र, रेल तंत्र, संचार तंत्र, सिंचाई तंत्र और बिजली तंत्र को तहस-नहस किए बिना मुमकिन नहीं थी। खेतों की स्थिति भी यही थी। मगर दलीलों, सामान्य बुद्धि और तकनीकी एवं ऐतिहासिक व भौगोलिक मजबूरियों को एक तरफ हाशिए पर सरका दिया गया। बस विभाजन रेखाएं खींच दी गईं। इस सारी कवायद के लिए दो सीमा आयोग गठित हुए थे। एक बंगाल के लिए और दूसरा पंजाब के लिए। दोनों का ही अध्यक्ष सर सिरिल रैडक्लिफ को बनाया गया। रैडक्लिफ 8 जुलाई, 1947 को पहली बार भारत पहुंचे थे। उन्हें अपने समूचे कार्य के लिए 5 सप्ताह का नपा तुला समय दिया गया। दोनों आयोगों में कांग्रेस और मुस्लिम लीग के दो-दो प्रतिनिधि शामिल थे लेकिन किसी नुक्ते पर दोनों पक्षों के बीच मतभेद की स्थिति में अंतिम फैसला रैडक्लिफ का होता था। रैडक्लिफ को समय बेहद नाकाफी लग रहा था। मगर इस बारे में वायसराय, कांग्रेस व मुस्लिम लीग के नेता अडिग थे। वे समय सीमा को बढ़ाने के कतई पक्ष में नहीं थे। इस आयोग में रैडक्लिफ के अलावा शेष सभी सदस्य पेशे से वकील थे। जिन्ना

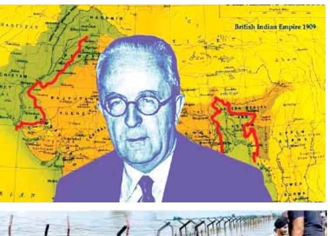

व नेहरू का सम्बन्ध भी वकालत से ही था। किसी भी सदस्य के पास ऐसा कोई अनुभव नहीं था। कोई भी नहीं जानता था कि विभाजन सीमा कैसे तैयार होती है। रैडक्लिफ को सिर्फ इस बात की सन्तुष्टि थी कि उनका प्राइवेट सैक्रेटरी क्रिस्टोफर ब्यूमैंट पंजाब की हर स्थिति से पूरी तरह वाकिफ था। पंजाब की प्रशासनिक व्यवस्था व वहां की ज़िन्दगी के बारे में लगभग पूरी जानकारी उसे थी।

अब इतिहासज्ञ व विशेषज्ञ इस बात को स्वीकारते हैं कि यदि थोड़ी सावधानी और सजगता से काम लिया जाता तो विभाजन की अकल्पनीय विभीषिका से बचा जा सकता था। ऐसे अनेक मंज़र सामने आए जबकि किसी एक गांव को बीच में से बांटना पड़ा। एक गांव का कुछ भाग पाकिस्तान को मिला, शेष हिन्दुस्तान को। रैडक्लिफ घनी आबादी वाले क्षेत्रों के बीच विभाजक रेखा के हक में था। मगर इससे कई ऐसे घर भी बंटे जिनके कुछ कमरे भारत में गए, कुछ पाकिस्तान में। रैडक्लिफ बार-बार एक ही दलील देता 'हम कुछ भी कर लें लोग बर्बादी तो झेलेंगे ही।' रैडक्लिफ ने ऐसा क्यों कहा, यह शायद स्पष्ट नहीं हो पाएगा, क्योंकि भारत छोड़ने से पहले उसने सारे नोट्स (अंतिम रपट के अलावा) नष्ट कर दिए थे ताकि बाद में विवादों के मुद्दे न उठें। वैसे भी उसे भारत की आबोहवा रास नहीं आ रही थी। वह जल्दी से जल्दी स्वदेश लौटना चाहता था। समूची विभाजक कार्यवाही यथासम्भव गुप्त रखी गई। अंतिम रपट (अवार्ड) 9 अगस्त, 1947 को तैयार हो गई थी, मगर उसे विभाजन से दो दिन बाद 17 अगस्त को ही सार्वजनिक किया गया।

रैडक्लिफ की उम्र उस समय सिर्फ 48 वर्ष थी। उन दिनों 8 जुलाई, 1947 से लेकर 9 अगस्त तक उसने किसी भी सामाजिक समारोह या गतिविधि में शिरकत नहीं की। वह सिर्फ अपने काम में ही व्यस्त रहता। थोड़ी सी अवधि में बहुत बड़े काम को अन्जाम देना आसान नहीं था। ज्यादातर मुसलमान तब भी यही मानते थे कि पाकिस्तान बनने के बाद भी हिन्दुस्तान में आने जाने की सहूलियत कायम रहेगी। अनेक समृद्ध मुसलमानों ने अपनी कई सम्पत्तियां बम्बई व दिल्ली में बदस्तूर बनाए रखीं। जिन्ना ने मालाबार हिल बम्बई (अब मुम्बई) स्थित अपनी कोठी बेची नहीं थी हालांकि दिल्ली वाली कोठी उन्होंने बेच दी थी। बम्बई से जिन्ना अनेक मामलों में जुड़े हुए थे। इनमें से एक कारण, अपनी बेगम रत्ती की स्मृतियां भी थीं।

प्रॉपर्टी का बंटवारे में रैडक्लिफ व्यावहारिक मामलों में कोरा था। अपनी नियुक्ति से पहले उसने वेतन भत्तों, परिवार-खर्च, नि:शुल्क यात्रा, नि:शुल्क रहन-सहन जैसी छोटी-छोटी शर्तें भी अपनी सरकार से लिखित में मनवाईं। ज़ाहिर है वह न तो राजनीतिज्ञ था, न ब्यूरोक्रेट। उसकी नियुक्ति उसकी पेशेवराना योग्यताओं के मद्देनजर ही हुई थी। मगर उसके महत्व का अंदाज़ा सबको तब लगा जब कांग्रेस व मुस्लिम लीग के शिखर नेताओं को अपना-अपना मांग पत्र उसे देने के लिए स्वयं जाना पड़ा। उसे एक पंजाबी अंगरक्षक दिया गया जो सदा कमर में दो पिस्तौलें रखता था। उसके एक हाथ में बंदूक होती थी मगर वह पुलिस यूनिफार्म में नहीं होता था। वह छाया की तरह रैडक्लिफ के साथ चिपका रहता।

रैडक्लिफ 17 अगस्त को ही वापिस लौट गया। वह जानता था, बहुत सी दुखद घटनाओं के लिए उसे ज़िम्मेदार ठहराया जाएगा। स्वदेश वापसी पर उसे 'लॉ-लार्ड' का पद दिया गया। एक बार उससे एक पत्रकार ने पूछा था कि क्या वह फिर भारत जाना चाहेगा? उसका जवाब था, 'यदि कोई राजकीय हुक्म मिला, तब भी नहीं। मुझे लगता है कि यदि गया तो वहां दोनों पक्षों के लोग मुझे गोलियों से भून डालेंगे।'

रैडक्लिफ के करीबी लोगों के अनुसार विभाजन के रक्तपात की खबरों से वह बेहद तनाव में से गुज़रता रहा। मगर उसे सरकारी एवं राजकीय सम्मान मिलते रहे। वर्ष 1977 में एक 'विस्काउंट' के रूप में उसने आखिरी सांस ली। उसे शायद जीते जी इस बात का अहसास नहीं था कि सिर्फ छह सप्ताहों की नौकरी उसे भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास में एक दागदार पृष्ठ दे डालेगी।

देश प्रेम से निर्देशित हो आपकी पसंद : बी सुदर्शन रेड्डी

नई दिल्ली, (पंजेब केसरी) उपराष्ट्रपति चुनाव से पहले विपक्ष के उम्मीदवार बी सुदर्शन रेड्डी ने रविवार को सांसदों से अपील की कि वे पार्टी निष्ठा को अपने चयन का आधार न बनने दें और उन्हें इस पद के लिए जिताकर यह सुनिश्चित करें कि राज्यसभा लोकतंत्र के एक सच्चे मंदिर के रूप में स्थापित हो। वीडियो संदेश में रेड्डी ने सांसदों से कहा कि वह उनका समर्थन अपने लिए नहीं, बल्कि उन ''मूल्यों के लिए चाहते हैं जो हमें एक संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में परिभाषित करते हैं।''

रेड्डी ने संसद सदस्यों के लिए 12 मिनट से अधिक के अपने वीडियो संदेश में कहा, ''इस चुनाव में कोई पार्टी व्हिप नहीं है और मतदान गुप्त है। किसी राजनीतिक दल के प्रति निष्ठा नहीं, बल्कि देश के प्रति प्रेम ही आपके चुनाव का आधार होना चाहिए। आप सभी की नैतिक ज़िम्मेदारी है कि हम अपने प्रिय राष्ट्र की अंतरात्मा और आत्मा की रक्षा करें।''

उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश ने कहा, ''मुझे यह पद सौंपकर आप संसदीय परंपराओं की रक्षा करने, बहस की गरिमा बहाल करने और यह सुनिश्चित करने का चुनाव करेंगे कि राज्यसभा लोकतंत्र के सच्चे मंदिर के रूप में बनी रहे।'' उन्होंने कहा कि यह सिर्फ उपराष्ट्रपति चुनने के लिए वोट नहीं है - यह भारत की भावना के लिए वोट है।

रेड्डी ने कहा, ''आइए, हम सब मिलकर अपने गणतंत्र को मजबूत बनाएं और एक ऐसी विरासत बनाएं, जिसे पाकर आने वाली पीढ़ियां गर्व महसूस करें।''सांसदों को भेजे अपने संदेश में रेड्डी ने कहा कि वह महान गणराज्य के उपराष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के रूप में विनम्रता और जिम्मेदारी की गहरी भावना के साथ उनके सामने खड़े हैं।

उन्होंने कहा, ''भारत का लोकतंत्र हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के सर्वोच्च बलिदान पर निर्मित हुआ है और दशकों तक उनकी दूरदर्शिता से पोषित हुआ है।'' रेड्डी ने कहा, ''आज, जब लोकतांत्रिक स्थान सिकुड़ रहा है और नागरिकों के अधिकार दबाव में हैं, तो हमारे लोकतांत्रिक गणराज्य की आत्मा की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है।''

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

प्रवाह

77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

विदेश नीति समय और स्थान, दोनों के अनुसार बदलती रहती है।
-विलियम फाफ

बदलते अंतरराष्ट्रीय समीकरणों को देखते हुए ट्रंप ने अपने पुराने रुख से पलटते हुए भारत के प्रति जो सकारात्मक बयान दिया है, वह उनकी कभी हां और कभी ना वाली शैली की एक बानगी है। इन बातों का तभी कोई अर्थ है, जब इनका असर भारत पर लगाए टैरिफ की दरों को कम करने के रूप में भी दिखाई दे।

कभी हां, कभी ना

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारत के प्रति सकारात्मक रुख दिखाते हुए प्रधानमंत्री मोदी को 'ग्रेट प्राइम मिनिस्टर' और भारत से रिश्ते को जो 'खास' बताया है, वह उनकी कभी हां कभी ना वाली शैली की बानगी है। हालांकि कुछ समय से दोनों देशों के रिश्तों में खटास आ गई है, लेकिन ट्रंप के ताजा बयान इस बात का संकेत देते हैं कि दोनों देशों के बीच रणनीतिक साझेदारी अब भी कायम है। ट्रंप के बयान में यह नरमी हताशा भरे उस बयान के ठीक बाद आई है, जिसमें उन्होंने कहा था कि लगता है, हमने भारत को खो दिया है। यह अच्छी बात है कि प्रधानमंत्री मोदी ने संतुलित ढंग से इस पर अपनी प्रतिक्रिया दी। गौरतलब है कि अगस्त में ट्रंप प्रशासन ने रूस से कच्चा तेल खरीदने के कारण भारतीय वस्तुओं पर 50 फीसदी तक का भारी दंडात्मक शुल्क थोप दिया, जिससे कुछ ही दिनों के भीतर दोनों देशों के दोस्ताना रिश्ते शत्रुतापूर्ण लगने लगे थे। लेकिन अब ट्रंप के रुख में बदलाव दर्शाता है कि जब घरेलू और अंतरराष्ट्रीय हित टकराते हैं, तो द्विपक्षीय रिश्तों में अप्रत्याशित मोड़ आते ही हैं। तिस पर ट्रंप की अपनी एक खास शैली तो है ही। दरअसल, भारत पर भारी टैरिफ थोपे जाने के चलते अमेरिकी मीडिया और राजनीतिक गलियारे में ट्रंप की नीतियों की आलोचना होने लगी थी। इस घरेलू दबाव के साथ-साथ भारत द्वारा नए व्यापारिक गंतव्यों की तलाश ने ट्रंप को अपने सुर बदलने पर मजबूर कर दिया। दरअसल, ट्रंप दबाव की रणनीति अपनाकर व्यापार वार्ता में भारत से अतिरिक्त फायदा उठाना चाहते थे, जबकि भारत ने पूरी कामयाबी के साथ यह दर्शाया है कि वह किसी के आगे झुके बगैर रणनीतिक स्वायत्तता के सिद्धांत का पालन करता है और स्वतंत्र रूप से विभिन्न देशों से रिश्ते बनाए रखना चाहता है। अब जबकि राष्ट्रपति ट्रंप और प्रधानमंत्री मोदी के ट्रंप के बाद दोनों देशों के रिश्ते में सुधार की संभावना दिख रही है, तो यह देखना दिलचस्प होगा कि क्या वाकई में अमेरिका के रुख में कोई बदलाव आया है या जैसा कि कुछ रणनीतिक विश्लेषक कहते हैं कि ट्रंप के बयान पर फिलहाल कोई ठोस नतीजा नहीं निकाला जा सकता। दरअसल यह घटनाक्रम अमेरिका, रूस एवं चीन के बीच चल रहे अंतरराष्ट्रीय सत्ता संतुलन का एक जीवंत प्रतीक भी है, जिसमें भारत अपनी स्वायत्त कूटनीति से अपनी जगह बना रहा है। बहरहाल, पिछले दिनों हुए घटनाक्रमों के बाद ट्रंप द्वारा रिश्तों में जमी बर्फ पिघलाने की पहल किया जाना कूटनीति के तराजू पर भारत का पलड़ा भारी रहने का संकेत तो देता ही है। फिर भी ट्रंप के बार-बार बदलते रुख के मद्देनजर भारत को खुद को संतुलित रखते हुए कूटनीतिक सतर्कता बनाए रखने की जरूरत है।

संगीत और संस्कृति के सेतु

भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे।

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है। विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों व बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका की जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे। यह बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनकी जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है। भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है।

भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली, जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। वे सशरीर हमारे बीच नहीं हैं, पर उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वह आवाज सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है।

नरेंद्र मोदी
प्रधानमंत्री

भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोकधुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया। संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। वे भीतर से बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले।

ज्योति प्रसाद अग्रवाला और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया। सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तक ले गई। वे बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं, और मुझे बहुत गर्व होता है। उन्होंने अमेरिका में भी कुछ समय बिताया। वहां नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वे पॉल रोबसन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और सिविल राइट्स नेता थे। रोबसन का गीत *Ol' Man River* उनके कालजयी गीत *बिस्टीरनो परोरे* की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनॉर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया। भूपेन हजारिका संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। उनके पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, पर भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए। रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर एजुकेशनल डॉक्यूमेंटरी तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे। जहां भी गए, नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया।

उनकी रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं, साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे...और आज भी पा रहे हैं। उनकी जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिंदी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वह बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। *दिल हूम हूम करे* में जो पीड़ा बहती है, वह सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वे पूछते हैं, *गंगा बहती है क्यूं,* तो ऐसा लगता है, मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों।

उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। उन्होंने राजनीति को अपना कॅरिअर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे। भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवॉर्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। वह कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है, और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है।

मुझे 2011 का वह समय याद है, जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी, जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। यह देखना सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है।

भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल को जोड़ने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है। उनका जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें मानवीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है। भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

एक्हार्ट टॉल्ल

प्रतीक्षा में लोग अपना पूरा जीवन निकाल देते हैं। इंतजार करना मन की स्थिति है। इसका अर्थ है कि आप भविष्य चाहते हैं, आपको वर्तमान नहीं चाहिए। जो हमारे पास है, वह हमें नहीं चाहिए और जो नहीं है, वह चाहिए।

प्रतीक्षा में लोग जीवन निकाल देते हैं

हम भविष्य में जाने के लिए इतने बेचैन रहते हैं कि वर्तमान बस वहां पहुंचने का साधन बन कर रह जाता है। जब 'यहां' होने पर 'वहां' पहुंचने की चाह होती है या फिर वर्तमान में रहकर भविष्य में पहुंचने की इच्छा होती है, तो तनाव पैदा होता है। यह एक ऐसा विभाजन है, जो हमें अंदर से चीर देता है। क्या अतीत आपका बहुत ध्यान आकर्षित करता है? आपकी उपलब्धियां, रोमांचक किस्से, अनुभव या वे सारी बुरी चीजें जो आपके साथ हुई हों, क्या आप उनके बारे में बोलते या सोचते हैं? क्या आपकी विचार-प्रक्रिया अपराधी भाव, घमंड, आक्रोश, गुस्सा, खेद या आत्मग्लानि पैदा कर रही है? अगर हां, तो आप न केवल अपने मन में झूठे आत्मभाव को प्रबल कर रहे हैं, बल्कि अतीत को संजोकर अपने शरीर को जल्दी बूढ़ा कर रहे हैं। इसका जीता-जागता उदहारण उन लोगों में मिल जाएगा, जो अपने अतीत को पकड़े रखते हैं।

हर क्षण अतीत के बारे में सोचना ठीक नहीं है। जब वर्तमान में उसकी जरूरत हो, तभी उसका उल्लेख करें। इस क्षण में निहित शक्ति का और आत्मा की पूर्णता का अनुभव करें। अपनी उपस्थिति का अनुभव करें। आपके मन में बहुत से विचार हैं, जो चिंता में डाल रहे हैं। आपका मन काल्पनिक भविष्य में खुद को देख रहा है और भय पैदा कर रहा है। किसी भी दशा में आप ऐसी परिस्थिति का सामना नहीं कर सकते, क्योंकि उसका अस्तित्व ही नहीं है। वह एक मानसिक छायाभास है। वर्तमान क्षण को स्वीकार करके आप जीवन उजाड़ने वाले पागलपन को रोक सकते हैं। अपनी श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक हो जाएं। वायु को अपने शरीर के अंदर व बाहर आता-जाता महसूस करें। अपने अंतःशक्ति क्षेत्र को महसूस करें। वास्तविक जीवन में, मन की काल्पनिक बातों के बजाय हमें केवल वर्तमान क्षण का सामना करना होता है। स्वयं से पूछें कि इस क्षण में क्या 'परेशानी' है। आप वर्तमान क्षण का हरदम सामना कर सकते हैं, पर भविष्य का कभी नहीं, न ही इसकी जरूरत है। जब आपको जरूरत हो, तब जवाब, सामर्थ्य, सही कर्म व साधन सभी मौजूद होंगे, उससे पहले नहीं, न ही बाद में। क्या हम आदतन 'प्रतीक्षक' हैं? जीवन में कितना समय हम इंतजार करने में गंवा देते हैं। ट्रैफिक जाम में, हवाई अड्डे में, किसी के आने के लिए या काम खत्म करने के इंतजार में, इसे मैं छोटा इंतजार कहता हूं। अगली छुट्टियों का, अच्छी नौकरी का, बच्चों के बड़े होने का, अर्थपूर्ण रिश्तों को पाने का, सफलता का, पैसे बनाने का, महत्वपूर्ण बनने का, आत्म साक्षात्कारी बनने का इंतजार करना लंबा इंतजार होता है।

यह कोई असामान्य बात नहीं है कि, 'जीवन जीना' शुरू करने की प्रतीक्षा में लोग अपना पूरा जीवन निकाल देते हैं। इंतजार करना मन की स्थिति है। इसका अर्थ है कि आप भविष्य चाहते हैं, आपको वर्तमान नहीं चाहिए। जो हमारे पास है, वह हमें नहीं चाहिए और जो नहीं है, वह चाहिए। हर इंतजार के साथ आप अपने वर्तमान में, जहां नहीं होना चाहते हैं और कल्पित भविष्य में, जहां आप होना चाहते हैं, में एक अंतर्द्वंद्व पैदा कर देते हैं। वर्तमान के खोने से हमारे जीवन की गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

स्वयं को समझें

सूत्र

हम भागने के इतने आदी हो गए हैं कि हमें स्वयं को समझने का समय नहीं मिलता। हम कभी अतीत, तो कभी भविष्य की ओर चले जाते हैं। इस दौड़-भाग में उम्र का आधे से अधिक हिस्सा निकल जाता है और अधिकांश लोग उस भविष्य को नहीं पाते, जिसका उन्होंने सपना देखा था। स्वयं को समझें, वर्तमान में रहें। यहीं से भविष्य का रास्ता तय होता है।

दूसरा पहलू

हरियाणा के झज्जर जिले के औद्योगिक क्षेत्र बहादुरगढ़ में गालियां छुड़ाने की पहल का हो रहा सकारात्मक असर।

बहादुरगढ़ में हैं, तो जरा 'जबान संभाल के' बोलें

गालियां राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा हो गई हैं। गालियां तरक्कीपसंद समाज की निशानी नहीं होतीं। ये कमजोर और अविकसित समाज का ही संकेतक हैं। इसके बरक्स दिल्ली से सटे हरियाणा के बहादुरगढ़ (झज्जर) में संघर्षशील जनकल्याण सेवा समिति सांखोल का गाली-मुक्त समाज बनाने का 'जबान संभाल के' अभियान उम्मीद की एक नई किरण है। यह पहल सिर्फ दो साल पुरानी है। इस वर्ष रक्षाबंधन पर ब्रिगेडियर होशियार सिंह मेट्रो स्टेशन के बाहर हस्ताक्षर अभियान चलाकर संकल्प दिलाया कि हम न किसी को गाली देंगे, न ही देने देंगे। यहां महिलाओं ने ऐसी राखियां बनाकर बांटीं, जिनमें भाइयों से गाली न देने का वचन लेने का संदेश लिखा था।

नवीन सिंह पटेल

संयोग से यह पहल हरियाणा ग्रामीण विकास संस्थान नीलोखेड़ी (करनाल) से जुड़ी एक महिला (ललिता राठी) के ही दिमाग में कौंधी थी। क्यों? के सवाल पर ललिता बताती हैं कि मेरी परवरिश गाली-मुक्त परिवार में हुई। कॉलेज में भी ऐसा माहौल नहीं देखा। लेकिन, कुछ बरस पहले जब महिला सरपंचों को ट्रेनिंग देने गांवों में गई, तो छोटे-छोटे बच्चों तक को गालियां देते पाया। यहीं से विचार आया। बिगड़ी जबान को सुधारने का संबल बने संस्था के अध्यक्ष और सोनीपत के पीएमश्री केंद्रीय विद्यालय में भूगोल शिक्षक मनीष सांखोल और उनकी 350 सरकारी मुलाजिमों की सामाजिक कार्यों से जुड़ी टीम। अब इसी के संकल्पों में नया टैग है-गाली-मुक्त समाज की कोशिश। मनीष कहते हैं, हमने विचारों की चिंगारी को आग लगा दी है, ज्वाला बनाने का दायित्व सबका है।

ब्रिगेडियर होशियार सिंह मेट्रो स्टेशन के बाहर हस्ताक्षर अभियान चलाकर संकल्प दिलाया गया कि हम न किसी को गाली देंगे, न ही देने देंगे।

हरियाणा ग्रामीण विकास संस्थान नीलोखेड़ी (करनाल) से जुड़ीं ललिता राठी की पहल पर 'जबान संभाल के' अभियान की शुरुआत हुई। 350 सरकारी मुलाजिम भी इस पहल का हिस्सा बन गए हैं।

महाभारत के शांति पर्व में कहा गया है कि 'वाणी ही मित्र बनाती है, वाणी ही शत्रु।' बौद्ध दर्शन में भी गाली या कटु भाषा वर्जित है। कबीर, तुलसी, नानक जैसे संतों का सार है...कटु वचनों से वैमनस्य फैलता है, मधुर वाणी से प्रेम। विश्व इतिहास देखें, तो यूनानी सभ्यता ने भी अपमानजनक शब्दों को दंडनीय माना है। चीन-जापान भी गालियों को अत्यंत असभ्य मानते हैं। यूरोपीय समाज में गालियां आम बोलचाल में आ गईं, लेकिन कई सभ्यताओं में इनका प्रयोग निंदनीय है। हालांकि, गालियों पर शोध निष्कर्षों से चर्चित हुए कील विश्वविद्यालय के मनोविज्ञानी रिचर्ड स्टीफेंस के मुताबिक, गालियां दे लेने से दर्द घट जाता है। उन्हें कुछ शोध में मांसपेशियों की ताकत और सहनशक्ति बढ़ी मिली। वहीं जो लोग रोजाना गालियां देते हैं, उन्हें फायदा कम होता है। 'जबान संभाल के' जैसे सामाजिक यज्ञों में हम-आप भी कुछ आहुतियां दे दें, तो एक ऐसा आदर्श समाज बनते देर नहीं लगेगी, जहां शब्द घाव नहीं देंगे, बल्कि मरहम हो जाएंगे।

आंकड़े

कॉलेज रैंकिंग

हाल ही में जारी हुई उच्च शिक्षा की एनआईआरएफ रैंकिंग-2025 में देश के शीर्ष 100 कॉलेजों में सबसे ज्यादा संख्या तमिलनाडु के कॉलेजों की है।

तमिलनाडु	17
महाराष्ट्र	11
उत्तर प्रदेश	9
दिल्ली	8
कर्नाटक व पंजाब	6-6

आंकड़े टॉप-100 में जगह बनाने वाले शीर्ष राज्यों के कॉलेजों की संख्या के | स्रोत : MoE

बीकानेर के गांवों में जल का अभाव बढ़ता जा रहा था। लोग घबरा गए। श्रीहरिरामदास जी बोले, 'घबराओ नहीं, ईश्वर सब आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप ही करेंगे।'

ईश्वर करेंगे सबकी पूर्ति

सिंहथल नामक गांव में श्रीहरिरामदास महाराज का जन्म हुआ। बचपन में ही ज्योतिष, योग, वेदांतादि शास्त्रों में कुशल हो गए थे। अनंतर भक्ति, विरक्ति और उपरति के तीव्र भावों के कारण श्रीहरिरामदास जी दुलचासर गांव में महात्मा श्रीजैमलदास जी महाराज के शरणागत हुए।

श्रीहरिरामदास जी शाम होते ही सिंहथल से सात कोस दूर दुलचासर गांव में गुरुदेव के पास जाते और रात भर सत्संग करते, सूर्योदय से पहले लौट आते। इस तरह छह महीने बीत गए। इसके बाद श्रीगुरुदेव की विशेष आज्ञा के कारण श्रीहरिरामदास जी रोज न जाकर महीने में एक बार जाते, और कुछ ही दिनों में गुरु कृपा से पूर्ण योगी हो गए। एक बार श्रीहरिरामदास जी के शिष्यों ने जीवित महोत्सव के दिन जनसुनवाई का आयोजन किया। जनसुनवाई में पता चला कि जिन्हें पानी का ठेका दिया था, वे पर्याप्त पानी नहीं पहुंचा सके। बीकानेर के गांवों में जल का अभाव दिन-प्रति-दिन बढ़ता जा रहा था। लोग घबरा गए। श्रीहरिरामदास जी बोले, 'घबराओ नहीं, ईश्वर सब आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप ही करेंगे।' इतना कहकर श्रीहरिरामदास जी स्वयं अपनी कुटी में ध्यानस्थ हो गए। एक-दो घड़ी में प्रभुकृपा से निर्मल आकाश में मेघों ने आकर गर्जना की और चारों तरफ जल-ही-जल कर दिया। बड़े आनंद से महोत्सव की समाप्ति हुई और लोग अपने-अपने स्थानों को चले गए।

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला
पुराने पन्नों से — 08 सितंबर, 1954

गोवा पर वार्ता फिर रुकी पुर्तगाल तैयार नहीं

गोआ पर वार्ता फिर रुकी
पुर्तगाल तैयार नहीं

गोवा की स्थिति की जांच करने के लिए भारत और पुर्तगाल के बीच जो वार्ता होने जा रही थी, वह अनिश्चित समय के लिए स्थगित हो गई। पुर्तगाली मंत्री डॉक्टर गरीन बोले वार्ता के लिए पुर्तगाल तैयार ही नहीं है।

आखिर महिलाओं की प्रगति का पैमाना क्या है

इसमें दो राय नहीं कि आजादी के बाद महिलाओं की प्रगति आश्वस्त करने वाली रही, लेकिन इसका दूसरा पक्ष भी है।

श्यौराज सिंह 'बेचैन' | समाज

आजादी के बाद समग्रता में देखें, तो महिलाओं की प्रगति आशाजनक और भविष्य के प्रति आश्वस्त करने वाली रही है। शासन में वे शीर्ष पदों पर विद्यमान हैं, उच्च शिक्षा में वे इग्नू, जेएनयू, एएमयू, इलाहाबाद, जामिया, जैसे कई विश्वविद्यालयों की कुलगुरु हैं, प्रशासन में वे सचिव, डीएम, एसडीएम, तो सर्वोच्च न्यायालय में जज हैं। खेलों में वे पुरुषों से आगे हैं, सेना में वे नेतृत्वकारी भूमिका में हैं, दृश्य और श्रव्य मीडिया के दोनों माध्यमों में वे संपादकों की श्रेणी में भी हैं, बहसों-विमर्शों में उनकी प्रखरता किसी से छिपी नहीं है। परंतु यह एक पक्ष है, स्त्रियों की अधिकार चेतना के भुक्त-भोगी क्रियाकलापों का, दूसरा पक्ष अब भी दर्शाता है, स्त्रियों की प्रगति की राह आसान नहीं है।

एससी/एसटी में ऐसी लाखों बालिकाएं, जिन्हें शिक्षा, सेवा का स्वतंत्रता सुलभ कोई अधिकार नहीं मिल पाया है। पचास साल पहले जो महिलाएं कला, साहित्य, मीडिया और उच्च शिक्षा में आ गईं, उन्हीं में से एक

नगण्य संख्या ने विवाह संस्था का विरोध करके मातृत्व धारण करने से इन्कार कर सरोगेसी मदर से बच्चे पैदा कराने शुरू किए। अभिजात्यपन दर्शाने के लिए सिगरेट, दारू का इस्तेमाल करने, विवाह के बजाय लिवइन में रहने इत्यादि प्रकार की शैली का जीवन जीने लगीं। इनमें वैचारिक संतुलन भी नहीं है। इन्हीं में से कुछ उच्च पदों पर आसीन हो रही हैं।

कठिनाइयां खासकर असंगठित क्षेत्रों व निजी कंपनियों में काम कर रही महिलाओं को है। उनके लिए न तो काम के आठ घंटों पर अमल होता है और न उन्हें सवेतन मातृत्व अवकाश दिया जाता है। भवनों, पुलों, सड़कों के निर्माण कार्यों में लगी श्रमिक महिलाओं को पुरुषों से कम मजदूरी मिलती है। मां बनने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति अतिरिक्त ध्यान, दवाएं, पोषित आहार, तनाव रहित वातावरण देने की जरूरत होती है। माताएं स्वस्थ रहेंगी, तो उनकी स्वस्थ संतानें राष्ट्र निर्माण में सकारात्मक योगदान देने में समर्थ होंगी।

अंतरराष्ट्रीय टेनिस खिलाड़ी व कामयाब बेटी राधिका यादव की हत्या ने कितने दिलों को तोड़कर रख दिया। ऐसी क्या आफत आ गई थी पिता के सामने कि बेटी का ही खून कर दिया। अधिक से अधिक बेटी अपनी पसंद का जीवनसाथी चुन लेती। इससे भी दुखद गोविंदपुरम में अविनाश व अंजलि, दोनों भाई-बहन ने आत्महत्या कर ली। अंजलि एक्सपोर्ट कंपनी में टीम लीडर के तौर पर कार्यरत थी और अविनाश तो सरकारी सेवा में था। आत्महत्या के लिए उन्होंने सुसाइड नोट में अपनी सौतेली मां को जिम्मेदार बताया। इस केस में इन दोनों बच्चों को ज्यादा से ज्यादा घर से निकलना पड़ता। युवा थे, आत्मनिर्भर थे, मरने की क्या जरूरत थी? जाहिर है युवा पीढ़ी को कोई समझाने और समझने वाला नहीं है।

भारत में ऐसे गांवों की संख्या अब भी कम नहीं है, जहां लड़कियों के लिए स्कूल नहीं हैं या प्राथमिक स्कूल के बाद गांव से बाहर केवल लड़कों के लिए ही पढ़ने के अवसर हैं। अमेरिका की तरह हमारे यहां यदाकदा विविधता और सकारात्मक कार्रवाई की बातें होती हैं, पर ज्ञान के कई क्षेत्रों में स्त्रियों की भागीदारी को लेकर विविधता दिखाई नहीं पड़ती। महिलाओं की प्रगति का एक रूप वरिष्ठ लेखिका क्षमा शर्मा के लेख में पढ़ने को मिला, 'ट्रेडिशनल, लाइफ मूवमेंट में भी बहुत से लोग स्त्रियों को यह सिखा रहे हैं कि शादी किसी अच्छे इन्सान से न करके, किसी अमीर से करो, जिससे जिंदगी भर ऐश कर सको। किसी भी विचार से बड़ा पैसा है।'

नब्बे फीसदी एससी और पिच्चानवे फीसदी एसटी छात्राएं पहली पीढ़ी हैं, जो उच्च शिक्षा में आ रही हैं। उन पर जल्दी शादी का दबाव होता है और वे जल्दी मां बनती हैं। जीविका के लिए घर पर निर्भर रहेंगी, तो निर्णय लेने की क्षमता की कमी का एक भयावह एहसास होगा। अतः लड़कों से पहले लड़कियों के लिए उच्च शिक्षा सुनिश्चित होनी चाहिए। देश में कला, संस्कृति, साहित्य, सिनेमा, ज्ञान-विज्ञान, खेल, मीडिया में उत्तरोत्तर आधुनातन उन्नति का चमत्कार देखना है, तो वह स्त्रियां ही दिखा सकती हैं, जिसके प्रति संविधान निर्माता आश्वस्त थे। महिलाओं के लिए 'हिंदू कोड बिल' का निर्माण करने तथा स्त्री के वोट का मूल्य पुरुष के वोट के बराबर निर्धारित कराने वाले डॉ. भीमराव आंबेडकर ने महिलाओं के सर्वांगीण विकास को प्राथमिकता देने पर बल दिया।

'डिप्रेस्ड क्लासेज' विमेन कॉन्फ्रेंस 1942 को संबोधित करते स्वतंत्रता की घोषणा होने के पांच साल पूर्व, उच्च हिंदू स्त्रियों से कहा था कि वे बहिष्कृत समाज की स्त्रियों के साथ स्त्री सुलभ बहनापा कायम करें, उन्हें अपने रहने, पहनने और पढ़ने-लिखने की सीख देना अपना नैतिक दायित्व समझें, जिससे कि सांस्कृतिक साझापन का विकास हो। स्वराज मिलने और संविधान लागू होने के पश्चात सामाजिक विकास को ध्यान में रखकर डॉ. आंबेडकर ने कहा था, 'समाज की प्रगति को मैं महिलाओं की प्रगति का पैमाना मानता हूं।'

-लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष हैं।

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

खतरे में दिल

नमूना पंजीयन सर्वेक्षण के नए आंकड़े विशेषकर दिल के प्रति सजग रहने की वकालत करते हैं। *कॉजेज ऑफ डेथ इन इंडिया : 2021-23* शीर्षक से जारी रिपोर्ट बताती है कि भारत में सबसे अधिक करीब 31 फीसदी मौतें दिल की बीमारियों के कारण होती हैं। पहले तो ढलती उम्र में दिल धोखा दिया करता था, लेकिन सर्वेक्षण में पता चला है कि 30 से अधिक उम्र वाले लोगों में मौत की सबसे बड़ी वजह यही है। देश के 28 राज्यों और आठ केंद्रशासित क्षेत्रों में करीब 88 लाख लोगों पर किए गए इस सर्वेक्षण से यह पता लगाने की कोशिश की गई थी कि भारत में मौत की वजह क्या है और किस बीमारी से कितनी जान जा रही है? भारत के महारजिस्ट्रार की निगरानी में यह सर्वेक्षण किया गया, जो बताता है कि भारतीयों में मौत की सबसे बड़ी वजह (56.7 फीसदी) गैर-संक्रामक रोग हैं, जिसके बाद सांस के संक्रमण से लोगों की जान (9.3 प्रतिशत) जा रही है। फिर, कैंसर और ट्यूमर, सांस संबंधी अन्य रोगों का स्थान आता है। वैसे, नवीनतम 2022 के वैश्विक आंकड़े भी यही बताते हैं कि दुनिया में सबसे अधिक मौतें (लगभग 32 प्रतिशत) हृदय संबंधी बीमारियों से ही होती हैं।

इसमें संदेह नहीं कि बदलती जीवनशैली ने अब दिल के रोगियों की संख्या बढ़ा दी है। कोविड-19 पर भी इसका कुछ हद तक ठीकरा फोड़ा जाता है। हालांकि, डॉक्टरों का स्पष्ट मानना है कि नशे के सेवन, बीमार करने वाले खान-पान (अत्यधिक नमक, चीनी और वसा आदि) और शारीरिक निष्क्रियता से बचा जाए, तो हृदय रोगों से काफी हद तक बचाव हो सकता है। जरूरी यह भी है कि बीमारियों की जल्द पहचान के लिए समय-समय पर टेस्ट वगैरह करवाए जाएं। मगर कभी-कभी जान-बूझकर, तो कभी मजबूरीवश हम इन सबकी अनदेखी करते रहते हैं। विशेषकर युवा व किशोर आबादी में जंक फूड की दीवानगी इस कदर बढ़ गई है कि भारत मोटापे और अधिक वजन से ग्रस्त वयस्कों वाले देशों में चीन के बाद दूसरे स्थान पर आता है। 2021 में यहां की 18 करोड़ आबादी मोटापे की शिकार थी। अत्यधिक वजन सीधे तौर पर दिल की बीमारियों से जुड़ा है। मोटापे से रक्तचाप बढ़ने के साथ-साथ दिल की धड़कन अनियमित हो सकती है और शरीर में कोलेस्ट्रॉल का स्तर भी बढ़ सकता है, जो हृदयाघात की बड़ी वजहों में एक है। इन खतरों को देखते हुए ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लाल किले से मोटापा कम करने का आह्वान किया था।

पहले ढलती उम्र में दिल धोखा दिया करता था, लेकिन एक नए सर्वेक्षण में पता चला है कि अब 30 से अधिक उम्र वाले लोगों में मौत की सबसे बड़ी वजह यही है।

जाहिर है, हृदय रोग के खिलाफ एक समग्र अभियान चलाने का वक्त आ गया है। ऐसी किसी पहल की जरूरत इसलिए भी है, क्योंकि तथ्य यही बताते हैं कि नशे से दूरी बरतने, खान-पान में नमक का इस्तेमाल कम करने, फल व हरी सब्जियों का सेवन बढ़ाने और नियमित शारीरिक गतिविधियों से हृदय रोग के जोखिम को कम करने में सफलता मिल सकती है। इसका अर्थ है कि स्वस्थ जीवनशैली के लिए लोगों को जागरूक करना निहायत जरूरी है। इसमें तकनीक की भी मदद ली जा सकती है। हमारे फोन में ही ऐसे कई एप हैं, जिनसे हम अपनी सेहत की निगरानी कर सकते हैं। स्मार्टवाच से तो दिल की धड़कन भी मापी जा सकती है। वैसे, इन आधुनिक उपकरणों पर पूरी तरह भरोसा नहीं किया जा सकता और विशेषज्ञ डॉक्टरों की राय ही मायने रखती है, लेकिन यदि जन-स्वास्थ्य के साथ तकनीक का बेहतर तालमेल बिठा लिया जाए, तो परिणाम अधिक फलदायी हो सकते हैं। हमें इस दिशा में प्रयास तेज करने चाहिए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 08 सितम्बर, 1950

सड़क-अनुसन्धान

नई स्थितियां नई आवश्यकताएं उत्पन्न करती हैं। यातायात के भारी और द्रुतगामी साधनों ने सड़कों की ओर नये रूप में ध्यान देने की प्रेरणा दी है। पहले मन्दगामी और हल्की गाड़ियां होती थीं, जिससे सड़कों पर उतना भार नहीं पड़ता था, जितना अब पड़ने लगा है। अतः मामूली सड़कें थोड़ी सार-सम्भाल में बहुत समय तक काम दे सकती थीं। भारी और द्रुतगामी गाड़ियों के लिए सड़कों में कोलतार व सीमेंट के सम्मिश्रण हुए तथा उसकी देखभाल भी बढ़ी, परंतु ऐसा लगता है कि यह सब भी पर्याप्त नहीं हुआ और अब इस काम को ढंग से वैज्ञानिक रूप में करने का श्रीगणेश किया जा रहा है। राजधानी के निकट, दिल्ली-मथुरा सड़क पर, केन्द्रीय सड़क अनुसंधानशाला का शिलान्यास उसका मूर्त रूप है।

सड़क-अनुसंधानशाला के संबंध में, शिलान्यास के समय, भारत की वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के डायरेक्टर डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर ने बताया कि इसका विचार 1943 में नागपुर में हुए विभिन्न प्रांतों और राज्यों के चीफ इंजीनियरों के सम्मेलन में सामने आया था। सम्मेलन की मान्यता थी कि विभिन्न स्थानों की जमीन या मिट्टी के वैज्ञानिक परीक्षण पर अधिक पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। साथ ही, उस सम्मेलन ने यह भी महसूस किया कि भविष्य में काफी समय तक हमारे गांवों की सड़कें मिट्टी की ही रहेंगी। अतः गांवों की सड़कें ठीक ढंग से बढ़ें, इसके लिए उसने देश के विभिन्न भागों में ऐसी परीक्षणशालाएं खोलने पर जोर दिया, जिसमें स्थानीय मिट्टी की जांच-पड़ताल करके यह पता लगाया जा सके कि किस रूप में उससे बनी सड़क मजबूत और दीर्घजीवी रह सकती है। इसी विचार ने बदलकर सड़क-अनुसंधानशाला का रूप ले लिया है और इस अनुसंधानशाला में सड़कों संबंधी सब पहलुओं की जांच-पड़ताल करके यह निश्चय किया जायेगा कि कहां पर वहां की मिट्टी में किन चीजों का किस परिमाण में मिश्रण करके सड़क बनाई जाये।

भारत की सड़कों का जहां तक प्रश्न है, डॉ. भटनागर बताते हैं कि पश्चिमी देशों में तो प्रगति के साथ सड़कों के निर्माण तथा सुधार का मेल बैठता रहा है, परंतु भारत में मोटर-यातायात में काफी वृद्धि हो जाने पर भी सड़कें न तो काफी हैं और न उनकी प्रगति ही संतोषजनक है।

भूपेन हजारिका से धन्य हुआ भारत

यहां स्कैन करें

नरेंद्र मोदी | प्रधानमंत्री, भारत

आज जब भूपेन दा के जन्म शताब्दी वर्ष का हम आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे; संगीत, कला व संस्कृति के लिए और काम करेंगे।

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज 8 सितंबर का दिन बहुत खास है। विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डॉ भूपेन हजारिका की जन्म जयंती है। वह भारत की सबसे असाधारण और भावुक आवाजों में से एक थे। यह बहुत सुखद है कि आज उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है।

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं, जो धुन से भी आगे जाती थीं। वह केवल गायक नहीं, लोगों की धड़कन थे। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली, जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। वह सशरीर हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वह आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है। भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया। समाज के हर वर्ग के लोगों से वह मिले, लेकिन अपनी असमिया जड़ों से वह हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोक धुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने।

बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी थी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकॉर्ड कर लिया। लेकिन संगीत उनके व्यक्तित्व का एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अगरवाला और विष्णु प्रसाद राभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला, और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया। सीखने की यही लगन उन्हें कॉटन कॉलेज, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तक ले आई। वह बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं, और मुझे बहुत गर्व होता है।

काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां वह पॉल रॉबसन से मिले, जो एक दिग्गज कलाकार और मानवाधिकारवादी नेता थे। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनोर रूजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें गोल्ड मेडल भी दिया। भूपेन दा संगीत के साथ-साथ मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। उनके पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वह भारत लौट आए और संगीत साधना में डूब गए।

उनकी रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं, और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं और किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे...और आज भी पा रहे हैं।

भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिंदी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वह हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। *दिल हूम-हूम करे* में जो पीड़ा बहती है, वह सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वह पूछते हैं, *ओ गंगा बहती है क्यूं*, तो ऐसा लगता है, मानो हर आत्मा को झकझोरकर जवाब मांग रहे हों। उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया और महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा।

सन् 1967 में वह असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे। देश की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादा साहब फाल्के अवॉर्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और एनडीए सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी।

मुझे 2011 का वह समय याद है, जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा, उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई। वही नदी, जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। अब यह देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका कल्चरल ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है।

भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। साल 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तब मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल, इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है। भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनका संगीत हमें माननीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है।

भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला व संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे और भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं!

कट्टरपंथियों के आगे घुटने टेकती सेकुलर पार्टियां

यहां स्कैन करें

सुहेल वहीद | लेखक एवं पत्रकार

भारत में सेक्युलर होने का दावा करने वाली सियासी पार्टियां मुसलमानों के कट्टर तबके के आगे घुटने क्यों टेक देती हैं? ताजा मामला मशहूर शायर और पूर्व सांसद जावेद अख्तर का है, जिन्हें पश्चिम बंगाल उर्दू अकादमी ने 'हिंदी फिल्मों में उर्दू का किरदार' विषय पर चार दिवसीय समारोह में आमंत्रित किया, लेकिन जमीयते-उलमा-ए-हिंद के कड़े विरोध पर राज्य की ममता बनर्जी सरकार ने यह कार्यक्रम ही रद्द करा दिया।

पश्चिम बंगाल को अपेक्षाकृत अधिक सुसंस्कृत समाज माना जाता है। भारत में पुनर्जागरण की शुरुआत बंगाल से ही हुई। भारतीयों के हिस्से में जो नौ नोबेल पुरस्कार आए हैं, उनमें से चार बंगाल से हैं। करीब 34 साल तक वाम मोर्चा सरकार के साये में रहा है बंगाल, फिर भी मजहबी संकीर्णता वहां दिख रही है। भाजपा की राजनीति को बुरा-भला कहकर मुसलमानों को अपने पाले में रखने वाले सेक्युलर सियासी दलों का वजूद मुस्लिम एकता और उनका मजहबी गैर-उदारवादी रवैये पर टिका नजर आता है। इसे समझने के लिए जरा सा पसमंजर (पृष्ठभूमि) में जाना होगा।

मशहूर शिक्षाविद डॉ रफीक जकरिया अपनी मशहूर किताब *राइज ऑफ मुस्लिम्स इन इंडियन पॉलिटिक्स* में लिखते हैं कि विभाजन से पहले कांग्रेस हमेशा मुसलमानों से एक दूरी बनाकर रखती थी। बंटवारे के बाद भी उसका यही रवैया रहा। उनका मत है कि मुसलमान कांग्रेस के साथ मन से कभी जुड़े ही नहीं। दूसरी तरफ, भारत में बचे 'इलीट' मुसलमानों का कांग्रेस के प्रति अनादर का भाव इतना बढ़ गया था कि कांग्रेस को वोट देने वालों को 'जुम्मन' कहकर चिढ़ाया जाता था। इसी जुम्मन को लेकर अकबर इलाहाबादी ने एक शेर कहा है, *कौंसिल में बहुत सैयद, मस्जिद में फकत जुम्मन*। साफ है, सरकार में अशराफ रहेंगे और चाकरी में अजलाफ। सरकारी नौकरी को तब जमायते-इस्लामी ने 'तागूत की नौकरी' यानी शैतान की नौकरी इसीलिए कहा। यह एक साजिश थी, जिसे आम मुसलमान समझ नहीं पाया।

जमायते इस्लामी ने मुसलमानों को सरकार से विमुख रखा। मुसलमानों पर इसका मनोवैज्ञानिक व सामाजिक असर हुआ और उसने कांग्रेस से दूरी बनाने में भलाई समझी। इसका फायदा केरल, बंगाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश में कम्युनिस्टों को हुआ। यहां से मुसलमानों की पसंद बदलती गई। तमिलनाडु में डीएमके, आंध्र प्रदेश में तेलगु देशम और वाईएसआर कांग्रेस, तो तेलंगाना में कांग्रेस। महाराष्ट्र में कभी एनसीपी, तो हैदराबाद में मजलिस। असम में डेमोक्रेटिक फ्रंट, तो कश्मीर में नेशनल कॉन्फ्रेंस। बंगाल में कभी कम्युनिस्ट, तो कभी तृणमूल।

भाजपा को बुरा-भला कहकर मुसलमानों को अपने पाले में रखने वाले सेक्युलर दलों का वजूद मुस्लिम मजहबी कट्टर रवैये पर टिका है।

गैर-भाजपायी, गैर-कांग्रेसी सियासी दलों ने मुसलमानों के इस लपझप पैटर्न को बखूबी समझ लिया कि इनके पास अपना कोई सियासी फलसफा नहीं है, कोई राजनीतिक वैचारिकी नहीं है। इनके पास जो कुछ है, वह इनका मजहब है। इस मौके का फायदा बंगाल में ममता बनर्जी, बिहार में लालू यादव और नीतीश कुमार, यूपी में मुलायम सिंह यादव और मायावती तो दिल्ली में अरविंद केजरीवाल ने खूब उठाया। मुस्लिम समाज की धार्मिक एकता इन सेक्युलर दलों की देन है। मुस्लिम समाज अगर एकजुट नहीं रहा, तो इन पार्टियों के वजूद पर बन आएगी, क्योंकि हिंदू समाज की एक-दो जातियों पर ही टिका है इनका आधार। ये दल पूरे मुस्लिम समाज की हिमायत मजहब की बुनियाद पर हासिल करके ही मजबूत बने हुए हैं। मुसलमानों से यह कहते हैं कि उनके यहां समानता है और एकता है। मुस्लिम मजहबी रहनुमा इस बात से खुश हो जाते हैं। पश्चिम बंगाल में करीब 30 फीसदी मुस्लिम है, मगर वे समुचित तरक्की नहीं कर पा रहे। क्यों? कम्युनिस्ट शासन में कम से कम तरक्कीपसंद तबके को प्राथमिकता मिलती थी।

हाल में बुकर पुरस्कार से पुरस्कृत बानो मुश्ताक को कर्नाटक में एक दशहरे के कार्यक्रम में बुलाए जाने पर हिंदू संगठन विरोध में खड़े हो गए और उन्हें नहीं जाने दिया। बानो मुश्ताक जीवन भर मुस्लिम कटटरपंथ से लड़ती रहीं, फतवे झेलती रहीं और लिखती रहीं, अब हिंदू कट्टरपंथियों के निशाने पर आ गईं। इस घटना का मुसलमान इसीलिए विरोध तक नहीं कर पाए, क्योंकि वे खुद भी तो यही करते रहते हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

सुख में सुमिरन क्यों भूले

कबीर का एक प्रसिद्ध दोहा है, *दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करै न कोय। जो सुख में सुमिरन करे, तो दुख काहे को होय?* दुख में परमात्मा का स्मरण सभी करते हैं, लेकिन सुख के समय भूल जाते हैं। सच्चाई यह है कि जो सुख में स्मरण करेगा, उस पर दुख आएगा ही नहीं। इसे सभी जानते हैं, लेकिन इस पर अमल कोई नहीं करता। वस्तुतः सुख में भगवान की याद नहीं आती। सुख में तो लोग बेहोश हो जाते हैं। पूरा श्रेय खुद लेते हैं कि हमने श्रम किया, होशियारी की, इसलिए हमें सफलता मिली।

सारी प्रार्थनाएं दुख में या संकट में की जाती हैं। जब बाहर कोई सहारा नहीं मिलता, तब भगवान का सहारा याद आता है। अगर वास्तव में मंदिर में आने वाली भीड़ को देखें, तो पता चलेगा कि सारे कुछ न कुछ मांग लेकर आए हैं। कोई खुश नहीं है। सभी ढेर सारी समस्याओं से घिरे हैं। मगर वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए, तो दुख और परमात्मा का कोई मेल नहीं हो सकता, क्योंकि जिसे परमात्मा कहा जाता है, वह एक ऊर्जा है, जो आनंद से बनी है; सत-चित-आनंद उसका स्वभाव है; नैसर्गिक नियम के अनुसार, उसके पास दुख पहुंच ही नहीं सकता। जैसे तेल और पानी कभी एक-दूसरे में घुल नहीं सकते, वैसे ही दुख और परमात्मा का कभी मेल नहीं हो सकता। विरोधाभास यह है कि जब कोई दुखी नहीं होता, तो उसे परमात्मा की जरूरत भी नहीं रहती। यह बड़ा अजीब संबंध है मनुष्य और परमात्मा का। हम खुद को भक्त मानते हैं, लेकिन हमारा भगवान से सबंध डॉक्टर की भांति है। जब बीमार हैं, तभी डॉक्टर की याद आती है। यह रुग्ण भक्ति है, स्वस्थ नहीं है।

ओशो कहते हैं, धार्मिक आदमी मैं उसको कहता हूं, जिसे सुख में परमात्मा की याद आती है। लेकिन सुख में तो सिर्फ उसे ही याद आ सकती है, जिसे उसका अभाव खटक रहा हो। जिसके पास मकान हो, धन हो, सब हो और फिर भी कहीं कोई खाली जगह हो, जो धन से भी न भरती हो, पत्नी या पति से भी न भरती हो। उस खालीपन में परमात्मा के बीज का पहला अंकुरण होता है। क्या वह खाली जगह आपके पास है? क्या आपके हृदय का कोई कोना है, जो किसी भी भौतिक चीज से भरता नहीं है, खाली ही रह जाता है? सब कुछ होने के बावजूद ऐसा लगता है, कुछ भी नहीं है? अगर ऐसा है, तो आप सुख में सुमिरन करने के लिए तैयार होंगे।

मनुष्य और परमात्मा का संबंध अजीब है। हम खुद को भक्त मानते हैं, लेकिन हमारा भगवान से सबंध डॉक्टर की भांति है। जब बीमार हैं, तभी डॉक्टर याद आते हैं। यह रुग्ण भक्ति है, स्वस्थ नहीं।

मन के खालीपन का एहसास हमें उस दिन होगा, जिस दिन हम सजगता से अपने मन की बनावट को देखेंगे। वह एक ऐसा बर्तन है, जिसकी कोई तलहटी नहीं है। जिस मन में आप जन्मों-जन्मों से इच्छाएं-आकांक्षाएं डालते चले जा रहे हो, वह अभी तक खाली का खाली है।

अमृत साधना

शशि थरूर | सांसद

राष्ट्रपति ट्रंप द्वारा भारत से अमेरिकी आयात पर पचास फीसदी टैरिफ लगाना इस बात की ही याद दिलाता है कि सबसे मजबूत साझेदारियां भी एक लोक-लुभावन नेता की सनक के आगे कमजोर पड़ जाती हैं।

सभी को मिलने लगी एक समान शिक्षा

हर वर्ष 8 सितंबर को अंतरराष्ट्रीय साक्षरता दिवस मनाया जाता है। इसका उद्देश्य वैश्विक स्तर पर साक्षरता के प्रति जागरूकता बढ़ाना है। यह दिवस हमें याद दिलाता है कि साक्षरता केवल पढ़ने-लिखने की क्षमता नहीं, बल्कि गरिमा, अवसर और बुनियादी मानव अधिकार से जुड़ा एक मूलभूत साधन है। यूनेस्को ने अंतरराष्ट्रीय साक्षरता दिवस की शुरुआत की है। इसकी परिकल्पना 1965 में तेहरान में आयोजित 'निरक्षरता उन्मूलन पर शिक्षा मंत्रियों के विश्व सम्मेलन' के दौरान हुई और अगले साल इस दिवस की घोषणा हो गई। 1967 से यह मनाया भी जाने लगा। इस दिन शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और प्रगति का आधार मानते हुए दुनिया के हर समुदाय में साक्षरता फैलाने का आह्वान किया जाता है। अपेक्षा की जाती है कि तमाम देशों की सरकारें निरक्षरता के खिलाफ लड़ाई को तेज करेंगी। उल्लेखनीय है कि साक्षरता केवल अक्षरों की पहचान नहीं है। यह व्यक्तियों को जागरूक नागरिक बनाती है, उन्हें आर्थिक अवसरों से जोड़ती है और सामाजिक समानता की राह प्रशस्त करती है। डिजिटल युग में साक्षरता का स्वरूप और भी व्यापक हो गया है। यह लोगों को न केवल पुस्तकों, बल्कि डिजिटल माध्यमों से जानकारी तक पहुंचने, उसका मूल्यांकन करने और रचनात्मक ढंग से इस्तेमाल करने की क्षमता प्रदान करती है। अंतरराष्ट्रीय साक्षरता दिवस यह संकल्प लेने का दिन है कि शिक्षा और साक्षरता को हम सभी तक पहुंचाएंगे, ताकि एक ऐसा विश्व बन सके, जहां ज्ञान, समानता और अवसर सबके लिए उपलब्ध हों। अच्छी बात है कि सरकारें इस दिशा में तत्परता दिखा रही हैं। दुनिया में बढ़ रही साक्षरता दर से इसकी पुष्टि भी हो रही है।

विभूति बुपक्या, टिप्पणीकार

यह कोई छिपा तथ्य नहीं है कि पूरी दुनिया में साक्षर बनने की ओर लोग उन्मुख हुए हैं। इसमें स्थानीय सरकारें भी उनकी पूरी मदद कर रही हैं। फिर चाहे अफ्रीका के गरीब राष्ट्र हों या लातीन अमेरिकी देश, सभी जगह लोग शिक्षा और साक्षरता की अहमियत समझने लगे हैं। यही कारण है कि अंतरराष्ट्रीय साक्षरता दिवस की प्रासंगिकता दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

भारत में साक्षरता की ताकत अब हर कोई महसूस करता है। यह ध्यान में रखने की बात है कि एक समय हमारा देश भारत विश्व गुरु की हैसियत में था। यह ओहदा बाद में किसी न किसी वजह से हमसे छिन गया, लेकिन अब जिस तरह से शिक्षा की ओर हमारा फिर से रुझान बढ़ा है, उम्मीद है, जल्द ही विश्व गुरु की हैसियत फिर से हम जीने लगेंगे।

दीपक, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

विश्व साक्षरता दिवस

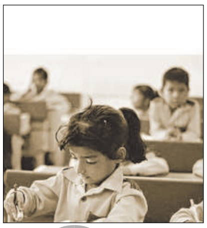

साक्षरता में जीवन मूल्य का दिखता अभाव

दुनिया भर में साक्षरता दर बढ़ रही है। विश्व में लगभग 87 फीसदी वयस्क आबादी साक्षर मानी जाती है, जिसमें पुरुषों (90 प्रतिशत) की तुलना में महिलाओं (82.7 प्रतिशत) में साक्षरता दर कम है। इससे यह तो स्पष्ट है कि लोग अब पढ़ाई-लिखाई की अहमियत समझ रहे हैं, लेकिन क्या जीवन मूल्यों को लेकर भी वे उतने ही संजीदा हैं। दरअसल, साक्षरता और शिक्षा में एक बुनियादी अंतर है। साक्षरता जहां नाममात्र की शिक्षा पर जोर देती है, वहीं शिक्षित का मतलब है, ऐसी शिक्षा, जिसे जीवन में उतारकर हम न सिर्फ अपनी, बल्कि समाज की तरक्की भी सुनिश्चित कर सकते हैं। लोगों में जीवन-मूल्यों का यह बोध होना बहुत आवश्यक है। मगर दुर्भाग्य से, इस मामले में हम सबके हाथ तंग हैं। आज भी अनगिनत साक्षर लोग मिल जाएंगे, जो जीवन मूल्यों से दूर हैं। उनमें नैतिकता का इस कदर अभाव है कि वे समाज की बेहतरी में शायद ही कोई योगदान दे सकते हैं। ऐसी साक्षरता भला किस काम की? इसलिए हमें साक्षरता की परिभाषा बदलकर नए सिरे से मेहनत करनी चाहिए। शिक्षा का मतलब एक समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है। हमें इसी रूप में साक्षरता दिवस को बढ़ाना चाहिए। अगर इस योजना के मुताबिक हम कदम बढ़ा सकें, तो निश्चय ही भारत का ओहदा विश्व मंच पर कहीं ऊपर उठ जाएगा।

सौरभ गुप्ता, टिप्पणीकार

आज अंतरराष्ट्रीय साक्षरता दिवस है। यह बड़े गर्व की बात है कि 2011 के आंकड़े के अनुसार हमारे देश की 82 प्रतिशत आबादी साक्षर है। तकनीकी शब्दावली के हिसाब से देखें, तो साक्षर का अर्थ सिर्फ इतना होता है कि जिसे अक्षरों का ज्ञान हो और हस्ताक्षर कर सकता हो। लिहाजा, हम इस बात से अब तक अनभिज्ञ हैं, कि हमारे देश में कितनी प्रतिशत जनसंख्या शिक्षित है? सवाल यह भी है कि शिक्षित होने की आखिर परिभाषा क्या है? क्या उन्हें शिक्षित कहेंगे, जिसे शब्दों का ज्ञान हो या जो हस्ताक्षर करना जानता हो, पर अपराधी और भ्रष्टाचारी हो? क्या उसे साक्षर कहेंगे, जो समाज के हर वर्ग में जहर बो रहा हो? क्या उसे साक्षर कहेंगे, जिसकी अंतरात्मा मर चुकी है? या उनको साक्षर कहेंगे, जो अपने मां-बाप को छोड़ देते हैं? साक्षर या शिक्षित होने का सर्वप्रथम अभिप्राय यही है कि हम बेहतर व समझदार इंसान बन सकें और शिक्षा से जो हासिल किया है, वह अपने परिवार, समाज और देश को वापस लौटा सकें। हमें इसी तर्क के आधार पर साक्षरता तय करनी चाहिए। इसलिए हम खुद पर गौर करें कि हम साक्षर हैं या नहीं?

हेसामुद्दीन अंसारी, टिप्पणीकार

दैनिक जागरण
सहिष्णुता विनम्रता की आधारशिला है

शिक्षकों की पात्रता

सुप्रीम कोर्ट ने कक्षा एक से आठ तक के छात्रों को पढ़ाने वाले शिक्षकों के लिए दो साल में शिक्षक पात्रता परीक्षा यानी टीईटी पास करने की अनिवार्यता का जो फैसला दिया, उसे लेकर असहमति के स्वर उभरते रहे हैं। चूंकि सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले से देश भर के लाखों शिक्षक प्रभावित हो रहे हैं, इसलिए असहमति और विरोध के स्वर सुनाई देना स्वाभाविक है। ऐसे स्वर इसलिए सुनाई दे रहे हैं, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट ने उन शिक्षकों के लिए भी टीईटी पास करना अनिवार्य कर दिया है, जिनकी नियुक्ति शिक्षा अधिकार कानून लागू होने से पहले हुई थी। सुप्रीम कोर्ट ने केवल उन शिक्षकों को राहत दी है, जिनकी नौकरी पांच साल से कम है। हालांकि यदि ऐसे शिक्षक पदोन्नति चाहेंगे तो उन्हें टीईटी पास करना होगा। इसे लेकर भी असंतोष है। असंतोष का एक कारण सुप्रीम कोर्ट की ओर से यह स्पष्ट किया जाना अधिक है कि जो शिक्षक टीईटी पास नहीं कर पाएंगे, उन्हें नौकरी छोड़नी होगी। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले को लेकर शिक्षकों के संगठन राज्य सरकारों के साथ केंद्र सरकार पर हस्तक्षेप करने के लिए दबाव बना रहे हैं। इसके अतिरिक्त इस फैसले के खिलाफ पुनर्विचार याचिका दायर करने की भी पहल हो रही है।

कहना कठिन है कि इस मामले में क्या होगा, लेकिन इतना अवश्य है कि यदि शिक्षा की गुणवत्ता सुधारनी है तो शिक्षकों के पठन-पाठन की गुणवत्ता पर भी ध्यान देना होगा। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि अपने देश में कक्षा एक से लेकर आठ तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले बहुत से छात्रों को वैसी शिक्षा नहीं दी जा पा रही है, जैसी अपेक्षित ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है। स्थिति यह है कि कक्षा पांच-छह में पढ़ने वाले अनेक छात्र सामान्य जोड़-घटाव तक नहीं कर पाते। आमतौर पर यह स्थिति सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों की है, लेकिन निजी स्कूलों की भी कोई बहुत अच्छी स्थिति नहीं। निजी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों की एक बड़ी संख्या ट्यूशन और कोचिंग लेने को बाध्य है। यह सब शिक्षा की दयनीय स्थिति का परिचायक है। किसी भी देश की वास्तविक प्रगति का एक बड़ा आधार शिक्षा होती है। नई पीढ़ी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कैसे मिले, इसे लेकर सभी को अपने स्तर पर प्रयत्न करने होंगे। इसमें सरकारों के साथ शिक्षक संघों का भी सहयोग आवश्यक है। सुप्रीम कोर्ट ने शिक्षकों के लिए टीईटी पास किए जाने की अनिवार्यता का जो आदेश दिया, उस पर सरकार कोई दखल देती है या नहीं अथवा स्वयं शीर्ष अदालत पुनर्विचार करे या न करे, लेकिन ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए जिससे शिक्षा की गुणवत्ता के स्तर को ऊंचा उठाने के प्रयासों को धक्का पहुंचे।

सुखद परिणाम की आस

उत्तर प्रदेश के नौ लाख से अधिक शिक्षकों और विद्यालयी कार्य से जुड़े कार्मिकों के परिवारीजन को कैशलेस इलाज की सुविधा दिए जाने की घोषणा महत्वपूर्ण पहल है। अच्छी बात यह है कि सरकार ने इस दायरे में बेसिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा के शिक्षकों के साथ ही शिक्षामित्रों, अनुदेशकों और रसोइयों को भी शामिल किया है। प्रदेश में बुनियादी शैक्षिक सुधार के कई प्रयास हाल में हुए। उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद (यूपी बोर्ड) से मान्यताप्राप्त स्कूलों में आनलाइन उपस्थिति की नई व्यवस्था परीक्षण के स्तर पर है। यह शैक्षिक अनुशासन की दिशा में बड़ा कदम है। शिक्षक के साथ ही बच्चों की भी आनलाइन उपस्थिति से शिक्षा के स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। एक ओर जहां शिक्षण कार्य से जुड़े लोग परिवार की स्वास्थ्य जरूरतों से निश्चित होकर पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करेंगे, वहीं अरसे से शिक्षामित्रों और अन्य लोगों के मानदेय में वृद्धि का संकेत भी उन्हें प्रोत्साहित करेगा। स्कूलों में गुणवत्तायुक्त शिक्षा से मनुष्यता की नई पौध विकसित होती है, जिनके हाथों भारत का भविष्य आकार लेगा। जरूरी है कि शिक्षा से व्यक्तित्व निर्माण की नर्सरी स्वयं में पोषित-पल्लवित हो। स्कूली बच्चों की अभिव्यक्ति पर केंद्रित परख राष्ट्रीय सर्वेक्षण-2024 में उत्तर प्रदेश ने बेहतर किया है। अब शिक्षकों को भी चाहिए कि प्रदेश हित में प्रतिफल में अपने स्कूलों के प्रदर्शन को श्रेष्ठता के शिखर तक पहुंचाने का यत्न करें।

> शिक्षा के साथ ही स्कूल व्यक्तित्व निर्माण की भी पाठशाला है, यहां ही भारत का भविष्य आकार लेता है

औपनिवेशिक प्रपंच की निरंतरता

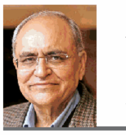

बलबीर पुंज

जब पीटर नवारो का ब्राह्मण-विरोधी विषाक्त वक्तव्य चर्चा में आया, तब भारत का एक राजनीतिक वर्ग उसकी ढाल बनकर खड़ा हो गया

अवधेश राजपूत

भारत को विभाजित करने की औपनिवेशिक टूलकिट आज भी कई रूपों में सक्रिय है। इसकी झलक अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के सलाहकार पीटर नवारो के हालिया विषवमन में मिलती है। यूक्रेन-रूस सैन्य संघर्ष को 'मोदी का युद्ध' बताने वाले नवारो ने भारत द्वारा सस्ती दरों पर रूस से कच्चा तेल खरीद पर कहा कि इससे ब्राह्मणों को ही लाभ मिल रहा है। यह कोई आकस्मिक प्रतिक्रिया या अमेरिकी संदर्भ में दिया वक्तव्य नहीं है। यह उसी विषबेल की कोंपल है, जिसकी जड़ें देश में पहले से ही रोपी जा चुकी हैं, जहां एक राजनीतिक समूह विकृत नैरेटिव गढ़कर दलितों-वंचितों को शेष हिंदू समाज के विरुद्ध खड़ा करने और मुसलमानों को मजहब के नाम पर एकजुट रखने का प्रपंच दशकों से रच रहा है।

सच तो यह है कि भारत को कई टुकड़ों में विभाजित करने की विकृत आकांक्षा विदेशी शक्तियों की चिरस्थायी कुंठा रही है। उनके निशाने पर केवल ब्राह्मण नहीं, अपितु संपूर्ण हिंदू समाज है। ब्राह्मणों का दानवीकरण कोई संयोग नहीं, बल्कि सुनियोजित षड्यंत्र है। ब्राह्मणों के प्रति घृणा की जड़ें हमें सीधे 16वीं शताब्दी और उसके उपरांत गढ़े गए कुटिल प्रपंचों में दिखाई देती हैं। जब 16वीं शताब्दी में भारत के दक्षिणी हिस्से में जेसुइट मिशनरी फ्रांसिस जेवियर का आगमन हुआ, तब उसने ब्राह्मणों को ईसाई मतांतरण के मार्ग का सबसे बड़ा अवरोधक माना। जेवियर ने 31 दिसंबर 1543 को 'द सोसायटी एट रोम' को पत्र लिखकर कहा, "यदि ब्राह्मण विरोध न करें, तो हम यहां सबको मसीह के चरणों में ले आएं... इतने वर्षों में मैंने केवल एक ब्राह्मण का ही मतांतरण किया है।" इसके बाद जेवियर ने 'गोवा इंक्विजीशन' का रक्तरंजित अभियान चलाया। इसमें केवल हिंदू ही नहीं, बल्कि वे सीरियाई ईसाई भी शिकार बने, जो कैथोलिक रोमन चर्च के बजाय अपनी प्राचीन उपासना-पद्धति का पालन कर रहे थे। चर्च की दृष्टि में यह इतना बड़ा 'अपराध' था कि ऐसे लोगों की जीभ काट दी गई, तो जीवित रहते उनकी चमड़ी तक उधेड़ ली गई।

जेवियर के बाद 17वीं शताब्दी में राबर्ट डी नोबिली नामक अन्य जेसुइट मिशनरी भारत आया। ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा देखकर उन्होंने साधु-संन्यासी का वेश धारण किया और स्वयं को 'व्हाइट ब्राह्मण' बताने लगा। मतांतरण की इस युक्ति को लेकर रोम में काफी विवाद भी हुआ। जब वर्ष 1757 में राबर्ट क्लाइव ने प्लासी युद्ध में निर्णायक जीत के साथ भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव रखी, तब कालांतर में इस मजहबी षड्यंत्र को गति मिली। 1813 में ईस्ट इंडिया कंपनी के चार्टर में अंग्रेजों ने विवादास्पद अनुच्छेद जोड़कर न केवल अपने पादरियों और मिशनरियों के लिए भारतीयों के मतांतरण का मार्ग प्रशस्त किया, बल्कि उन्हें हर प्रकार का आधिकारिक सहयोग का भी आश्वासन दिया। उस समय गवर्नर-जनरल रहे लार्ड मिंटो ने अपने एक ज्ञापन में कुछ मिशनरियों की प्रचार सामग्री पर टिप्पणी की थी, 'इस ग्रंथ का अधिकांश भाग वस्तुतः ब्राह्मणों के सामूहिक संहार को लक्षित करता दिखता है।'

इस प्रकार चर्च-मिशनरी ने अंग्रेजों के साथ मिलकर गठजोड़ कर निहित स्वार्थ साधने हेतु ब्राह्मणों को कलंकित करने की पटकथा लिखनी प्रारंभ की। इस उपक्रम में पहले मद्रास (चेन्नई) के ब्राह्मणों और अन्य सवर्ण-शिक्षित हिंदू वर्ग के मतांतरण का प्रयास किया गया, किंतु इसमें असफल रहे। तब ब्रिटिश इतिहासकार थामस बैबिंगटन मैकाले ने अपनी कुख्यात 'मिनट आन इंडियन एजुकेशन' के माध्यम से भारतीय शिक्षा पद्धति को विकृत करने का अभियान चलाया। मैकाले का उद्देश्य अक्टूबर, 1836 में अपने पिता को लिखे पत्र से उजागर होता है, जिसमें उन्होंने लिखा था, 'मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हमारी शिक्षा नीति सफल हो जाती है, तो 30 वर्षों के भीतर बंगाल के उच्च घरानों में एक भी मूर्तिपूजक नहीं बचेगा।' इसी विषाक्त गठजोड़ की कोख से अन्य औपनिवेशिक विकृतियों के साथ 1916 में ब्राह्मण-विरोधी 'जस्टिस पार्टी' का जन्म हुआ, जो आगे चलकर अलगाववादी 'द्रविड़ आंदोलन' के रूप में अवतरित हुई। इसके अंतर्गत हिंदू देवी-देवताओं की मूर्तियों का अपमान करते हुए जुलूस भी निकाले जाने लगे। इसी नफरत की प्रतिध्वनि भारत में सुनाई दे रही है। हालिया वर्षों में द्रमुक नेताओं द्वारा 'सनातन धर्म' को मिटाने का आह्वान इसका ज्वलंत उदाहरण है।

अक्सर 'मनुस्मृति' के बहाने अस्पृश्यता जैसी कुरीतियों का ठीकरा तथाकथित 'ब्राह्मणवाद' के सिर फोड़ा जाता है, लेकिन यह ग्रंथ शाश्वत नहीं और फिर कालातीत हिंदू समाज ने समय के अनुरूप स्वयं को ढाला है और निरंतर अधिकाधिक बहुलतावाद, लोकतंत्र तथा पंथनिरपेक्षता के आदर्शों को आत्मसात किया है। वैसे गांधीजी ने 4 मई, 1928 को लिखा था, 'मनुस्मृति में काफी कुछ प्रशंसनीय है... उसमें कुछ बुरा भी है... सुधारक को अच्छी चीजें ग्रहण करनी चाहिए और बुरी छोड़ देनी चाहिए।' जहां तक अस्पृश्यता के उन्मूलन का प्रश्न है तो सिख गुरुओं से लेकर स्वामी विवेकानंद, दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद सरस्वती, गांधीजी, वीर सावरकर, डा. आंबेडकर और डा. हेडगेवार आदि ने अस्पृश्यता जैसी सामाजिक व्याधि के विरुद्ध सफलतापूर्वक आंदोलन चलाया। कोई भी सजग भारतीय अस्पृश्यता का समर्थन कर ही नहीं सकता।

वामपंथी और स्वघोषित सेकुलरवादी वर्षों से 'सामाजिक अन्याय' का राग अलापते रहे हैं, किंतु उनका ध्येय विषमताओं को मिटाना नहीं, बल्कि जातीय दरारों को स्थायी बनाए रखना है। इसलिए, जब पीटर नवारो का ब्राह्मण-विरोधी विषाक्त वक्तव्य चर्चा में आया, तब भारत का एक राजनीतिक वर्ग उसकी ढाल बनकर सामने आ गया। नवारो के आशय को 'ब्रोस्टन ब्राह्मण' से जोड़कर मुद्दे को भटकाया भी जाने लगा। इससे दो बातें स्पष्ट हैं। पहली, नवारो की टिप्पणी विशुद्ध भारतीय संदर्भ में थी। दूसरी, जब विश्व पटल पर भारत का गौरव और प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है, तब औपनिवेशिक शक्तियों को देश के भीतर अपनी इस विचारधारा के मानस बंधुओं का साथ मिल रहा है।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं)
response@jagran.com

शिक्षा में भी बढ़े स्वदेशी का भाव

प्रेमपाल शर्मा

पिछले पांच वर्षों में विदेश में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या दोगुनी से भी अधिक हो गई है

इन दिनों प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और अन्य वरिष्ठजन देशवासियों से स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने का आग्रह कर रहे हैं। इसके लिए जीएसटी में सुधार और कुछ नीतियों में बदलाव किए गए हैं, ताकि भारतीय नागरिक अपने देश की वस्तुओं को प्राथमिकता दें, लेकिन इस 'स्वदेशी राग' में शिक्षा के क्षेत्र में स्वदेशी का महत्व, जैसे कि मेडिकल, इंजीनियरिंग या अन्य विषयों की पढ़ाई के लिए अपने देश के विश्वविद्यालयों को ही चुनने की बात कहीं नहीं उठाई जा रही है। यह सच है कि आजादी के बाद भी बच्चे विदेश पढ़ने जाते थे, लेकिन तब हमारे पास विश्वविद्यालयों की संख्या इतनी नहीं थी। वर्तमान में जब हमारे पास लगभग 1000 विश्वविद्यालय और हजारों निजी एवं सरकारी कालेज हैं, तब विदेश पढ़ने जाने के कारण क्या हैं? इसका एक बड़ा कारण यह है कि आज अधिकांश राजनेता, नौकरशाह और विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक, जो थोड़े बहुत अमीर हैं, उन्होंने अपने बच्चों को विदेश भेजने का आसान विकल्प चुन लिया है। आंकड़े बताते हैं कि पिछले पांच वर्षों में विदेश में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या दोगुनी से भी अधिक हो गई है। एक अनुमान के अनुसार, लगभग 15 लाख छात्र विदेश में पढ़ाई कर रहे हैं, जिनमें सबसे अधिक अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड में हैं। भारतीय छात्रों की विदेश में पढ़ाई की चाहत को देखते हुए यूरोप, सिंगापुर और अन्य देशों ने भी विभिन्न प्रलोभन नीतियां अपनाई हैं।

एक ओर देश में युवा मेडिकल की पढ़ाई के लिए भटक रहे हैं, दूसरी ओर लाखों गांव-कस्बे अच्छे डाक्टरों की तलाश में हैं। भारतीय छात्र लगभग 90 से अधिक देशों में डाक्टरी की पढ़ाई कर रहे हैं। इस बीच आइआइटी की संख्या बढ़कर 23 हो गई है, लेकिन सरकारी आंकड़े बताते हैं कि इनमें लगभग 50 प्रतिशत फैकल्टी की सीटें खाली हैं और शिक्षकों की कमी के कारण ये संस्थान अस्थायी शिक्षकों पर निर्भर हैं। इसके चलते शिक्षा, पाठ्यक्रम और शोध में गिरावट आई है, जिससे मेधावी छात्र विदेश जाने के लिए मजबूर हो रहे हैं। छात्रों की बढ़ती संख्या को देखते हुए इन सभी देशों ने वीजा और विश्वविद्यालय की फीस भी लगभग दोगुनी कर दी है। प्रति विद्यार्थी एक से दो करोड़ रुपये से कम खर्च नहीं आता। क्या विदेश में पढ़ाई करना इतना आसान है? जिस देश की 80 प्रतिशत जनता को राशन के गेहूं-चावल पर गुजारा करना पड़ता हो, क्या उनके लिए विदेश जाना संभव है? हां, उन नौकरशाहों और उच्च पदों पर रहने वालों के लिए, जिनकी अच्छी खासी तनख्वाह होती है, यह संभव है। वे अपने बच्चों को विदेश में पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, जबकि देश के शिक्षा संस्थानों में सुधार की दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाते।

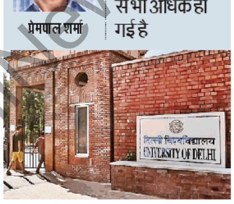

अपना स्तर बढ़ाएं भारतीय शिक्षा संस्थान। फाइल

हाल के समय में दिल्ली विश्वविद्यालय भी गिरावट की चपेट में आ गया है। इस केंद्रीय विश्वविद्यालय में दाखिले के लिए पिछले पांच वर्षों से कामन टेस्ट शुरू किया गया है, और नई शिक्षा नीति को भी लागू हुए पांच साल हो गए हैं, लेकिन अपेक्षित परिणाम नहीं आ रहे हैं। यह आवश्यक है कि कोई उच्च स्तरीय समिति तुरंत इसका पुनरावलोकन करे। शिक्षकों की भर्ती के लिए भी यूपीएससी जैसा कोई भर्ती बोर्ड बनाया जाए। जहां छात्रों के दाखिले के लिए कई स्तर की परीक्षाएं होती हैं, वहीं शिक्षक-प्रोफेसर की भर्ती और पदोन्नति के लिए कोई ठोस प्रक्रिया नहीं है। जब भी शिक्षकों और शिक्षा-शोध की बेहतरी के प्रयास किए जाते हैं, तो सबसे अधिक विरोध शिक्षकों की कुछ जमातें करती हैं, जो न तो कक्षाएं लेना चाहती हैं, न बच्चों की फीडबैक पर भरोसा करती हैं और न ही प्राचार्य के वार्षिक मूल्यांकन पर। इन्हीं सब कारणों से हमारे विश्वविद्यालय दुनिया की रैंकिंग में गिरते जा रहे हैं। पिछले वर्षों में इन्हीं चुनौतियों से जूझते-हारते बच्चे आत्महत्या की ओर बढ़ रहे हैं। आइआइटी, आइआइएम जैसे संस्थानों में आत्महत्या की घटनाएं दिल दहला देती हैं। मामला सुप्रीम कोर्ट में भी पहुंच गया है। इसके लिए एक समिति भी बनाई गई है, लेकिन क्या केवल समिति बनाने से समस्या का समाधान होगा? क्या सरकार ऐसी नीति नहीं बना सकती जिससे विश्व स्तर पर शिक्षा में हो रहे परिवर्तन भारत में भी लागू किए जा सकें?

वर्तमान केंद्र सरकार ने भारतीय भाषाओं के पक्ष में अच्छा काम किया है, लेकिन शोध और अन्य नवीन वैज्ञानिक पहलुओं पर अपेक्षित परिणाम आने बाकी हैं। यह देश का सौभाग्य है कि हमारे पास दुनिया की सबसे युवा आबादी है, और उनकी मेहनत का लोहा पूरी दुनिया मानती है। ये युवा बदलाव तभी लाएंगे जब उन्हें सही दिशा मिले। इसके लिए हमें शिक्षा में भी स्वदेशी का प्रण लेना होगा। शिक्षा दुनिया और समाज में परिवर्तन का सबसे बड़ा हथियार है। हमें ऐसे कदम उठाने की आवश्यकता है कि जहां धर्म, जाति, गोत्र और क्षेत्र को भूलकर मेरिट और योग्यता को प्राथमिकता मिले। 2009 के नोबेल पुरस्कार विजेता वेंकट रामकृष्ण का कथन याद आता है कि अमेरिकी विश्वविद्यालय शोध और शिक्षा के मामले में न जाति देखते हैं, न धर्म, और न ही आप कहां से आए हैं। वे बस यह देखते हैं कि आपका लक्ष्य क्या है। इसी कारण वे पिछले 200 वर्षों से दुनिया के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालयों में अव्वल बने हुए हैं। यदि हम शिक्षा में क्रांतिकारी सुधार की दिशा में कदम बढ़ाते हैं, तो हर क्षेत्र में स्वदेशी का महत्व बढ़ेगा।

(शिक्षाविद् लेखक भारत सरकार में संयुक्त सचिव रहे हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन का सार

मनुष्य की सफलता उसके स्वभाव, गुण और कर्म की उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। जब व्यक्ति अपने कार्यों में उत्कृष्टता लाता है, तभी उसे पद, प्रतिष्ठा, मान-सम्मान और महानता प्राप्त होती है। ऐसे ही लोग अपने सपनों को साकार करते हैं और उनकी इच्छाएं पूर्ण होती हैं। नम्रता और प्रेम से भरे लोग बिना किसी कठिनाई के सब कुछ प्राप्त कर लेते हैं। इसके विपरीत आलस्य, प्रमाद, दुर्गुण और द्वेष से भरे लोग इस मार्ग पर नहीं चल सकते।

धार्मिक दृष्टिकोण से, दास का अर्थ सेवक और अहंकार से रहित होना है। जो व्यक्ति दास बनकर जीवन जीता है, वह हमेशा प्रसन्न और उल्लसित रहता है। दास भाव से व्यक्ति का महत्व बढ़ता है और उसे सब कुछ प्राप्त करना संभव हो जाता है। उसके जीवन में आनंद, सुख और शांति का समावेश होता है। ज्ञानी झुकना पसंद करते हैं, जिससे उन्हें पद, प्रतिष्ठा और ईश्वरीय अनुग्रह प्राप्त होता है। मूर्ख और उद्दंड लोग टूट जाते हैं, क्योंकि वे झुकना नहीं चाहते। यदि हम सही तरीके से जीना चाहते हैं, तो हमें स्वयं को छोटा बनाना होगा। झुकने से कुछ घटता नहीं, बल्कि बढ़ता है। बड़ा बनकर कुछ पाना संभव नहीं है, पाने के लिए छोटा बनना आवश्यक है। भगवान विष्णु ने राजा बलि के समक्ष दान लेने के लिए वामन रूप धारण किया। इसी प्रकार, हनुमान जी ने लंका में प्रवेश करते समय मसक रूप धारण किया। विद्वानों का मानना है कि मसक रूप का अर्थ केवल शारीरिक रूप से छोटा होना नहीं, बल्कि स्वभाव से नम्र और शिष्ट होना है। इसलिए, जीवन में कठिन कार्यों को पूर्ण करने के लिए छोटा बनने में कोई हर्ज नहीं।

दास बनकर कार्य करने में कोई समस्या नहीं है। सद्गति उसी को मिलती है, जो ईश्वर के चरणों का दास बन जाता है। पिता अपने पुत्र को स्नेह देता है, लेकिन जब पोता होता है, तो वही स्नेह पोते को देता है। यही जीवन का सार है।

मुकेश ऋषि

किराए पर दादा-दादी

देवेंद्रराज सुथार

एकल होते परिवारों के कारण बच्चों को दादा-दादी का साथ नहीं मिल पा रहा है और बुजुर्ग भी अकेलेपन से जूझ रहे हैं

हाल में जापान में 'ओके ओबाचान' नाम की सेवा शुरू की गई है जिसमें 60 से 94 साल तक की महिलाएं किराए पर दादी का रोल निभाती हैं। कोई परिवार उन्हें कुछ घंटों के लिए घर बुलाता है, वे बच्चों की देखभाल करती हैं, खाना बनाती हैं, बातें करती हैं और जरूरत पड़ने पर रिश्तों या जीवन से जुड़े सुझाव भी देती हैं। इस सेवा का उद्देश्य दोहरा है-बुजुर्ग महिलाओं को आय और उद्देश्य देना और अकेलेपन से जूझते युवाओं एवं परिवारों को मां या दादी के प्रेम का अनुभव कराना। भारत से भी ऐसी तरह की खबर सामने आई जब आगरा के रामलाल वृद्धाश्रम ने हाल में 'रेंट ए ग्रैंडपैरेंट' नाम की सेवा शुरू की। यहां परिवार महीने भर के लिए 11,000 रुपये देकर किसी बुजुर्ग को घर ला सकते हैं। आश्रम का तर्क है कि इससे बच्चों को दादा-दादी या नाना-नानी का प्यार मिलेगा और बुजुर्गों को घर जैसे माहौल में रहने और आय का अवसर मिलेगा।

भारत की पारंपरिक पारिवारिक संरचना हमेशा से संयुक्त परिवार पर आधारित रही है। यहां दादा-दादी बच्चों के जीवन का अहम हिस्सा माने जाते हैं। कहानियों, लोकगीतों और अनुभवों से वे बच्चों को जीवन जीने की कला और मूल्य सिखाते हैं, लेकिन शहरीकरण, नौकरियों के दबाव और करियर की दौड़ ने पारिवारिक ढांचे को बदल दिया है। अब महानगरों और शहरों में अधिकतर परिवार एकल रूप में रहते हैं। बच्चे दादा-दादी के साथ बढ़े होने का अनुभव खो रहे हैं और बुजुर्ग भी अकेलेपन से जूझ रहे हैं। यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें 'रेंट ए ग्रैंडपैरेंट' जैसी सेवा जन्म ले रही है।

भारत में बुजुर्गों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। अनुमान है कि 2050 तक लगभग 20 प्रतिशत आबादी 60 साल से ऊपर होगी। ऐसे में वृद्धाश्रमों और देखभाल केंद्रों पर दबाव बढ़ेगा। दूसरी ओर, बच्चे अपने दादा-दादी के बिना बड़े हो रहे हैं जिससे उनकी सांस्कृतिक जड़ें कमजोर हो रही हैं। इस लिहाज से यह सेवा कुछ हद तक एक व्यावहारिक समाधान लग सकती है, लेकिन स्थायी समाधान यह नहीं है। दरअसल भारत को जरूरत केवल किराए पर दादा-दादी नहीं है, बल्कि ऐसे प्रयास हैं, जो स्वाभाविक रूप से पीढ़ियों को जोड़ें। मोहल्लों और सोसायटी स्तर पर कार्यक्रम, स्कूलों में बुजुर्गों की भागीदारी, सामुदायिक केंद्रों में पीढ़ियों का संवाद ऐसे रास्ते हैं जिनसे बच्चों और बुजुर्गों को जोड़ना संभव है। सरकार और संस्थानों को भी चाहिए कि वे बुजुर्गों के लिए बेहतर स्वास्थ्य सुविधा, रोजगार के अवसर और सामाजिक जीवन की व्यवस्था करें, ताकि उन्हें मजबूरी में किराए पर जाना न पड़े।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि रिश्ते पैसे से खरीदे नहीं जा सकते। उन्हें समाज और परिवार की जिम्मेदारी के तहत ही फिर से जीवित करना होगा।

(लेखक सामाजिक मामलों के जानकार हैं)

बाढ़ की विभीषिका

'बाढ़ का विनाशकारी रूप' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त द्वारा उठाए गए मुद्दे अत्यंत प्रासंगिक हैं। पहले बाढ़ की समस्या मुख्यतः बिहार और उत्तर पूर्व के राज्यों तक सीमित थी, जहां की नदियां अक्सर उफान पर रहती थीं, लेकिन इस वर्ष उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र जैसे क्षेत्रों में बाढ़ का प्रकोप देखने को मिला है, जो अत्यंत चिंताजनक है। जलवायु परिवर्तन ने मौसम के चक्र को विकृत कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप सड़कें टूट रही हैं, पुल बह रहे हैं और जान-माल का भारी नुकसान हो रहा है। आर्थिक संकट के साथ-साथ मानवीय और सामाजिक संकट भी उत्पन्न हो रहे हैं, जो आसानी से हल नहीं होते। दुर्भाग्य की बात यह है कि बाढ़ को हम अक्सर प्राकृतिक आपदा मानकर अपने दायित्वों से मुंह मोड़ लेते हैं, जबकि इसके पीछे मानवीय कारण भी हैं। हम यह स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं कि लोग नदियों और नालों पर अपने मनमाने तरीके से अतिक्रमण कर रहे हैं। ऐसे में थोड़ी सी वर्षा भी बाढ़ जैसी स्थिति उत्पन्न कर सकती है। प्राकृतिक आपदाएं हमारी आधारभूत संरचना को बाधित करती हैं, लेकिन यदि हम दूरदर्शी नीतियों को अपनाकर ठोस योजनाओं पर अमल करें, तो बाढ़ के प्रभाव को कम किया जा सकता है। बाढ़ के संदर्भ में दीर्घकालिक नीति के तहत सरकार को सक्रियता से काम करने की आवश्यकता है। अन्यथा यह कहना मुश्किल होगा कि कौन-सा क्षेत्र बाढ़ से सुरक्षित है। चाहे वह मैदानी क्षेत्र हो या पहाड़ी, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कागज से निकलकर धरती पर उतरने में समय नहीं लेता। इसलिए, हमें बाढ़ की विभीषिका से निपटने के लिए एक ठोस और प्रभावी रणनीति की आवश्यकता है, ताकि हम भविष्य में इस प्रकार की आपदाओं से बेहतर तरीके से निपट सकें।

डा. मिथिलेश कुमार, भागलपुर (बिहार)

मेलबाक्स

कनाडा की समस्या

अब कनाडा सरकार स्वयं भी खालिस्तान समर्थक गतिविधियों की सच्चाई स्वीकार करने लगी है। कनाडा के वित्त विभाग की रिपोर्ट इस बात का प्रमाण है कि पूर्व प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो की सरकार ने सत्ता में बने रहने की कीमत पर खालिस्तान समर्थक अतिवादी संगठनों को न केवल सहन किया, बल्कि उन्हें प्रोत्साहित भी किया। हकीकत यह है कि कनाडा में रहने वाले सभी सिख खालिस्तानी समर्थक नहीं हैं, किंतु ट्रूडो सरकार ने सभी को एक ही नजर से देखकर भारी भूल की। इस नीति ने न केवल कनाडा को कमजोर किया, बल्कि वहां की राजनीति को भी संदेहास्पद बना दिया। अंततः जनता ने उन्हें सत्ता से बाहर का रास्ता दिखा दिया। अब जबकि कनाडा सरकार ने स्वीकारोक्ति की है, तो समय आ गया है कि इन आतंकवादी गतिविधियों पर कठोर कार्रवाई की जाए। भारत भी लंबे समय से इन गतिविधियों से प्रभावित रहा है, इसलिए दोनों देशों को मिलकर इस खतरे का समाधान निकालना चाहिए।

सुरेश गोयल धूप वाला, हिसार, हरियाणा

संतुलित विकास की आवश्यकता

बाढ़ रूपी इस जलप्रलय को केवल प्राकृतिक आपदा कहना बेमानी होगा। हमने अत्यधिक विकास की होड़ में शामिल होकर इस धरा को नुकसान पहुंचाया है। यह जलप्रलय हमारे ऊपर प्रकृति का भयंकर प्रतिकार है। विकास तो आवश्यक है, लेकिन संतुलित विकास पर ध्यान देने की जरूरत है। ऐसा विकास जिसमें जल, जंगल और जमीन भी सुरक्षित रहें। आज समय की आवश्यकता है कि हम बाढ़ पीड़ितों की मदद के लिए आगे आएं। कोरोना जैसे विश्वव्यापी संकट में जिस प्रकार पूरा देश पीड़ित लोगों की मदद के लिए आगे आया, ठीक उसी प्रकार आज भी आगे आने की आवश्यकता है। बाढ़ जैसी प्रलयकारी समस्या से बचाव के लिए 1970 में आए रिवर लिंकिंग प्रोजेक्ट और नदियों को जोड़ने के रुके हुए अभियान को मौजूदा सरकार द्वारा आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। इससे न केवल बाढ़, बल्कि सूखे जैसी समस्याओं से निजात पाकर देश को एक नई आर्थिक गति प्रदान की जा सकती है।

पवन कुमार मुरली, गुरुग्राम

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण, डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, पूर्व एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)- विष्णु प्रकाश त्रिपाठी* दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय: 011-43166300, नोएडा कार्यालय: 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹2 अतिरिक्त।

संपादकीय जागरण

(8) सोमवार, 8 सितंबर, 2025 : आश्विन कृष्ण प्रतिपदा वि. 2082

सहिष्णुता विनम्रता की आधारशिला है

शिक्षकों की पात्रता

सुप्रीम कोर्ट ने कक्षा एक से आठ तक के छात्रों को पढ़ाने वाले शिक्षकों के लिए दो साल में शिक्षक पात्रता परीक्षा यानी टीईटी पास करने की अनिवार्यता का जो फैसला दिया, उसे लेकर असहमति के स्वर उभरते रहे हैं। चूंकि सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले से देश भर के लाखों शिक्षक प्रभावित हो रहे हैं, इसलिए असहमति और विरोध के स्वर सुनाई देना स्वाभाविक है। ऐसे स्वर इसलिए सुनाई दे रहे हैं, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट ने उन शिक्षकों के लिए भी टीईटी पास करना अनिवार्य कर दिया है, जिनकी नियुक्ति शिक्षा अधिकार कानून लागू होने से पहले हुई थी। सुप्रीम कोर्ट ने केवल उन शिक्षकों को राहत दी है, जिनकी नौकरी पांच साल से कम है। हालांकि यदि ऐसे शिक्षक पदोन्नति चाहेंगे तो उन्हें टीईटी पास करना होगा। इसे लेकर भी असंतोष है। असंतोष का एक कारण सुप्रीम कोर्ट की ओर से यह स्पष्ट किया जाना अधिक है कि जो शिक्षक टीईटी पास नहीं कर पाएंगे, उन्हें नौकरी छोड़नी होगी। सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले को लेकर शिक्षकों के संगठन राज्य सरकारों के साथ केंद्र सरकार पर हस्तक्षेप करने के लिए दबाव बना रहे हैं। इसके अतिरिक्त इस फैसले के खिलाफ पुनर्विचार याचिका दायर करने की भी पहल हो रही है। कहना कठिन है कि इस मामले में क्या होगा, लेकिन इतना अवश्य है कि यदि शिक्षा की गुणवत्ता सुधारनी है तो शिक्षकों के पठन-पाठन की गुणवत्ता पर भी ध्यान देना होगा। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि अपने देश में कक्षा एक से लेकर आठ तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले बहुत से छात्रों को वैसी शिक्षा नहीं दी जा पा रही है, जैसी अपेक्षित ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है। स्थिति यह है कि कक्षा पांच-छह में पढ़ने वाले अनेक छात्र सामान्य जोड़-घटाव तक नहीं कर पाते। आमतौर पर यह स्थिति सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों की है, लेकिन निजी स्कूलों की भी कोई बहुत अच्छी स्थिति नहीं। निजी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों की एक बड़ी संख्या ट्यूशन और कोचिंग लेने को बाध्य है। यह सब शिक्षा की दयनीय स्थिति का परिचायक है। किसी भी देश की वास्तविक प्रगति का एक बड़ा आधार शिक्षा होती है। नई पीढ़ी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कैसे मिले, इसे लेकर सभी को अपने स्तर पर प्रयत्न करने होंगे। इसमें सरकारों के साथ शिक्षक संघों का भी सहयोग आवश्यक है। सुप्रीम कोर्ट ने शिक्षकों के लिए टीईटी पास किए जाने की अनिवार्यता का जो आदेश दिया, उस पर सरकार कोई दखल देती है या नहीं अथवा स्वयं शीर्ष अदालत पुनर्विचार करे या न करे , लेकिन ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए जिससे शिक्षा की गुणवत्ता के स्तर को ऊंचा उठाने के प्रयासों को धक्का पहुंचे।

महिला स्वावलंबन

प्रदेश की महिलाओं को स्वरोजगार व उद्यमिता से जोड़ने के लिए मुख्यमंत्री महिला रोजगार योजना का विधिवत शुभारंभ हो गया। सरकार की इस महती योजना के लिए आनलाइन पोर्टल लांच किया गया है। आवेदन करने वाली महिला को शुरुआती मदद के तौर पर 10 हजार रुपये मिलेंगे। जिस रोजगार या उद्यम के लिए महिलाओं को दस हजार रुपये दिए जाएंगे, उसे छह माह में सक्रियता दिखाते हुए बढ़ाना होगा। इसके बाद कार्य प्रगति को देखकर रोजगार या उद्यम को बृहद रूप देने के लिए सरकार की ओर से दो लाख रुपये तक की अतिरिक्त सहायता भी उपलब्ध कराई जाएगी। वैसी महिलाएं जो आर्थिक संकट के कारण अपने कौशल को मूर्तरूप नहीं दे पातीं, उनके लिए यह मदद नई उड़ान देने का काम करेगी। इससे महिलाओं की आर्थिक स्थिति तो मजबूत होगी ही, साथ में रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे। यानी एक पंथ, दो काज। हालांकि, जिन महिलाओं को आर्थिक मदद दी जाएगी, उनके लिए बाजार उपलब्ध कराने की दिशा में भी सरकार की ओर से प्रयास करने की जरूरत है। कारोबार शुरू करने के बाद महिलाओं को प्रशिक्षण, बाजार और तकनीकी सहयोग की भी जरूरत होगी। यदि सरकार इन पहलुओं पर ध्यान दे तो महिलाएं आर्थिक रूप से स्वावलंबी तो होंगी ही, साथ ही रोजगार के अवसर भी तैयार होंगे।

> रोजगार-उद्यम के लिए आर्थिक मदद के साथ तकनीकी दक्षता व बाजार उपलब्ध कराने पर कार्ययोजना बनाने की जरूरत है।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

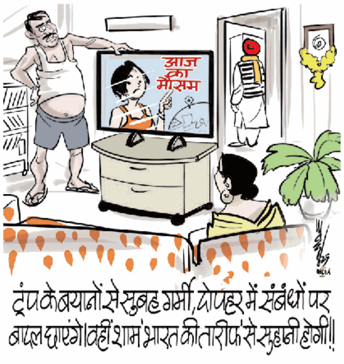

ट्रंप के बयानों से सुबह गर्मी, दोपहर में संबंधों पर बादल छाएंगे वहीं शाम 'भारत की तारीफ' से सुहानी होगी!!

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या ट्रंप के नए संकेतों से भारत-अमेरिका संबंध फिर से सुधार की ओर बढ़ सकते हैं?

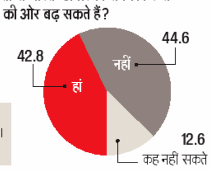

आज का सवाल

क्या भारत चालू वित्त वर्ष के अंत तक तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

औपनिवेशिक प्रपंच की निरंतरता

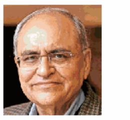

बलबीर पुंज

जब पीटर नवारो का ब्राह्मण-विरोधी विषाक्त वक्तव्य चर्चा में आया, तब भारत का एक राजनीतिक वर्ग उसकी ढाल बनकर खड़ा हो गया

भारत को विभाजित करने की औपनिवेशिक टूलकिट आज भी कई रूपों में सक्रिय है। इसकी झलक अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के सलाहकार पीटर नवारो के हालिया विषवमन में मिलती है। यूक्रेन-रूस सैन्य संघर्ष को 'मोदी का युद्ध' बताने वाले नवारो ने भारत द्वारा सस्ती दरों पर रूस से की जा रही तेल खरीद पर कहा कि इससे ब्राह्मणों को ही लाभ मिल रहा है। यह कोई आकस्मिक प्रतिक्रिया या अमेरिकी संदर्भ में दिया वक्तव्य नहीं है। यह उसी विषबेल की ही कोपल है, जिसकी जड़ें देश के भीतर पहले से ही रोपी जा चुकी हैं, जहां एक राजनीतिक समूह विकृत नैरेटिव गढ़कर दलितों-वंचितों को शेष हिंदू समाज के विरुद्ध खड़ा करने और मुसलमानों को मजहब के नाम पर एकजुट रखने का प्रपंच दशकों से रच रहा है।

सच तो यह है कि भारत को कई टुकड़ों में विभाजित करने की विकृत आकांक्षा विदेशी शक्तियों की चिरस्थायी कुंठा रही है। उनके निशाने पर केवल ब्राह्मण नहीं, अपितु संपूर्ण हिंदू समाज है। ब्राह्मणों का दानवीकरण कोई संयोग नहीं, बल्कि सुनियोजित षड्यंत्र है। ब्राह्मणों के प्रति घृणा की जड़ें हमें सीधे 16वीं शताब्दी और उसके उपरांत गढ़े गए कुटिल प्रपंचों में दिखाई देती हैं। जब 16वीं शताब्दी में भारत के दक्षिणी हिस्से में जेसुइट मिशनरी फ्रांसिस जेवियर का आगमन हुआ, तब उसने ब्राह्मणों को ईसाई मतांतरण के मार्ग का सबसे बड़ा अवरोधक माना। जेवियर ने 31 दिसंबर 1543 को 'टू द सोसायटी एट रोम' को पत्र लिखकर कहा, ''यदि ब्राह्मण विरोध न करें, तो हम यहां सबको मसीह के चरणों में ले आएं... इतने वर्षों में मैंने केवल एक ब्राह्मण का ही मतांतरण किया है।'' इसके बाद जेवियर ने 'गोवा इंक्विजीशन' का रक्तरंजित अभियान चलाया। इसमें केवल हिंदू ही नहीं, बल्कि वे सीरियाई ईसाई भी शिकार बने, जो कैथोलिक रोमन चर्च के बजाय अपनी प्राचीन उपासना-पद्धति का पालन कर रहे थे। चर्च की दृष्टि में यह इतना बड़ा 'अपराध' था कि ऐसे लोगों की जीभ काट दी गई, तो जीवित रहते उनकी चमड़ी तक उधेड़ ली गई।

जेवियर के बाद 17वीं शताब्दी में राबर्ट डी नोबिली नामक अन्य जेसुइट मिशनरी भारत आया। ब्राह्मणों की जनसम्मानित प्रतिष्ठा देखकर उन्होंने साधु-संन्यासी का वेश धारण किया और स्वयं को 'व्हाइट ब्राह्मण' बताने लगा। मतांतरण की इस युक्ति को लेकर रोम में काफी विवाद भी हुआ। जब वर्ष 1757 में राबर्ट क्लाइव ने प्लासी युद्ध में निर्णायक जीत के साथ भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव रखी, तब कालांतर में इस मजहबी षड्यंत्र को गति मिली। 1813 में ईस्ट इंडिया कंपनी के चार्टर में अंग्रेजों ने विवादास्पद अनुच्छेद जोड़कर न केवल अपने पादरियों और मिशनरियों के लिए भारतीयों के मतांतरण का मार्ग प्रशस्त किया, बल्कि उन्हें हर प्रकार के आधिकारिक सहयोग का भी आश्वासन दिया। उस समय गवर्नर-जनरल रहे लार्ड मिंटो ने अपने एक ज्ञापन में कुछ मिशनरियों की प्रचार सामग्री पर टिप्पणी की थी, 'इस ग्रंथ का अधिकांश भाग वस्तुतः ब्राह्मणों के सामूहिक संहार को लक्षित करता दिखता है।'

अवधेश राजपूत

इस प्रकार चर्च-मिशनरी ने अंग्रेजों के साथ गठजोड़ कर निहित स्वार्थ साधने हेतु ब्राह्मणों को कलंकित करने की विधिवत पटकथा लिखनी प्रारंभ की। इस उपक्रम में पहले मद्रास (चेन्नई) के ब्राह्मणों और अन्य सवर्ण-शिक्षित हिंदू वर्ग के मतांतरण का प्रयास किया गया, किंतु इसमें पूर्णतः असफल रहे। तब ब्रिटिश इतिहासकार और नेता थामस बैबिंगटन मैकाले ने अपनी कुख्यात 'मिनट आन इंडियन एजुकेशन' के माध्यम से भारतीय शिक्षा पद्धति को विकृत करने का अभियान चलाया। मैकाले का मूल उद्देश्य अक्टूबर, 1836 में अपने पिता को लिखे पत्र से उजागर होता है, जिसमें उन्होंने लिखा था, 'मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि हमारी शिक्षा नीति सफल हो जाती है, तो 30 वर्षों के भीतर बंगाल के उच्च घरानों में एक भी मूर्तिपूजक नहीं बचेगा।' इसी विषाक्त गठजोड़ की कोख से अन्य औपनिवेशिक विकृतियों के साथ 1916 में ब्राह्मण-विरोधी 'जस्टिस पार्टी' का जन्म हुआ, जो आगे चलकर अलगाववादी 'द्रविड़ आंदोलन' के रूप में अवतरित हुई। इसके अंतर्गत हिंदू देवी-देवताओं की मूर्तियों का अपमान करते हुए जुलूस भी निकाले जाने लगे। इसी नफरत की प्रतिध्वनि स्वतंत्र भारत में दशकों से सुनाई दे रही है। हालिया वर्षों में द्रमुक नेताओं द्वारा 'सनातन धर्म' को मिटाने का आह्वान इसका ज्वलंत उदाहरण है।

अक्सर 'मनुस्मृति' के बहाने अस्पृश्यता जैसी कुरीतियों का ठीकरा तथाकथित 'ब्राह्मणवाद' के सिर फोड़ा जाता है, लेकिन यह ग्रंथ शाश्वत नहीं और फिर कालातीत हिंदू समाज ने समय के अनुरूप स्वयं को ढाला है और निरंतर अधिकाधिक बहुलतावाद, लोकतंत्र तथा पंथनिरपेक्षता के आदर्शों को आत्मसात किया है। वैसे गांधीजी ने 4 मई, 1928 को लिखा था, 'मनुस्मृति में काफी कुछ प्रशंसनीय है... उसमें कुछ बुरा भी है... सुधारक को अच्छी चीजें ग्रहण करनी चाहिए और बुरी छोड़ देनी चाहिए।' जहां तक अस्पृश्यता के उन्मूलन का प्रश्न है तो सिख गुरुओं से लेकर स्वामी विवेकानंद, दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद सरस्वती, गांधीजी, वीर सावरकर, डा. आंबेडकर और डा. हेडगेवार आदि ने अस्पृश्यता जैसी सामाजिक व्याधि के विरुद्ध सफलतापूर्वक आंदोलन चलाया। कोई भी सजग भारतीय अस्पृश्यता का समर्थन कर ही नहीं सकता।

वामपंथी और स्वघोषित सेकुलरवादी वर्षों से 'सामाजिक अन्याय' का राग अलापते रहे हैं, किंतु उनका ध्येय विषमताओं को मिटाना नहीं, बल्कि जातीय दरारों को स्थायी बनाए रखना है। इसलिए जब पीटर नवारो का ब्राह्मण-विरोधी विषाक्त वक्तव्य चर्चा में आया, तब भारत का एक राजनीतिक वर्ग उसकी ढाल बनकर सामने आ गया। नवारो के आशय को 'बोस्टन ब्राह्मण' से जोड़कर मुद्दे को भटकाया भी जाने लगा। इससे दो बातें स्पष्ट है। पहली, नवारो की टिप्पणी विशुद्ध भारतीय संदर्भ में थी। दूसरी, जब विश्व पटल पर भारत का गौरव और प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है, तब औपनिवेशिक शक्तियों को देश के भीतर अपनी इसी विचारधारा के मानस बंधुओं का साथ मिल रहा है।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

शिक्षा में भी बढ़े स्वदेशी का भाव

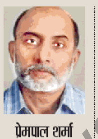

प्रेमपाल शर्मा

पिछले पांच वर्षों में विदेश में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या दोगुनी से भी अधिक हो गई है

इन दिनों प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और अन्य वरिष्ठजन देशवासियों से स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने का आग्रह कर रहे हैं। इसके लिए जीएसटी में सुधार और कुछ नीतियों में बदलाव किए गए हैं, ताकि भारतीय नागरिक अपने देश की वस्तुओं को प्राथमिकता दें, लेकिन इस 'स्वदेशी राग' में शिक्षा के क्षेत्र में स्वदेशी का महत्व, जैसे कि मेडिकल, इंजीनियरिंग या अन्य विषयों की पढ़ाई के लिए अपने देश के विश्वविद्यालयों को ही चुनने की बात कहीं नहीं उठाई जा रही है। यह सच है कि आजादी के बाद भी बच्चे विदेश पढ़ने जाते थे, लेकिन तब हमारे पास विश्वविद्यालयों की संख्या इतनी नहीं थी। वर्तमान में जब हमारे पास लगभग 1000 विश्वविद्यालय और हजारों निजी एवं सरकारी कालेज हैं, तब विदेश पढ़ने जाने के कारण क्या हैं? इसका एक बड़ा कारण यह है कि आज अधिकांश राजनेता, नौकरशाह और विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक, जो थोड़े बहुत अमीर हैं, उन्होंने अपने बच्चों को विदेश भेजने का आसान विकल्प चुन लिया है। आंकड़े बताते हैं कि पिछले पांच वर्षों में विदेश में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या दोगुनी से भी अधिक हो गई है। एक अनुमान के अनुसार, लगभग 15 लाख छात्र विदेश में पढ़ाई कर रहे हैं, जिनमें सबसे अधिक अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और इंग्लैंड में हैं। भारतीय छात्रों की विदेश में पढ़ाई की चाहत को देखते हुए यूरोप, सिंगापुर और अन्य देशों ने भी विभिन्न प्रलोभन नीतियां अपनाई हैं।

एक ओर देश में युवा मेडिकल की पढ़ाई के लिए भटक रहे हैं, दूसरी ओर लाखों गांव-कस्बे अच्छे डाक्टरों की तलाश में हैं। भारतीय छात्र लगभग 90 से अधिक देशों में डाक्टरी की पढ़ाई कर रहे हैं। इस बीच आइआइटी की संख्या बढ़कर 23 हो गई है, लेकिन सरकारी आंकड़े बताते हैं कि इनमें लगभग 50 प्रतिशत फैकल्टी की सीटें खाली हैं और शिक्षकों की कमी के कारण ये संस्थान अस्थायी शिक्षकों पर निर्भर हैं। इसके चलते शिक्षा, पाठ्यक्रम और शोध में गिरावट आई है, जिससे मेधावी छात्र विदेश जाने के लिए मजबूर हो रहे हैं। छात्रों की बढ़ती संख्या को देखते हुए इन सभी देशों ने वीजा और विश्वविद्यालय की फीस भी लगभग दोगुनी कर दी है। प्रति विद्यार्थी एक से दो करोड़ रुपये से कम खर्च नहीं आता। क्या विदेश में पढ़ाई करना इतना आसान है? जिस देश की 80 प्रतिशत जनता को राशन के गेहूं-चावल पर गुजारा करना पड़ता हो, क्या उनके लिए विदेश जाना संभव है? हां, उन नौकरशाहों और उच्च पदों पर रहने वालों के लिए, जिनकी अच्छी खासी तनख्वाह होती है, यह संभव है। वे अपने बच्चों को विदेश में पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, जबकि देश के शिक्षा संस्थानों में सुधार की दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाते।

अपना स्तर बढ़ाएं भारतीय शिक्षा संस्थान ● फाइल

हाल के समय में दिल्ली विश्वविद्यालय भी गिरावट की चपेट में आ गया है। इस केंद्रीय विश्वविद्यालय में दाखिले के लिए पिछले पांच वर्षों से कामन टेस्ट शुरू किया गया है, और नई शिक्षा नीति को भी लागू हुए पांच साल हो गए हैं, लेकिन अपेक्षित परिणाम नहीं आ रहे हैं। यह आवश्यक है कि कोई उच्च स्तरीय समिति तुरंत इसका पुनरावलोकन करे। शिक्षकों की भर्ती के लिए भी यूपीएससी जैसा कोई भर्ती बोर्ड बनाया जाए। जहां छात्रों के दाखिले के लिए कई स्तर की परीक्षाएं होती हैं, वहीं शिक्षक-प्रोफेसर की भर्ती और पदोन्नति के लिए कोई ठोस प्रक्रिया नहीं है। जब भी शिक्षकों और शिक्षा-शोध की बेहतरी के प्रयास किए जाते हैं, तो सबसे अधिक विरोध शिक्षकों की कुछ जमातें करती हैं, जो न तो कक्षाएं लेना चाहती हैं, न बच्चों की फीडबैक पर भरोसा करती हैं और न ही प्राचार्य के वार्षिक मूल्यांकन पर। इन्हीं सब कारणों से हमारे विश्वविद्यालय दुनिया की रैंकिंग में गिरते जा रहे हैं। पिछले वर्षों में इन्हीं चुनौतियों से जूझते-हारते बच्चे आत्महत्या की ओर बढ़ रहे हैं। आइआइटी, आइआइएम जैसे संस्थानों में आत्महत्या की घटनाएं दिल दहला देती हैं। मामला सुप्रीम कोर्ट में भी पहुंच गया है। इसके लिए एक समिति भी बनाई गई है, लेकिन क्या केवल समिति बनाने से समस्या का समाधान होगा? क्या सरकार ऐसी नीति नहीं बना सकती जिससे विश्व स्तर पर शिक्षा में हो रहे परिवर्तन भारत में भी लागू किए जा सकें?

वर्तमान केंद्र सरकार ने भारतीय भाषाओं के पक्ष में अच्छा काम किया है, लेकिन शोध और अन्य नवीन वैज्ञानिक पहलुओं पर अपेक्षित परिणाम आने बाकी हैं। यह देश का सौभाग्य है कि हमारे पास दुनिया की सबसे युवा आबादी है, और उनकी मेहनत का लोहा पूरी दुनिया मानती है। ये युवा बदलाव तभी लाएंगे जब उन्हें सही दिशा मिले। इसके लिए हमें शिक्षा में भी स्वदेशी का प्रण लेना होगा। शिक्षा दुनिया और समाज में परिवर्तन का सबसे बड़ा हथियार है। हमें ऐसे कदम उठाने की आवश्यकता है कि जहां धर्म, जाति, गोत्र और क्षेत्र को भूलकर मेरिट और योग्यता को प्राथमिकता मिले। 2009 के नोबेल पुरस्कार विजेता वेंकट रामकृष्ण का कथन याद आता है कि अमेरिकी विश्वविद्यालय शोध और शिक्षा के मामले में न जाति देखते हैं, न धर्म, और न ही आप कहां से आए हैं। वे बस यही देखते हैं कि आपका लक्ष्य क्या है। इसी कारण वे पिछले 200 वर्षों से दुनिया के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालयों में अव्वल बने हुए हैं। यदि हम शिक्षा में क्रांतिकारी सुधार की दिशा में कदम बढ़ाते हैं, तो हर क्षेत्र में स्वदेशी का महत्व बढ़ेगा।

(शिक्षाविद् लेखक भारत सरकार में संयुक्त सचिव रहे हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन का सार

इस संसार में मनुष्य की सफलता उसके स्वभाव, गुण और कर्म की उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। जब व्यक्ति अपने कार्यों में उत्कृष्टता लाता है, तभी उसे पद, प्रतिष्ठा, मान-सम्मान और महानता प्राप्त होती है। ऐसे ही लोग अपने सपनों को साकार करते हैं और उनकी इच्छाएं पूर्ण होती हैं। नम्रता, शिष्टता और प्रेम से भरे लोग बिना किसी कठिनाई के सब कुछ प्राप्त कर लेते हैं। इसके विपरीत आलस्य, प्रमाद, दुर्गुण और द्वेष से भरे लोग इस मार्ग पर नहीं चल सकते।

धार्मिक दृष्टिकोण से, दास का अर्थ सेवक और अहंकार से रहित होना है। जो व्यक्ति दास बनकर जीवन जीता है, वह हमेशा प्रसन्न और उल्लासित रहता है। दास भाव से व्यक्ति का महत्व बढ़ता है और उसे सब कुछ प्राप्त करना संभव हो जाता है। उसके जीवन में आनंद, सुख और शांति का समावेश होता है। ज्ञानी झुकना पसंद करते हैं, जिससे उन्हें पद, प्रतिष्ठा और ईश्वरीय अनुग्रह प्राप्त होता है। मूर्ख और उद्दंड लोग टूट जाते हैं, क्योंकि वे झुकना नहीं चाहते। यदि हम सही तरीके से जीना चाहते हैं, तो हमें स्वयं को छोटा बनाना होगा। झुकने से कुछ घटता नहीं, बल्कि बढ़ता है। बड़ा बनकर कुछ पाना संभव नहीं है, पाने के लिए छोटा बनना आवश्यक है। भगवान विष्णु ने राजा बलि के समक्ष दान लेने के लिए बौना रूप धारण किया। इसी प्रकार, हनुमान जी ने लंका में प्रवेश करते समय मसक रूप धारण किया। विद्वानों का मानना है कि मसक रूप का अर्थ केवल शारीरिक रूप से छोटा होना नहीं, बल्कि स्वभाव से नम्र और शिष्ट होना है। इसलिए जीवन में कठिन कार्यों को पूर्ण करने के लिए छोटा बनने में कोई हर्ज नहीं।

दास बनकर कार्य करने में कोई समस्या नहीं है। सद्गति उसी को मिलती है, जो ईश्वर के चरणों का दास बन जाता है। पिता अपने पुत्र को स्नेह देता है, लेकिन जब पोता होता है, तो वही स्नेह पोते को देता है। यही जीवन का सार है।

मुकेश ऋषि

पाठकनामा

pathaknama@pat .jagran.com

बाढ़ की विभीषिका

'बाढ़ का विनाशकारी रूप' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त द्वारा उठाए गए मुद्दे अत्यंत प्रासंगिक हैं। पहले बाढ़ की समस्या मुख्यतः बिहार और उत्तर पूर्व के राज्यों तक सीमित थी, जहां की नदियां अक्सर उफान पर रहती थीं, लेकिन इस वर्ष उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र जैसे क्षेत्रों में बाढ़ का प्रकोप देखने को मिला है, जो अत्यंत चिंताजनक है। जलवायु परिवर्तन ने मौसम के चक्र को विकृत कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप सड़कें टूट रही हैं, पुल बह रहे हैं और जान-माल का भारी नुकसान हो रहा है। आर्थिक संकट के साथ-साथ मानवीय और सामाजिक संकट भी उत्पन्न हो रहे हैं, जो आसानी से हल नहीं होते। दुर्भाग्य की बात यह है कि बाढ़ को हम अक्सर प्राकृतिक आपदा मानकर अपने दायित्वों से मुंह मोड़ लेते हैं, जबकि इसके पीछे मानवीय कारण भी हैं। हम यह स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं कि लोग नदियों और नालों पर अपने मनमाने तरीके से अतिक्रमण कर रहे हैं। ऐसे में थोड़ी सी वर्षा भी बाढ़ जैसी स्थिति उत्पन्न कर सकती है। प्राकृतिक आपदाएं हमारी आधारभूत संरचना को बाधित करती हैं, लेकिन यदि हम दूरदर्शी नीतियों को अपनाकर ठोस योजनाओं पर अमल करें, तो बाढ़ के प्रभाव को कम किया जा सकता है। बाढ़ के संदर्भ में दीर्घकालिक नीति के तहत सरकार को सक्रियता से काम करने की आवश्यकता है। अन्यथा यह कहना मुश्किल होगा कि कौन-सा क्षेत्र बाढ़ से सुरक्षित है। चाहे वह मैदानी क्षेत्र हो या पहाड़ी, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कागज से निकलकर धरती पर उतरने में समय नहीं लेता। इसलिए हमें बाढ़ की विभीषिका से निपटने के लिए एक ठोस और प्रभावी रणनीति की आवश्यकता है, ताकि हम भविष्य में इस प्रकार की आपदाओं से बेहतर तरीके से निपट सकें।

डा. मिथिलेश कुमार, भागलपुर (बिहार)

ट्रंप के तेवर बदले

विगत कुछ दशकों से भारत और अमेरिका के बीच रिश्तों में सुधार आया था। डोनाल्ड ट्रंप के राष्ट्रपति के प्रथम कार्यकाल के दौरान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और उनकी मित्रता सुर्खियों में रहती थी, लेकिन ट्रंप के द्वितीय कार्यकाल के दौरान दोनों के रिश्तों में दरार दिख रही है। अमेरिका की 'अमेरिका फर्स्ट' नीति और भारत की स्वतंत्र विदेश नीति के बीच तनाव पैदा हुआ है। इससे व्यापार, निवेश और रणनीतिक सहयोग प्रभावित हुआ है। अमेरिका द्वारा भारत पर पचास प्रतिशत टैरिफ दर लगाने के उपरांत दोनों देशों के बीच तनाव का बढ़ना स्वाभाविक था। अमेरिका की अनर्गल टैरिफ नीति भारत और चीन को एक मंच पर ले आई। नरेन्द्र मोदी, चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग और रूसी राष्ट्रपति पुतिन की आत्मीय मुलाकात ने ट्रंप की चिंता बढ़ा दी, उनके तेवर में बदलाव शुरू हो गया। कल तक ट्रंप भारत के विरुद्ध जहर उगल रहे थे, लेकिन अब उनके सुर बदल गए हैं, वह प्रधानमंत्री मोदी की तारीफ कर रहे हैं।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी

आधे आदमी का हक

छत्तीसगढ़ में मंत्रिमंडल के नवीनतम विस्तार के बाद मंत्रियों की संख्या 14 हो गई है। कांग्रेस के एक सदस्य ने मुकदमा दायर कर दिया है कि मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या निर्धारित अधिकतम सीमा से अधिक हो गई है। ज्ञातव्य है कि केंद्र या किसी भी राज्य में मंत्रियों की अधिकतम संख्या वहां के निचले सदन की कुल सदस्यों की संख्या के 15 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती है। छत्तीसगढ़ में विधानसभा के 90 सदस्य हैं। तदनुसार मंत्रियों की संख्या 13.5 तक ही हो सकती है। इसी आधार पर विपक्ष 14वें मंत्री पर आपत्ति कर रहा है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि उस आधे आदमी का क्या, जिसको कानून के अनुसार मंत्री बनने का हक है? क्या इस बात को मुख्यमंत्री के विवेक पर छोड़ना उचित नहीं होगा? यदि किसी सदन में 93 सदस्य हों तो वर्तमान कानून के हिसाब से 13.95 व्यक्ति ही मंत्री बन सकते हैं। ऐसे में क्या वहां भी 13 मंत्रियों की ही अनुमति होगी? इसलिए इस कानून पर विचार करना चाहिए। सदन में सत्तारूढ़ दल के सदस्यों की संख्या को महत्व देना होगा। 90 सदस्यों के सदन में सत्तारूढ़ दल के 46 सदस्य भी हो सकते हैं और 86 भी। स्वाभाविक है कि अधिक संख्या होने पर मंत्री पद चाहने वाले अधिक होंगे। सत्ता पक्ष के सदस्यों की संख्या के आधार पर मंत्रिमंडल की अधिकतम संख्या का निर्धारण होना चाहिए।

धर्मेन्द्र नाथ रस्तोगी, दुर्गादेवी मंदिर मार्ग, चौक, पटना

X पोस्ट

हजरतबल में लगी पट्टिका पर विवाद समझ से परे है। अशोक स्तंभ न तो बुतपरस्ती से जुड़ा है और न ही इसका कोई धार्मिक-मजहबी सरोकार है। इसके बावजूद कुछ नेता उपद्रव फैलाने वालों के साथ खड़े हैं?

वेद प्रकाश मलिक@Vedmalik1

राष्ट्रीय चिह्न अशोक स्तंभ तो मुद्रा पर भी है, पासपोर्ट पर भी है, संविधान में भी है, संसद के माथे पर भी है और भारत की राजकीय मुहर पर भी है। कहां-कहां इसका विरोध होगा? अमिताभ अग्निहोत्री@Aamitabh2

जापानी प्रधानमंत्री ने अमेरिका के साथ व्यापार सौदे के लिए जापानी हितों को ताक पर रख दिया था। पार्टी में उपजे असंतोष के कारण उन्हें इस्तीफा देना पड़ा। अमेरिका भारत के साथ भी जापान और दक्षिण कोरिया जैसा औपनिवेशिक व्यवहार करना चाहता था।

नवरूप सिंह@TheNavroopSingh

कुछ जानकार यह जताने लगते थे कि अब भारत पूरी तरह चीन के पाले में चला गया है, इसी बीच सीडीएस ने कहा है कि उनके मुताबिक चीन के साथ सीमा विवाद भारत की सबसे बड़ी चुनौती है। तन्वी मदान@tanvi_madan

जनपथ

नालंदा की भूमि को कहते 'बीड़ीबाज',
गरियाएं जिस भूमि को, चहें उसी का राज।
चहें उसी का राज लाज भी तनिक न आए,
अब तो क्षुब्ध बिहार उन्हें ढंग से समझाए।
कहते 'काऊ बेल्ट' समझते जिसको गंदा,
उन्हें कहां स्वीकार करेगा वह नालंदा!

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त
जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प. बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 148

****

कल्पमेधा

ज्यामिति की रेखाओं और चित्रों में हम वे अक्षर सीखते हैं, जिनसे यह संसार रूपी महान पुस्तक लिखी गई है।

– गैलिलिओ

सियासी शुचिता

एक आदर्श राजनेता वही होता है, जो ईमानदार, जिम्मेदार और जन-हितैषी हो। पारदर्शिता, निष्पक्षता और जनता के प्रति जवाबदेही उनके कार्य का हिस्सा हो। जो आमजन की समस्याओं और जरूरतों को भली-भांति समझे और उनका निराकरण करे। किसी भी जनप्रतिनिधि का यह मूल कर्त्तव्य है कि वह समाज में सौहार्द, शांति, सामंजस्य और सकारात्मक मूल्यों को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध रहे। मगर जब जनता का चुना हुआ नुमाइंदा खुद ही आपराधिक आरोपों के घेरे में आ जाए तो इन सब आदर्शों का क्या महत्त्व रह जाता है? इस तरह के मामले जब बड़ी संख्या में सामने आने लगे तो सियासत में शुचिता के स्तर का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। चुनाव अधिकार संस्था एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म्स (एडीआर) की एक हालिया अध्ययन रपट में खुलासा किया गया है कि देश के लगभग 47 फीसद मंत्रियों के खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज हैं। यानी केंद्र और राज्य सरकारों के कुल मंत्रियों में से करीब आधे आपराधिक गतिविधियों में आरोपी हैं। यह आंकड़ा चौंकाने वाला और आम जनमानस को सचेत करने वाला है। सवाल है कि अगर जनप्रतिनिधियों की ही छवि इस तरह की है, तो हम किस तरह के समाज और राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं?

रपट के मुताबिक, जिन मंत्रियों के खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज हैं, उनमें हत्या, अपहरण और महिलाओं के खिलाफ अपराध जैसे गंभीर आरोप शामिल हैं। राष्ट्रीय स्तर पर चालीस फीसद केंद्रीय मंत्रियों ने खुद पर आपराधिक मामले दर्ज होने की जानकारी अपने चुनावी हलफनामे में दी है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, बिहार, ओड़ीशा, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पंजाब, तेलंगाना, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली और पुदुचेरी में साठ फीसद से ज्यादा मंत्रियों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं। इससे साफ है कि राजनीति में आपराधिक छवि वाले नेताओं का दबदबा बेरोक-टोक बढ़ रहा है। मगर सबसे महत्त्वपूर्ण सवाल यह है कि दागदार नेताओं को संसद या विधानसभा में भेजने और सरकार का हिस्सा बनाने का मौका कौन दे रहा है?

सवाल यह भी है कि जनता को कैसे पता चलेगा कि किस नेता का आचरण कैसा है और उस पर आपराधिक मामला दर्ज है या नहीं? इसका जवाब चुनाव आयोग के उस कदम में समाहित है, जिसमें सभी राजनीतिक दलों को निर्देश दिया गया है कि वे चुनाव में अपने उम्मीदवार घोषित करने के दौरान उन पर दर्ज आपराधिक मामलों की जानकारी भी सार्वजनिक करें। अगर कोई दल इन निर्देशों का पूरी तरह पालन नहीं करता है, तो चुनाव आयोग को निश्चित रूप से उस पर कड़ा संज्ञान लेना चाहिए। यह रपट ऐसे समय पर आई है, जब हाल ही में केंद्र सरकार ने संसद में संविधान संशोधन विधेयक पेश किया है, जिसमें गंभीर आपराधिक आरोपों में गिरफ्तारी के बाद तीस दिन तक हिरासत में रहने पर प्रधानमंत्री सहित मुख्यमंत्रियों और मंत्रियों को पद से हटाने का प्रावधान है। अगर इस विधेयक को रपट के आंकड़ों की नजर से देखा जाए तो केंद्र सरकार की ओर से यह अहम पहल है। मगर इस पहलू पर गौर करना भी जरूरी है कि नीति और नीयत दोनों साफ-सुथरी, निष्पक्ष और पारदर्शी होनी चाहिए, तभी व्यवस्था में सुधार की उम्मीद की जा सकती है। कानून बनाने के साथ-साथ उसे प्रभावी तरीके से लागू करना भी जरूरी है, ताकि समस्याओं को जड़ से उखाड़ा जा सके।

लापरवाही के जिम्मेदार

बरसात के दिनों में सड़कों के किनारे बने नाले या बड़े गड्ढे अक्सर पानी से भर जाते हैं और उसके खतरे का अंदाजा नहीं होना स्वाभाविक है। विडंबना यह है कि ऐसे गड्ढे या नाले में गिर कर किसी की मौत की घटनाओं को आमतौर पर हादसा मान कर नजरअंदाज कर दिया जाता है और लापरवाही के जिम्मेदार लोग बच जाते हैं। मगर असम के गुवाहाटी में सामने आई एक घटना इस मामले में एक नजीर है। गौरतलब है कि गुवाहाटी में एक निर्माणाधीन उपरिगामी पुल स्थल पर कई नाले और मैनहोल को खुला छोड़ दिया गया था। उसी में एक नाले में गिर जाने की वजह से तीन वर्ष के एक बच्चे की मौत हो गई। अगर इसे भी महज एक हादसा मान लिया जाता तो शायद इस पहलू पर किसी को सोचने की जरूरत नहीं महसूस होती कि वहां नाले को खुला छोड़ दिया गया था, तो यह वहां ड्यूटी पर तैनात अधिकारियों या कर्मचारियों की लापरवाही थी, जिसने एक बच्चे के जान ले ली। मगर बच्चे के पिता ने कंपनी की लापरवाही की शिकायत की और उसके बाद आरोपी तीन अधिकारियों को गिरफ्तार किया गया।

सवाल है कि किसी भी निर्माण स्थल पर सुरक्षा सुनिश्चित किए जाने के बुनियादी पहलू को लेकर वहां मौजूद अधिकारी सजग और संवेदनशील क्यों नहीं होते। खुला छोड़ दिए गए गड्ढे, नाले या मैनहोल में अगर धोखे से कोई व्यक्ति गिर जाता है और उसे कोई बड़ा शारीरिक नुकसान होता है, तो ऐसी घटना को हादसे के बजाय आपराधिक लापरवाही के तौर पर क्यों नहीं देखा जाए? सवाल है कि लोगों की आम आवाजाही वाली जगह पर अगर इस तरह की घोर अनदेखी की वजह से किसी की जान चली जाती, तो इसके लिए किसे जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। सड़कों-रास्तों के आसपास मैनहोल, नाले या गड्ढे को ढकना और पूरी तरह जोखिमरहित बनाने का दायित्व किसका है? अगर कोई महकमा या उसके अधिकारी गड्ढे को ढके जाने को लेकर अपना काम ईमानदारी से पूरा करने के मामले में लापरवाही बरतते हैं और इसका नुकसान किसी व्यक्ति या परिवार को उठाना पड़ता है, तो इसकी पूरी जवाबदेही उसे खुला छोड़ने वाले लोग, कंपनी, संबंधित विभाग और अधिकारी पर होनी चाहिए।

भूपेन दा... भारत के रत्न

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं, जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज रही है।

नरेंद्र मोदी

भारतीय संस्कृति और संगीत से लगाव रखने वालों के लिए आज आठ सितंबर का दिन बहुत खास है। और विशेषकर इस दिन के साथ असम के मेरे भाइयों और बहनों की भावनाएं जुड़ी हुई हैं। आज भारत रत्न डा भूपेन हजारिका की जयंती है। वे भारत की सबसे असाधारण और सबसे भावुक आवाजों में से एक थे। यह बहुत सुखद है कि इस वर्ष उनके जन्म शताब्दी वर्ष का आरंभ हो रहा है। यह भारतीय कला-जगत और जन-चेतना की दिशा में उनके महान योगदानों को फिर से याद करने का समय है।

भूपेन दा ने हमें संगीत से कहीं अधिक दिया। उनके संगीत में ऐसी भावनाएं थीं, जो धुन से भी आगे जाती थीं। वे केवल एक गायक नहीं थे, वे लोगों की धड़कन थे। कई पीढ़ियां उनके गीत सुनते हुए बड़ी हुईं। उनके गीतों में हमेशा करुणा, सामाजिक न्याय, एकता और गहरी आत्मीयता की गूंज है। भूपेन दा के रूप में असम से एक ऐसी आवाज निकली, जो किसी कालजयी नदी की तरह बहती रही। भूपेन दा सशरीर हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी आवाज आज भी हमारे बीच है। वह आवाज आज भी सीमाओं और संस्कृतियों से परे है। उसमें मानवता का स्पर्श है।

भूपेन दा ने दुनिया का भ्रमण किया, समाज के हर वर्ग के लोगों से मिले, लेकिन वे असम में अपनी जड़ों से हमेशा जुड़े रहे। असम की समृद्ध मौखिक परंपराएं, लोक धुनें और सामुदायिक कहानी कहने के तरीकों ने उनके बचपन को गढ़ा। यही अनुभव उनकी कलात्मक भाषा की नींव बने। वे असम की आदिवासी पहचान और लोगों के सरोकार को हर समय साथ लेकर चले। बहुत छोटी उम्र से उनकी प्रतिभा लोगों को नजर आने लगी। केवल पांच वर्ष की उम्र में उन्होंने सार्वजनिक मंच पर गाया। वहां लक्ष्मीनाथ बेझबरुआ जैसे असमिया साहित्य के अग्रदूत ने उनके कौशल को पहचाना। किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने अपना पहला गीत रिकार्ड कर लिया।

संगीत उनके व्यक्तित्व का सिर्फ एक पहलू था। भूपेन दा भीतर से एक बौद्धिक व्यक्तित्व थे। जिज्ञासु, साफ बोलने वाले, दुनिया को समझने की अटूट चाह रखने वाले। ज्योति प्रसाद अग्रवाल और विष्णु प्रसाद रभा जैसे सांस्कृतिक दिग्गजों ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला और उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को और बढ़ावा दिया। सीखने की यही लगन उन्हें काटन कालेज, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तक ले गई। वे बीएचयू में राजनीति शास्त्र के छात्र थे, लेकिन उनका अधिकतर समय संगीत साधना में बीतता था। बनारस ने उन्हें पूरी तरह संगीत की तरफ मोड़ दिया। काशी का सांसद होने के नाते मैं उनकी जीवन यात्रा से एक जुड़ाव महसूस करता हूं और मुझे बहुत गर्व होता है।

काशी से आगे बढ़ी जीवन यात्रा में फिर उन्होंने अमेरिका में कुछ समय बिताया। वहां उन्होंने अपने समय के नामचीन विद्वानों, विचारकों और संगीतकारों से संवाद किया। वे पाल रोबसन से मिले, जो दिग्गज कलाकार और नागरिक अधिकारों के लिए संघर्ष करने वालों के नेता थे। रोबसन का गीत '...मैन रिवर' उनके कालजयी गीत 'बिश्टीरनो परोरे' की प्रेरणा बना। अमेरिका की पूर्व प्रथम महिला एलेनार रुजवेल्ट ने भारतीय लोकसंगीत प्रस्तुतियों के लिए उन्हें स्वर्ण पदक भी दिया।

भूपेन हजारिका संगीत के साथ ही मां भारती के भी सच्चे उपासक थे। भूपेन दा के पास अमेरिका में रहने का विकल्प था, लेकिन वे भारत लौट

आए और संगीत साधना में डूब गए। रेडियो से लेकर रंगमंच तक, फिल्मों से लेकर शैक्षिक वृत्तचित्रों तक, हर माध्यम में वे पारंगत थे। जहां भी गए, नई प्रतिभाओं को समर्थन दिया। भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की

भूपेन दा की रचनाएं काव्यात्मक सौंदर्य से भरी रहीं और साथ-साथ उन्होंने सामाजिक संदेश भी दिए। गरीबों को न्याय, ग्रामीण विकास, आम नागरिक की ताकत, ऐसे अनेक विषय उन्होंने उठाए। उनके गीतों ने नाविकों, चाय बागान के मजदूरों, महिलाओं, किसानों की आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं। साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे... और आज भी पा रहे हैं।

आकांक्षाओं को आवाज दी। उनकी रचनाएं लोगों को पुरानी स्मृतियों में ले जाती थीं। साथ ही, उन्होंने आधुनिकता को देखने का एक सशक्त नजरिया भी दिया। बहुत से लोग, खासकर सामाजिक रूप से वंचित तबकों के लोग, उनके संगीत से शक्ति और आशा पाते रहे... और आज भी पा रहे हैं।

भूपेन दा की जीवन यात्रा में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की भावना का स्पष्ट प्रभाव दिखता है। उनकी रचनाओं ने भाषा और क्षेत्र की सीमाएं तोड़कर एकजुट किया। उन्होंने असमिया, बांग्ला और हिंदी फिल्मों के लिए संगीत रचा। उनकी आवाज में जो पीड़ा थी, वह बरबस हम सभी का ध्यान खींच लेती थी। 'दिल हूम हूम करे' में जो पीड़ा बहती है, वह सीधे दिल की गहराइयों को छू लेती है। और जब वे पूछते हैं, 'गंगा बहती है क्यूं', तो ऐसा लगता है मानो हर आत्मा को झकझोर कर जवाब मांग रहे हों। उन्होंने पूरे भारत के सामने असम को सुनाया, दिखाया, महसूस कराया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि आधुनिक असम की सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने में उनका बड़ा योगदान रहा। असम के भीतर और दुनिया भर के असमिया प्रवासियों, दोनों के लिए वे असम की आवाज बने।

भूपेन दा राजनीतिक व्यक्ति नहीं थे, फिर भी जनसेवा की दुनिया से जुड़े रहे। 1967 में वे असम के नौबोइचा से निर्दलीय विधायक चुने गए। यह दिखाता है कि लोगों को उन पर कितना गहरा विश्वास था। उन्होंने राजनीति को अपना करियर नहीं बनाया, लेकिन हमेशा लोगों की सेवा में जुटे रहे। भारत की जनता और भारत सरकार ने उनके योगदान का सम्मान किया। उन्हें पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, दादासाहेब फाल्के अवार्ड समेत कई सम्मान मिले। 2019 में हमारे कार्यकाल के दौरान उन्हें भारत रत्न मिला। यह मेरे लिए और राजग सरकार के लिए भी सम्मान की बात थी। दुनिया भर में, खासकर असम और उत्तर-पूर्व के लोगों ने इस अवसर पर खुशी जताई। यह उन सिद्धांतों का सम्मान था, जिन्हें भूपेन दा दिल से मानते थे। वे कहते थे कि सच्चाई से निकला संगीत किसी एक दायरे में सिमट कर नहीं रहता। एक गीत लोगों के सपनों को पंख लगा सकता है, और दुनिया भर के दिलों को छू सकता है।

मुझे 2011 का वह समय याद है जब भूपेन दा का निधन हुआ। मैंने टीवी पर देखा कि उनके अंतिम संस्कार में लाखों लोग पहुंचे। हर आंख नम थी। जीवन की तरह, मृत्यु में भी उन्होंने लोगों को साथ ला दिया। इसलिए उन्हें जलुकबाड़ी की पहाड़ी पर ब्रह्मपुत्र की ओर देखते हुए अंतिम विदाई दी गई, वही नदी जो उनके संगीत, उनके प्रतीकों और उनकी स्मृतियों की जीवनरेखा रही है। अब ये देखना बहुत सुखद है कि असम सरकार भूपेन हजारिका सांस्कृतिक ट्रस्ट के कार्यों को बढ़ावा दे रही है। यह ट्रस्ट युवा पीढ़ी को भूपेन दा की जीवन यात्रा से जोड़ने में जुटा है। भूपेन दा की सांस्कृतिक विरासत को सम्मान देने के लिए देश के सबसे बड़े पुल को भूपेन हजारिका सेतु नाम दिया गया। 2017 में जब मुझे इस सेतु के उद्घाटन का अवसर मिला, तो मैंने महसूस किया कि असम और अरुणाचल... इन दो राज्यों को जोड़ने वाले, उनके बीच की दूरी कम करने वाले इस सेतु के लिए भूपेन दा का नाम सबसे उपयुक्त है।

भूपेन हजारिका का जीवन हमें करुणा की शक्ति का एहसास कराता है। लोगों को सुनने और अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की सीख देता है। उनके गीत आज भी बच्चों और बुजुर्गों, दोनों की जुबान पर हैं। उनका संगीत हमें मानवीय और साहसी बनना सिखाता है। वह हमें अपनी नदियों, अपने मजदूरों, अपने चाय बागान के कामगारों, अपनी नारी शक्ति और अपनी युवा शक्ति को याद रखने को कहता है। वह हमें विविधता में एकता पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है

भारत भूपेन हजारिका जैसे रत्न से धन्य है। जब हम उनके शताब्दी वर्ष का आरंभ कर रहे हैं, तो आइए यह संकल्प लें कि उनके संदेश को दूर-दूर तक पहुंचाएंगे। यह संकल्प हमें संगीत, कला और संस्कृति के लिए और काम करने की प्रेरणा दे, नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करे, भारत में सृजनात्मकता और कलात्मक उत्कृष्टता को बढ़ावा दे। मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

(लेखक भारत के प्रधानमंत्री हैं।)

अभिव्यक्ति के आयाम

विप्रम

प्रदर्शन के मूल में उन्नति होती है। यह भी मान सकते हैं कि प्रदर्शन से तरक्की का मार्ग प्रशस्त होता है। बढ़ने और इससे आगे बढ़ने की लालसा जीवन के क्रम हैं। जीवन में हर हाल में जागृति रहे, इसलिए प्रदर्शन होते रहने चाहिए। जागरूक व्यक्ति नई से नई राह पर चल कर एक से एक उपलब्धियां पा लेता है। ऊंचे से और ऊंचा बढ़ने को कृतसंकल्प रहता है। इसे ही सही विकास की राह पर चलना कहते हैं। विकास और उन्नति या तरक्की कोई अलग चीज नहीं, एक दूसरे के पर्याय हैं। शब्दों के मायाजाल पर मोहित होने की जरूरत तो नहीं है, लेकिन प्रदर्शन को शायद इसीलिए प्रगति सूचक कहा जाता है कि इसमें खुद को अभिव्यक्त किया जाता है।

किसी भी प्रदर्शन से पूर्व नई सकारात्मक सोच लानी होती है। सिर्फ अचानक ही आसमान की ओर देख लेने से कुछ नहीं होता। कम से कम अपने ऊपर आत्मविश्वास के स्तर को कुछ ऊंचा रखना पड़ता है। कुछ लोग उसे अहं के रूप में देख सकते हैं, लेकिन उसी आरोप को संभालना पड़ता है। शुरुआत में दृष्टि एक बिंदु पर न टिक कर इधर-उधर घूमती है, लेकिन सब कुछ देख लेने की फौरी जिज्ञासा इतनी प्रबल होती है कि जितना दिखता है, उससे और अधिक देख लेना चाहती है। इसे सृजक के नजरिए से देखा जा सकता है। दुनिया भर के सृजन के स्रोत ऐसे ही बनते हैं और बढ़ते जाते हैं। उमंगों की हिलोरों से एक खास उमंग जब उठती है ऊपर, तो वह आसमान को छू लेने की चाहत रखती है। इसे ही मुहावरे में कहा जाता है आसमान में छेद करना। यह मूलतः प्रदर्शन का परिणाम है। इसलिए यह आवश्यक है कि आगे बढ़ने की निरंतरता सदा बनी रहे।

दुनिया मेरे आगे

प्रदर्शन एक समान हो और उसका फल भी एक समान आए, यह तब संभव है जब एक समान शिक्षण-प्रशिक्षण हो, कोई भेदभाव न रखा जाए। बच्चों को एक स्कूल-परिधान पर्याप्त नहीं होते। उन्हें समान अवसर भी मिलना चाहिए। इसलिए कई विद्यालयों नें अपने विद्यार्थियों को अंग्रेजी के 'यू' अक्षर, यानी अर्धगोलाकार आकृति में बैठाना शुरू कर दिया है।

आमतौर पर प्रत्येक विद्यार्थी की शैक्षिक प्रगति यानी 'प्रोग्रेस रिपोर्ट-कार्ड' बनाया जाता है, जिसे 'रिजल्ट कार्ड' या परिणाम-पत्र भी कहते हैं। इसे अच्छे-बुरे या उन्नति-अवनति का परिणाम प्रदर्शन-पत्र भी कह सकते हैं। यहां मुख्य उद्देश्य केवल प्रदर्शन से है। ये अक्सर जीवन में पथ-प्रदर्शक का कार्य कर जाते हैं। अनजाने में आई जटिलताओं का निवारण भी इन्हीं के आधार पर केंद्रित होता है।

आम जीवन में ही नहीं, बल्कि देश-विदेश की सरकारें भी स्वीकार्य प्रदर्शन करवाती हैं। अंतर इतना होता है कि कहीं दिखाने के लिए तो कहीं दूसरे को डराने-धमकाने के लिए ये प्रदर्शन किए जाते हैं। हालांकि प्रदर्शन कोरे प्रदर्शन नहीं होते, न ही ये मूक-बधिर होते हैं, बल्कि कुछ जागरूक लोगों की बुलंद आवाज में भी हो सकते हैं कि जिससे बड़े से बड़े सदन हिल जाते हैं। गहराई से देखा जाए तो शांतिपूर्ण प्रदर्शन से आपसी सौहार्द बना रहता है। टीवी पर एक पारिवारिक धारावाहिक में अलग-अलग जाति-धर्म-भाषा के परिवार हंसी-खुशी से रहते दिखाए जाते हैं। वे बात-बेबात लड़ाई-झगड़े भी करते हैं। फिर सुलह-दोस्ती कर एक सीध में हंसते हुए खड़े दिखते हैं। ये खड़े होने की उनका शैली ही खास प्रदर्शन है। इनके चेहरे दर्शकों की ओर मुंह किए हुए अर्ध-गोलाई में होते हैं।

बहरहाल, प्रदर्शन एक समान हो और उसका फल भी एक समान आए, यह तब संभव है जब एक समान शिक्षण-प्रशिक्षण हो, कोई भेदभाव न रखा जाए। बच्चों को एक स्कूल-परिधान पर्याप्त नहीं होते। उन्हें समान अवसर भी मिलना चाहिए। इसलिए कई विद्यालयों नें अपने विद्यार्थियों को अंग्रेजी के 'यू' अक्षर, यानी अर्धगोलाकार आकृति में बैठाना शुरू कर दिया है। इसके फलस्वरूप हर विद्यार्थी अपने शिक्षक के सामने होता है, उनसे सवाल-जवाब या बातचीत भी कर सकता है। इससे वह अपने शैक्षिक प्रदर्शन को बेहतर कर सकता है। एक-दूसरे के पीछे बैठने की मानसिकता कभी भी आगे, और आगे बढ़ने को प्रेरित नहीं करती।

सब जानते हैं स्वतंत्रता दिवस या गणतंत्र दिवस जैसे मौकों पर देश की जनता को संबोधित किया जाता है। यह भी सरकार की विविध उपलब्धियों के प्रदर्शन का ही मौका होता है। जनसमूह इसे देख-सुन कर मान भी लेता है। इस अवसर पर दुनिया को एक कूटनीति के तहत अपनी ताकत से परिचित भी कराना होता है। विभिन्न झांकियां विकास की कहानियां प्रदर्शित करती दिखती हैं। चूंकि प्रदर्शन विकास के संदर्भ में होते हैं, इसलिए कई लोगों के लिए इसका अध्ययन स्वाभाविक हो जाता है। यों प्रदर्शन का इतिहास बहुत पुराना है। जहां तक लोकतांत्रिक प्रदर्शनों की बात है, इनकी जगहें बदलती रही हैं। जो प्रदर्शन कभी किसी शहर के केंद्र में हुआ करते थे, उनके लिए अब उसी शहर के किसी किनारे-कोने में जगह तय कर दी गई है। चूंकि बेबस जनता का मूल अधिकार होता है प्रदर्शन करना, अपनी बात को सरकार तक पहुंचाना, तो उधर जिम्मेदार सरकार का भी दायित्व बनता है इन प्रदर्शनों को संरक्षित और सुरक्षित रखना। जिस देश में प्रदर्शन जिंदा रहते हैं, वहां लोकतंत्र कभी मरता नहीं।

प्रदर्शन का दर्शन-शास्त्र समझने के लिए पीछे की ओर भी देखा जा सकता है। गांधीजी के लिखे को केवल याद करने से नहीं चलेगा, उन्हें संजीदगी से पढ़ने और समझने की जरूरत है। यह जानना चाहिए कि ब्रिटिश सत्ता के दौरान भारत ने गांधी जी की प्रेरणा से किस तरह अपनी स्वतंत्रता की मजबूत इच्छाशक्ति का प्रदर्शन किया था और आखिरकार इन्हीं से निकले संदेशों के संकेत समझते हुए, अहिंसक प्रदर्शनों को देखते हुए अंग्रेज यहां से चले गए। यानी प्रदर्शन की दिशा सकारात्मक हो, तो वह देश-दुनिया में स्थायी अध्याय की रचना कर सकता है।

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

बीमार व्यवस्था

स्वास्थ्य विभाग कभी भी नागरिकों के स्वास्थ्य को गंभीरता से नहीं लेता। नतीजा ये कि निजी अस्पताल तो बेलगाम हुए ही, सरकारी अस्पतालों में भी अव्यवस्था फैल गई। इंदौर के सरकारी अस्पताल में चूहों के कुतरने से दो नवजातों की मौत ने सोचने पर विवश कर दिया है। स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी क्यों नहीं समय-समय पर निरीक्षण करते हैं। आखिर दो बच्चों की मौत के लिए कौन जिम्मेदार है। नवजातों की अंगुलियों को चूहे कुतरते रहे और किसी को पता नहीं चला? ड्यूटी पर उस समय कर्मचारी कहां थे। जिसकी कीमत दो नवजातों को जान देकर चुकानी पड़ी। यह निराशाजनक ही है कि अस्पताल परिसर में इतने चूहे होने के बावजूद प्रबंधन ने सघन अभियान नहीं चलाया। अगर स्वास्थ्य व्यवस्था में इतनी लापरवाही होगी, तो आम जन किस उम्मीद से अस्पताल जाएंगे। नागरिक आखिर किस पर भरोसा करे? कुछ भी हो गहन जांच-पड़ताल कर दोषियों को सख्त से सख्त सजा दी जाए। मासूमों की मौत की जवाबदेही तय होनी ही चाहिए।

– योगेश जोशी, बड़वाह

सुधार के आगे

'राहत की दर' (संपादकीय, 6 सितंबर) सामयिक है। सरकार के इस नए कदम को बड़ी पहल बताया जा रहा है। मगर सब जानते हैं कि विपक्षी नेताओं की तमाम चेतावनियों के बावजूद इस कर का विरोध करने वालों को नादान कहा गया था। सामान्यतः चिकित्सकों का प्रत्येक कदम महत्त्वपूर्ण कहलाता है। बीमारी का कष्ट भी मरीज को भोगना होता है, कड़वी दवा का स्वाद भी रोगी ही अनुभव करते हैं। महंगी दवाई की कीमत भी रोगी को चुकानी होती है और यदि इलाज विफल रहे, तो वह भी रोगी की किस्मत ही कही जाती है। कुछ इसी तर्ज पर जीएसटी का कष्ट भी जनता ने सहा है। जीएसटी की असहनीय दरों का भार भी जनता ने ढोया है और असंगत जीएसटी से अपना खजाना भी सरकार ने ही भरा है। सरकार कह रही है कि जीएसटी सुधार विकसित भारत के निर्माण का आधार बनेगा, तो इसकी सार्थकता देखने की बात होगी।

– इशरत अली कादरी, भोपाल

राहत और बचत

कुछ समय पूर्व आयकर प्रणाली में व्यापक सुधार के बाद अब सरकार जीएसटी प्रणाली में भी चार दरों वाली व्यवस्था को खत्म कर दो दरों पांच फीसद और 18 फीसद लागू करने जा रही है। इससे आम जनता को काफी राहत और बचत के रास्ते खुलते नजर आ रहे हैं। अब रोजमर्रा उपयोग में आने वाली उपभोक्ता सामग्री जैसे दूध, पनीर, ब्रेड, साबुन, शेम्पू, टूथपेस्ट आदि जिन पर पहले अधिक कर देना पड़ता था अब कर मुक्त या पांच फीसद जीएसटी के दायरे में आ जाएंगे जिससे आम मध्यमवर्गीय लोगों की जेब में पैसा बचेगा और वे अपनी अन्य जरूरतों को आराम से पूरा कर पाएंगे। कृषि क्षेत्र में भी जीएसटी को 12 फीसद से घटा कर पांच फीसद कर दिया है। उम्मीद है कि अब वस्तुओं की खपत बढ़ेगी तो उत्पादन भी बढ़ेगा।

– संजय डागा, हातोद जिला, इंदौर

गुरु की महिमा

शिक्षा के बगैर जीवन अधूरा है। इसके माध्यम से एक व्यक्ति शिक्षित और सकारात्मक सोच के साथ चरित्रवान हो सकता है। यह जीवन के लिए आवश्यक है। ऐसे व्यक्तित्व के निर्माण में शिक्षक अपनी भूमिका दीप-स्तंभ के रूप में निभाता है और वह शिष्य के मार्ग को आलोकित करता है। इससे विद्यार्थी उन्नति मार्ग पर बढ़ते हुए अपने जीवन को सार्थक करता है। शिक्षकों के बारे में कहा जा सकता है कि 'असतो मा ज्योतिर्गमय' यानी जो अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। गुरु को अपने शिष्य, मां को अपने बेटे और किसान को लहलहाते खेत देख कर जो आनंद आता है, वह इस पृथ्वी पर शायद सबसे बड़ा आनंद है। ऋग्वेद काल में शिष्य गुरु के आश्रम में रह कर शिक्षा ग्रहण करते थे। मगर अब दौर बदल गया है। डिजिटल युग में शिक्षक भी बदल रहे हैं।

– तारामुनी देवी, लालगंज, वैशाली

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, सोमवार 8 सितम्बर 2025

संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

बंगाल चुनाव से पहले सांप्रदायिकता की खुराक

ताशकंद फाइल्स और कश्मीर फाइल्स जैसी फिल्मों के कारण विवादों में रहने वाले फिल्म निर्माता निर्देशक विवेक अग्निहोत्री अपनी नयी फिल्म बंगाल फाइल्स के कारण फिर चर्चा में हैं। श्री अग्निहोत्री की पहले की फिल्मों की तरह ही ये फिल्म भी वर्तमान की किसी घटना के साथ इतिहास के संदर्भ को जोड़ते हुए आगे बढ़ती है। हर बार की तरह इस बार भी बड़ी मासूमियत के साथ सांप्रदायिकता की नयी खुराक दर्शकों को पिलाने की कोशिश की गई है। हालांकि कुछ वक्त पहले ही इसी तरह की एक और फिल्म उदयपुर फाइल्स को दर्शकों ने नकार दिया था। जबकि उसके निर्माता-निर्देशक ने भी फिल्म के प्रचार में कोई कमी नहीं छोड़ी थी। उदयपुर में कन्हैयालाल नाम के दर्जी की नृशंस हत्या पर फिल्म बनाई गई थी, इसलिए उनके बेटों को सिनेमा हॉल में बिठाकर उनकी रोते हुई तस्वीरें और वीडियो भी सामने आए। लेकिन फिर भी फिल्म नहीं चली। कुछ ऐसा ही हाल बंगाल फाइल्स का भी रहा। पांच सितंबर को जब फिल्म प्रदर्शित हुई तो खास कलेक्शन नहीं आया, लेकिन इसके बाद सोशल मीडिया पर फिल्म के कई दृश्य प्रसारित किए गए और बताया गया कि फलाने दृश्य ने तहलका मचा दिया, ढिकाने दृश्य में ग़ज़ब का अभिनय है। शायद इसी के कारण सप्ताहांत पर फिल्म की कमाई थोड़ी बढ़ी है। जिस तरह कश्मीर फाइल्स बनाकर विवेक अग्निहोत्री विदेशों में सैर सपाटा करते, रील बनाते दिखाई दिए थे, हो सकता है इस बार का मुनाफा भी उनके जीवन में मौज मस्ती के कुछ और आयाम जोड़ दे। आखिर में वे फिल्में समाजसेवा के लिए तो बना नहीं रहे हैं, उनका मकसद कमाई करना है जिसमें वे सफल हो रहे हैं। अब सोचना समाज को है कि इसमें उसे क्या नुकसान हो रहा है।

प.बंगाल में अगले साल विधानसभा चुनाव होने हैं और भाजपा अब तक जिस काम में सफल नहीं हो पाई है, उसे वो इस बार पूरा करना चाहती है। पहले वाममोर्चे की सरकार थी और भाजपा की कमान अटल जी, आडवानी जी के हाथों में थी, तो प.बंगाल में भाजपा को कोई सफलता नहीं मिली। नरेन्द्र मोदी के आने के बाद भाजपा और संघ को यह खुशफहमी हुई कि जिस तरह मोदी लहर पूरे देश में कामयाब रही, प. बंगाल में भी इस पर सवार होकर भाजपा सत्ता तक पहुंच ही जाएगी। लेकिन ममता बनर्जी के कारण यह संभव नहीं हो पाया। पिछले चुनाव में श्री मोदी ने दीदी ओ दीदी कहकर बंगाल की सभ्यता, संस्कृति सबको चुनौती दी थी, शक्तिपूजक इस समाज को एक महिला मुख्यमंत्री और नेता के लिए यह अशोभनीय संबोधन रास नहीं आया। लिहाजा भाजपा हार गई। हालांकि उसकी ताकत में थोड़ा इजाफा हुआ, क्योंकि अघोषित तरीकों से ममता बनर्जी के करीबियों को भाजपा अपने खेमे में न केवल ले आई, बल्कि उन्हें ऊंचा ओहदा भी दे दिया। अब यही लोग ममता बनर्जी को चुनौती दे रहे हैं। इधर भाजपा ने दूसरे तरीके भी अख्तियार करने शुरु कर दिए हैं। एसआईआर को करवाने की तैयारी हो चुकी है, हालांकि ममता बनर्जी ने जिस तरह विधानसभा में वोट चोरी के मुद्दे पर मोदी सरकार को घेरा है, उसके बाद बिहार की तरह बंगाल में खेल करना थोड़ा कठिन हो सकता है। इसलिए अब भाजपा अपने चिर परिचित पैंतरे सांप्रदायिक नफरत पर उतर आई है।

बीते कई दिनों से बांग्लादेशी घुसपैठियों का मुद्दा भाजपा ने उठा कर रखा है। हालांकि इसमें पहला सवाल गृहमंत्री अमित शाह से ही होता है कि सीमाओं की सुरक्षा आपकी जिम्मेदारी है, फिर किसी भी राज्य में आप घुसपैठियों के लिए विपक्षी दलों पर उंगली किस तरह उठा सकते हैं। लेकिन ऐसे सवालों से बेपरवाह भाजपा बांग्लादेशी घुसपैठियों के मुद्दे पर कार्रवाई करती जा रही है, जिसमें सबसे ज्यादा असर गरीब तबके के, कामगार अल्पसंख्यकों पर पड़ रहा है। कई जगह तो ऐसे प्रसंग भी आए जिसमें बांग्ला बोलने वालों पर ही शक किया जा रहा है। अब पुलिस प्रशासन की ऐसी क्षुद्र बुद्धि पर तरस खाएं या नाराज हों, जो दूसरे धर्म या भाषाओं को लेकर इतने शक्की हो चुके हैं कि यह भी भूल गए कि बांग्ला इस देश की संविधानसम्मत भाषाओं में से एक है। घुसपैठियों के अलावा दुर्गापूजा को लेकर भी भाजपा का सांप्रदायिक नजरिया सामने आने लगा है।

प.बंगाल में दुर्गापूजा धार्मिक से ज्यादा सांस्कृतिक महत्व रखती आई है, क्योंकि सारे धर्मों के लोग इसके आयोजन में एक जैसे उत्साह से हिस्सा लेते हैं। लेकिन अब इसमें भी धर्म का भेदभाव दिखने लगा है।

हाल ही में प.बंगाल की उर्दू अकादमी ने कुछ कट्टरपंथियों के दबाव में लोकप्रिय गीतकार जावेद अख्तर का कार्यक्रम रद्द कर दिया। जावेद अख्तर हिंदू और मुस्लिम दोनों तरह के कट्टरपंथियों के लिए एक जैसे विचार रखते हैं, दोनों उनकी नजर में गलत हैं। कुछ मुस्लिम संगठनों ने कहा कि जावेद अख्तर की कुछ टिप्पणियों से समुदाय की धार्मिक भावनाएं आहत हुई हैं। इसके बाद मुशायरे को स्थगित कर दिया गया। राज्य की तरफ से संचालित अकादमी ने स्थगन के लिए कोई आधिकारिक कारण नहीं बताया। लेकिन इस घटना से समझा जा सकता है कि राज्य में धार्मिक विभेद कितना गहरा और असरकारी होता जा रहा है। ममता बनर्जी के लिए यह चेतावनी ही है कि वे बंगाल की समृद्ध संस्कृति और परंपराओं को इस तरह नष्ट न होने दें। इस घटना पर अब जावेद अख्तर ने एक्स पर लिखा है कि कोई उन्हें नहीं समझ सकता। उन्होंने लिखा 'नेक आदमी ने मुझे गैर-मुस्लिम समझा और गैर-मुस्लिम यह समझता है कि मैं मुसलमान हूं। शराबी मुझे अल्लाह वाला समझता है और अल्लाह वाला मुझे शराबी समझता है। सुन के इन की बातें मैं हैरान हूं। मैं वह विषय हूं जिसको समझना मुश्किल है। हालांकि कोई मुझे समझना चाहे तो मैं बहुत आसान हूं।'

जावेद अख्तर की इन बातों पर विचार करना आज जरूरी है, क्योंकि इसी से सांप्रदायिक सद्भाव को संभाल कर रखा जा सकता है। अर्बन नक्सल कहकर आधुनिक और उदार विचार रखने वाले बुद्धिजीवियों का अपमान करने वाले विवेक अग्निहोत्री जैसे लोग चुनावों के वक्त खास विषयों को एक ही नजरिए से प्रस्तुत कर फिल्में बनाते हैं और भाजपा इन्हें बढ़ावा देती है, क्योंकि आखिर में भाजपा को ही इससे फायदा होता है। कोई आश्चर्य नहीं अगर प्रधानमंत्री मोदी अपनी किसी रैली में बंगाल फाइल्स का प्रचार करते या खुद फिल्म देखते दिखाई पड़ जाएं। फिल्में भी रचनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम ही हैं, लेकिन इसमें परोक्ष रूप से जिन लोगों को निशाना बनाया जा रहा है, उन्हें अब संभलने की जरूरत है।

क्या ग्रेट प्रधानमंत्री कहने से हम राष्ट्रीय हित छोड़ देंगे?

भारत को प्रधानमंत्री मोदी रिसिविंग एंड पर ले आए! किसी भी देश के साथ हमारे संबंध कैसे होंगे यह वह तय कर रहा है। तुम दिन को अगर रात कहो रात कहेंगे!

दुखद! शर्मनाक!

जब अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने बोला कि सीज फायर मैंने करवाया। पचास बार! कारण बता बता कर। व्यापार का डर दिखाकर, धमकी देकर। स्टाप इट कहकर। तो एक बार भी जवाब नहीं दिया। और जब ट्रंप ने कहा कि मोदी दोस्त और उससे भी बढ़कर ग्रेट प्राइम मिमिस्टर तो दिल बाग़ बाग़ हो गया उसका का समर्थन करने लगे।

किस बात का? पचास प्रतिशत टैरिफ का? सीज फायर का? पाकिस्तान के नेतृत्व को मजबूत और शक्तिशाली बताने का? उसके आर्मी चीफ मुनीर को जो पहलगाम हमले का मास्टर माइंड है उसके साथ लंच करने का?

यह भारत की हालत कर दी। और रात- दिन दावा यह कि 2014 से पहले कुछ था ही नहीं। प्रचार की ऐसी आंधी कि लोगों को दिखाई देना बंद हो गया। सिर्फ वही दिखता है जो वे दिखाते हैं।

नेहरू इन्दिरा की बात छोड़िए। उन वाकई महान प्रधानमंत्रियों की बात जिन्होंने अन्तरराष्ट्रीय जगत में किस तरह भारत का महत्व बनाया था। अभी जर्मनी के विदेश मंत्री जोहान वेडफुल भारत आए थे। क्या कहकर गए हैं वे?

कहीं ठीक से मीडिया में नहीं आया। उन्होंने कहा कि जब वे स्टूडेंट थे, युवा थे तब सुनते थे कि भारत एक गुटनिरपेक्ष देश है। और इस बात से उसकी बहुत प्रतिष्ठा होती थी।

समझिए जर्मनी का विदेश मंत्री अपने विद्यार्थी जीवन में युवा काल में भारत की क्या हैसियत थी सम्मान था यह सुनकर बड़ा हो रहा था। और एक वही नहीं पूरे यूरोप, अमेरिका, रुस सारी अन्तरराष्ट्रीय दुनिया के स्टूडेंट युवा। यह नेहरू और इन्दिरा काल की बात है। छोड़िए इसे। इन्दिरा जी का वह किस्सा भी नहीं बताएंगे कि किस तरह वे अमेरिका के राष्ट्रपति निक्सन को मुंह पर खरी करारी सुना कर आईं थीं। भक्त कहते हैं निक्सन ने उन्हें बाद में पीठ पीछे गाली दी। दी ही होगी। कोई महान प्रधानमंत्री थोड़ी कहा होगा! क्योंकि इन्दिरा ने तो वापस आकर पाकिस्तान के दो टुकड़े कर दिए थे। उसी पाकिस्तान के जिसके नेतृत्व को आज ट्रंप ग्रेट पावरफुल कह रहा है।

खैर हम कह रहे थे कि नेहरू इन्दिरा की बात नहीं बताएंगे। लेकिन भारत की प्रगति, शक्ति और दबदबे की बात हो तो उनका नाम आ ही जाता है। जो उनके विरोधी हैं, उनके बड़े और हिम्मत वाले कामों से डरते है उनके मुंह से गाली आलोचना के तौर पर और बाकी लोगों की कलम से इतिहास को सही परिप्रेक्ष्य में पेश करने के सिलसिले में। लेकिन हम बता रहे थे अमेरिका के सिलसिले में कि कैसे ट्रंप कहता है कि हम आपसे खुश नहीं हैं। और हमारे प्रधानमंत्री इस पर भी रीझ जाते हैं कि चलो बात तो की। और उसकी सराहना करने लगते हैं।

शकील अख्तर

> राजीव गांधी भी उसी परंपरा में थे। आपरेशन ब्रासटैक्स शुरू किया था। दुनिया का सबसे बड़ा सैन्य अभ्यास। पांच लाख सैनिकों के साथ। पाकिस्तान डर गया। अमेरिका उसकी मदद में आया। उसी समय राजीव गांधी ने यह बयान दिया कि अमेरिका पाकिस्तान की मदद बंद करे। पाकिस्तान कश्मीर में हस्तक्षेप बंद करे। उसके बाद हम सोचेंगे कि किससे कैसे संबंध रखना है। अभी हम देख ही रहे हैं रुस और युक्रेन के मामले में।

मगर राजीव गांधी ने क्या कहा था? 1987 में एक विदेशी चैनल को इंटरव्यू देते हुए उन्होंने कहा कि हम कुछ चीजों को लेकर अमेरिका से खुश नहीं हैं। और अब 2025 में उल्टा अमेरिका के राष्ट्रपति कह रहे है कि मैं कुछ चीजों को लेकर मोदी से खुश नहीं हूं। मगर मोदी इसके बावजूद सिर हिला रहे हैं। ट्रंप की तारीफ कर रहे हैं।

मिटा दो सारे इतिहास को! नहीं तो यह चिल्ला चिल्ला कर कहेगा कि कभी भारत में इतने ताकतवर साहसी और देश का सम्मान रखने वाले प्रधानमंत्री हुए थे। वीडियो इंटरव्यू है। विदेशी पत्रकार के साथ। पत्रकार पूछ रहा है कि क्या आप अमेरिका के साथ बेहतर रिश्ते बनाना चाहेंगे? और राजीव गांधी अब नेहरू इन्दिरा की तरह उन पर भी कड़े आक्रमण शुरू कर देना कह रहे हैं कि यह इस पर निर्भर करेगा कि अमेरिका पाकिस्तान के साथ कैसे रिश्ते रखता है।

यही बात हमने शुरू में कही कि आज भारत रिसिविंग एंड पर ले आए। पहले भारत कहता था, एक्शन लेता था, वह अपने देश के हित अनहित देखकर दूसरे देशों से संबंध रखता था। रिसिविंग एंड पर नहीं रहता था कि कोई जो कहे उसे मान लेता था। उनके करने या न करने से प्रभावित होता था। बैठ जा बैठ गई! खड़े हो जा हो गई! भारत ने कभी नहीं किया।

उल्टे राजीव गांधी ने कहा कि हम अमेरिका से खुश नहीं हैं। मतलब सीधी बात हमें खुश रखने, संतुष्ट करने की जिम्मेदारी अमेरिका की है। आज कोई सोच सकता है कि इस तरह की बात हमारे प्रधानमंत्री मोदी कर सकते हैं? भारत में साहस की कमी नहीं है। न भारत कभी झुका है। मगर आज हमारे प्रधानमंत्री कभी ट्रंप का प्रचार करने अमेरिका जाते हैं। कभी उसके इतनी बार कहने पर की लोगों ने गिनना बंद कर दिया कि सीज फायर मैंने करवाया एक जवाब नहीं दे पाते हैं और फिर जब वह चीन, रुस, नार्थ कोरिया को काउंटर करने के लिए हमारे प्रधानमंत्री की तारीफ करता है तो मीडिया और भक्त ही नहीं खुद मोदी उस पर रिस्पांड (खुशी जताना) करने लगते हैं। जैसे इसी इंतजार में बैठे हों!

विदेश नीति तहस-नहस हो गई। केवल अपनी आत्म मुग्धता के कारण। भारत को कुछ भी कहो, केवल मेरी तारीफ करो। भारत को तो वे खुद भी कुछ भी कहते रहते हैं। यहां तक कि 2014 से पहले भारत में जन्म लेना शर्म की बात थी। शर्म भी ऐसी वैसी नहीं। कहते हैं कि किस देश में जनम ले लिया महाराज।

अपनी मातृभूमि के प्रति ऐसे विचार इससे पहले कभी देखे? गांधी, नेहरू, भगत सिहं तो गुलाम भारत में पैदा हुए थे। मगर उस समय के देश के प्रति भी कभी असम्मान की बात नहीं कही।

व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा बहुत खराब चीज होती है। और विदेश नीति में तो देश को नुकसान पहुंचाने वाली। नेपाल जो सबसे स्वाभाविक दोस्त माना जाता था। जहां वीसा, पासपोर्ट की जरूरत नहीं होती थी। भारतीय करंसी चलती थी। वह हमारे सोशल मीडिया प्लेटफार्म बंद कर रहा है।

तो हम बता रहे थे नेहरू इन्दिरा की बात नहीं, राजीव गांधी की बात। तो राजीव ने यह भारत की ताकत बढ़ाने वाला बयान दिया कि अमेरिका के साथ संबंध हम तय करेंगे। और इस आधार पर कि वह पाकिस्तान की मदद करना बंद करता है कि नहीं। यह साहस भारत के प्रधानमंत्रियों की परंपरा रही है। किसी भारत के मीडिया की जरूरत नहीं होती थी। विदेशी मीडिया उनके साहस और भारत के हित हमेशा ऊपर रखने की बात करते थे।

राजीव गांधी भी उसी परंपरा में थे। आपरेशन ब्रासटैक्स शुरू किया था। दुनिया का सबसे बड़ा सैन्य अभ्यास। पांच लाख सैनिकों के साथ। पाकिस्तान डर गया। अमेरिका उसकी मदद में आया। उसी समय राजीव गांधी ने यह बयान दिया कि अमेरिका पाकिस्तान की मदद बंद करे। पाकिस्तान कश्मीर में हस्तक्षेप बंद करे। उसके बाद हम सोचेंगे कि किससे कैसे संबंध रखना है। अभी हम देख ही रहे हैं रुस और युक्रेन के मामले में। ट्रंप से दबने के बदले या उसे खुश करने के बदले दोनों देशों के राष्ट्रपति अपने राष्ट्रीय हित देख रहे हैं। व्यक्तिगत प्रचार पर कोई नहीं जा रहा। आप रूस और युक्रेन के राष्ट्रपति को ग्रेट बताकर उन्हें खुश नहीं कर सकते। किसी भी देश का राष्ट्राध्यक्ष नहीं होता है। हमें भी सोचना चाहिए।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार है)

बेहूदे विकास से उपजे भूकंप

■ डॉ. ओ. पी. जोशी

जुलाई में रूस के सुदूर पूर्वी कामचटका क्षेत्र में 8.7 तीव्रता का भूकंप आया था जिसे अभी तक का पांचवा बड़ा भूकंप बताया गया है। विश्व के लगभग 12 देशों में इसके झटके आये, परंतु रूस व जापान में सर्वाधिक 200 झटके महसूस किए गए। इस वर्ष के सात माह में 20 से ज्यादा देशों में अलग-अलग तीव्रता के भूकंप दर्ज किये गए हैं। पाकिस्तान में तीन बार, दिल्ली 'एनसीआर' (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) एवं बैतूल (म.प्र.) में दो बार भूकंप हुआ।

वैसे तो भूकंप एक प्राकृतिक आपदा है, परंतु मनुष्य द्वारा विकास के नाम पर किये गए कारनामों से इसकी आवृत्ति बढ़ी है। वैज्ञानिक आधार पर अभी तक यह सिद्धान्त मान्य है कि पृथ्वी का भू-भाग बारह भारी पट्टी समान रचनाओं (टेक्टोनिट प्लेट्स) पर टिका है, जो एक तरल पदार्थ (लावा) पर तैरती रहती है। तैरते-तैरते इनके टकराने से ऊर्जा निकलती है, जिससे भूकंप होता है।

> खगोलशास्त्रियों एवं भौतिकविदों के अनुसार पृथ्वी का 'गुरूत्वाकर्षण बल' कुछ कम होता जा रहा है। इसे धरती का बूढ़ा होना माना गया है। बूढ़ी, कमजोर धरती ज्यादा कंपकंपा रही है, जो भूकंप के रूप में प्रकट होता है। गुरूत्वाकर्षण बल कम क्यों हो रहा है, यह अभी ज्यादा स्पष्ट नहीं है।

भूकंप के इस सर्वमान्य सिद्धान्त के अलावा कई अन्य क्षेत्रों में किये गए अध्ययनों से भूकंप के कारणों के संबंध में कुछ नई अवधारणाएं/परिकल्पनाएं सामने आयी हैं। ये अवधारणाएं कोई सिद्धांत तो नहीं हैं, परंतु इन पर ध्यान देना जरूरी लगता है। इन अवधारणाओं में धरती का बुढ़ाना, दर्द-तरंगों का निर्माण, बड़े बांध, ग्लेशियर्स का पिघलना, परमाणु विस्फोट व बमबारी, भूजल, तेल का ज्यादा दोहन एवं उपग्रह संचार प्रणाली आदि प्रमुख हैं।

खगोलशास्त्रियों एवं भौतिकविदों के अनुसार पृथ्वी का 'गुरूत्वाकर्षण बल' कुछ कम होता जा रहा है। इसे धरती का बूढ़ा होना माना गया है। बूढ़ी, कमजोर धरती ज्यादा कंपकंपा रही है, जो भूकंप के रूप में प्रकट होता है। गुरूत्वाकर्षण बल कम क्यों हो रहा है, यह अभी ज्यादा स्पष्ट नहीं है।

'एटियोलॉजी ऑफ अर्थक्वेक -ए न्यू एप्रोच' नामक किताब (लेखक एमएम बजाज, एमएसएम इब्राहिम और विजयराज सिंह) में यह बताया गया है कि कत्ल के कगार पर खडे जानवरों द्वारा उत्पन्न शोर, तनाव व भय से एक प्रकार की 'दर्द-तरंगें' पैदा होती हैं, जो भूकंप पैदा करने में सहायक हो सकती हैं। लेखकों ने कई सबूतों के आधार पर यह बताने का प्रयास किया है कि पशुओं के संहार के साथ भूकंप के कारण को जोड़ना संभव है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक एलबर्ट आईंस्टीन ने भी भू-विज्ञान के क्षेत्र में 'आईंस्टीयन पेन-वेव्ज' (ईपीडब्ल्यू) की चर्चा की है, हालांकि ज्यादातर वैज्ञानिक इससे सहमत नहीं हैं।

डेढ सौ मीटर से ऊंचे बड़े बांधों से भूकम्पनीयता बढ़ने के कई अध्ययन किये गए हैं। बांध क्षेत्र में बांध स्वयं की सीमेन्ट, कांक्रीट व लोहे की भारी-भरकम रचना तथा जलाशय, दोनों मिलकर उस क्षेत्र में बहुत अधिक भार बढ़ा देते हैं। बांध की रचना का भार तो वही रहता है, परंतु जलाशय में पानी का वजन घटता-बढ़ता रहता है। पानी भूमि में चट्टानों की दरारों से होकर काफी गहराई में पहुंचकर वहां कुछ हलचल पैदा करता है। अमेरिकी वैज्ञानिक ने सर्वप्रथम 1935 में कोलोराडो नदी पर बने हूवर-बांध के बड़े जलाशय में भरे पानी के भार को बताया था। केरिबा (द.अफ्रीका), क्रेमास्ता (यूनान) तथा कोयना (भारत) में आये भूकम्प भी बांध-जनित बताये गये हैं।

जापान के वैज्ञानिकों ने लम्बे समय तक भूकम्पों का अध्ययन कर यह बताया कि ग्लोबल-वार्मिंग के प्रभाव से ग्लेशियर्स की बर्फ पिघलने से भूकम्प आ सकते हैं। पृथ्वी पर सही संतुलन बनाये रखने हेतु ग्लेशियर्स जैसे बने थे, उनका उसी अवस्था में बने रहना जरूरी है। ग्लेशियर्स पर कम बर्फ की मात्रा पृथ्वी की प्लेटों पर पड़ रहे भार को बदलती है जिसको समायोजित करने हेतु भू-गर्भीय प्रक्रिया भूकम्प के रूप में प्रकट होती है। यह अध्ययन भूकम्प की 'समास्थिति अवधारणा' से मेल खाता है। इसके अनुसार भूतल के पर्वत और समुद्र के धरातल एक-दूसरे को तराजू की तरह संतुलित रखते हैं। 8 अक्टूबर 2005 को पाकिस्तान तथा उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों में आये भूकम्प का कारण ग्लेशियर्स पिघलने से जोड़ा गया था।

कुछ भूकम्पों को परमाणु विस्फोट एवं बमबारी से भी जोड़कर देखा गया है। वर्ष 1976 में ताशकंद (रूस) में आये भूकम्प का सम्भावित कारण कुछ सप्ताह पहले किये गये दो परमाणु विस्फोट बताये गए थे। गुजरात में आये भूकम्प की वजह भी कच्छ के रण के उस पार पाकिस्तान द्वारा परमाणु विस्फोट बतायी गयी थी। 'लास-अल्मोस नेशनल लैब' (अमेरिका) के भूकम्पविदों का दावा है कि कुछ भूकम्पों का कारण गुपचुप तरीके से किए गए परमाणु परीक्षण भी हो सकते हैं। रूस की एक एजेंसी ने मार्च 2012 में उत्तरी अफगानिस्तान के दाहानी-जोया स्थान में 7.2 तीव्रता के भूकम्प का कारण अमेरिकी बमबारी बताया था।

कुछ स्थानों पर जब भूजल एवं तेल का ज्यादा दोहन किया गया तो भूकम्पनीयता बढ़ने की सम्भावना बतायी गयी। भूजल व तेल के ज्यादा दोहन से धरती के अंदर निर्वात (वेक्युम) बन जाता है, जिसे भरने के लिए चट्टानों में हलचल होती है एवं कंपन पैदा होता है। 'राष्ट्रीय भू-भौतिकी अनुसंधान केन्द्र, हैदराबाद' तथा राजस्थान के भूगर्भशास्त्री प्रो. एके सिन्हा ज्यादा भूजल दोहन को भूकम्प का कारण मानते हैं। 'राष्ट्रीय भूकम्प विज्ञान केन्द्र' ने दिल्ली 'एनसीआर' में बढ़ती भूकम्पनीयता के जो कारण बताए हैं उनमें यमुना का सूखना, जलस्त्रोतों की समाप्ति तथा ज्यादा भूजल दोहन प्रमुख हैं।

मई 1995 में रूस के शहर नेफ्तेगोर्क में आए भूकम्प का कारण तेल के ज्यादा दोहन को माना गया था। दुनिया में बढ़ती संचार सुविधा के लिए कई उपग्रह कार्यरत हैं। इन उपग्रहों से प्रसारण के लिए धरती पर पहुंचने वाली विद्युत-चुम्बकीय तरंगें भी भूकम्पनीयता बढ़ाने में सहायक हो सकती हैं। केलिफोर्निया में बढ़ते भूकम्पों का एक संभावित कारण संचार उपग्रहों का बढ़ना भी बताया गया है। यह तो निश्चित है कि भूकम्प का आना एक प्राकृतिक आपदा है, परंतु विकास के नाम पर किये गये कार्यों के प्रभाव से इनकी संख्या बढ़ने की सम्भावना को एकदम नकारा नहीं जा सकता।

(स्वतंत्र लेखक तथा पर्यावरण के मुद्दों पर लिखते हैं।)

आपके पत्र

तरक्क़ी के शहर, अकेलेपन के घर

महानगरों में लाखों लोग रहते हैं, परंतु अधिकांश अपने पड़ोसियों को भी नहीं पहचानते। एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत शहरी भारतीयों ने स्वीकार किया कि वे खुद को अकेला महसूस करते हैं। यह आंकड़ा दिखाता है कि आधुनिक शहरी जीवन ने भले ही हमें भौतिक सुविधाएं दी हों, परंतु भावनात्मक और सामाजिक रूप से हमें कमजोर किया है। तकनीक ने भी इस अकेलेपन को बढ़ाया है। स्मार्टफोन और सोशल मीडिया पर निर्भरता ने वास्तविक मानवीय बातचीत को सीमित कर दिया है। मेट्रो या बस में सफर करते हुए अक्सर लोग एक-दूसरे से संवाद नहीं करते, बल्कि मोबाइल स्क्रीन में डूबे रहते हैं।

शहरीकरण ने भारत के सामाजिक जीवन और मानवीय संबंधों को गहराई से प्रभावित किया है। यह केवल आर्थिक प्रगति का साधन नहीं बल्कि एक ऐसा सामाजिक परिवर्तन भी है जिसने हमारे पारंपरिक रिश्तों, विश्वास और आपसी सहयोग की प्रकृति को बदल दिया है। शहरी जीवन की रफ्तार, अवसरों की विविधता और सेवाओं तक आसान पहुंच ने निश्चित ही नागरिकों को नए विकल्प दिए हैं, परंतु इसके साथ ही यह प्रक्रिया मानवीय संवेदनाओं और सामुदायिक रिश्तों को भी चुनौती देती रही है।

शहरों के विस्तार ने लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य और रोज़गार जैसे अवसरों के करीब लाया। पहले जहां ग्रामीण भारत में इन सुविधाओं तक पहुंच कठिन थी, वहीं शहरी क्षेत्रों ने इन्हें आसान बनाया। दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु और कोलकाता जैसे महानगरों में विश्वस्तरीय अस्पताल, विश्वविद्यालय और सांस्कृतिक केंद्र मौजूद हैं। यह स्थान केवल सेवाएं ही उपलब्ध नहीं कराते, बल्कि ज्ञान और विचारों के आदान-प्रदान के मंच भी बनते हैं। इसी वजह से शहरी जीवन को आधुनिक भारत का इंजन कहा जाता है। यहां के निवासी विभिन्न भाषाई, धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं, जिससे विविधता का अनुभव होता है और सहिष्णुता की भावना विकसित होती है साथ ही, शहरी जीवन में सांस्कृतिक समृद्धि और नागरिक चेतना भी प्रबल होती है। कला दीर्घाएं, पुस्तकालय, रंगमंच, साहित्यिक सभाएं और जनआंदोलन जैसी गतिविधियां शहरों की पहचान रही हैं। चाहे वह कोलकाता की अकादमी ऑफ फाइन आर्ट्स हो या दिल्ली का इंडिया हैबिटेट सेंटर—ये स्थान सामूहिक संवाद और रचनात्मकता को बढ़ावा देते हैं। इसके अतिरिक्त, बेंगलुरु जैसे शहरों में आईटी उद्योग और स्टार्टअप संस्कृति ने पेशेवर सहयोग और नेटवर्किंग की नई संभावनाएं खोली हैं। नागरिक स्वयं भी संगठित होकर अपने अधिकारों और सुविधाओं के लिए आवाज़ उठाते हैं। गुरुग्राम की आवासीय कल्याण समितियों द्वारा कचरा प्रबंधन और जलभराव के खिलाफ अभियान इसका उदाहरण हैं।

लेकिन इन सब सकारात्मक पहलुओं के बीच शहरीकरण का एक दूसरा चेहरा भी है, जो कहीं अधिक गहन सामाजिक संकट की ओर इशारा करता है। सबसे बड़ी चुनौती है सामुदायिक बंधनों का क्षरण। गांवों में जहां पड़ोसियों और रिश्तेदारों के बीच गहरे संबंध होते हैं, वहीं शहरों में रहने वाले लोग अक्सर अनजानेपन और दूरी का अनुभव करते हैं। गेटेड सोसाइटी और उच्च-आय वर्गीय कॉलोनियों ने सामाजिक जीवन को खंडित कर दिया है। लोग अपने छोटे-से घेरे में सिमट जाते हैं और 'अन्य' के प्रति अविश्वास पनपने लगता है। यह प्रवृत्ति समाज में सामूहिक विश्वास और सहयोग की भावना को कमजोर करती है।

-डॉ.सत्यवान सौरभ

ललित सुरजन की कलम से

धर्म :पुल या खाई?

मुस्लिम धर्मगुरुओं का तर्क है कि रास गरबा एक धार्मिक उत्सव है और किसी को भी दूसरे धर्म के उत्सव में क्यों जाना चाहिए। इस तर्क का अनुमोदन उदारवादी हिन्दू भी करते हैं कि सब अपने-अपने धर्म के अनुसार आचरण करें। एकबारगी यह तर्क अपील कर सकता है, लेकिन इससे बहुत सारे नए प्रश्न खड़े होते हैं। हमने भारत की उदार व बहुलतावादी सामाजिक परंपरा के बारे में जो कुछ जाना है, उसके अनुसार यहां एक लंबे समय से विभिन्न धार्मिक समुदायों द्वारा एक-दूसरे के अनुष्ठानों में भाग लेने की न सिर्फ परंपरा रही है, बल्कि उसे सदैव सराहा भी गया है। आज भी ईद, दीवाली और क्रिसमस जैसे पर्वों पर नागरिक एक-दूसरे से मिलते ही हैं। हमने हिन्दुओं के द्वारा मोहर्रम के समय ताजिये उठाने के किस्से भी अपने बड़े-बूढ़ों से सुने हैं।

(देशबन्धु में 25 सितम्बर 2014 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2014/09/blog-

गुरुवाणी विचार

जपो तां एको नामा-और निराफल कामा

साजन संत करहो एह काम आन तियागि जपो हरि नाम।

सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहो- आप जपहो अवरह नाम जपावहो।

भगति भाये तरिये संसार बिन भगती तन होसी छार।

सरब कल्याण सुख निधि नाम बूड़त जात पाये बिसराम।

सगल दुख का होवत नास नानक नाम जपहो गुनतास।

यह शब्द पांचवे नानक गुरु अर्जुन देवजी की वाणी सुखमनी साहिब से ली गई है। इस शब्द की पंक्तियों द्वारा गुरुदेव हमें समझा रहे हैं कि ये जीव संत जन सब कार्य छोड़कर केवल यह जरूरी कार्य करना चाहिए वह है- हरि सिमरन बंदगी में मन रमाये रखना। बिना प्रभु सिमरन बंदगी के यह तन राख की ढेरी हो जाएगा। अगर हम संसार में रहकर संसारिक विषय विकारों में ही गलतान रहे। मोह, माया के जाल में ही फंसे रहे तो एक दिन ऐसा आएगा हम संसार सागर से पार होने के बजाय उसी में डूबकर रह जाएंगे अर्थात फिर गर्भ में पड़ेंगे, फिर संसार में विचरण करेंगे फिर गर्भ योनि में आएंगे-यह चक्कर कभी खत्म नहीं होगा चलता ही रहेगा। अब संसार में फिर हमें पता नहीं कब-कब किस-किस निकृष्ट योनि में भटकना पड़ेगा क्योंकि हमारे किए गए कर्मों के अनुसार परमात्मा हमें संसार में 84 योनियों में से किसी भी योनि में भेजते रहेंगे। इसीलिए हमें चाहिए जो यह मानव देही हमारे अच्छे किसी पुण्य प्रताप से मिली है। उसे सफल कर लें और प्रभु सिमरन बंदगी में मन को रमाए रखें। अपने और परिवार के उदर पोषण हेतु हम भले ही अपना कार्य विहार करते रहें पर मन हमारा हमेशा निरंकार से जुड़ा रहना चाहिए-

हाथ पांव से काम कर चित निरंजन नाल। बिना भक्ति के हमारा पार उतारा होना मुशिकल है। प्रभु बंदगी करने से हमारे हर प्रकार के दुखों का भी नाश होता रहेगा और हम सुखपूर्वक संसार में जीवनयापन करते रहेंगे। हमें प्रभु नाम सिमरन ऐसे मन लगा कर करना चाहिए जैसे भक्त ध्रुव ने, भक्त प्रह्लाद ने किया था।

नाम जपो जी ऐसे ऐसे ध्रुव प्रहलाद जपियो हर जैसे। इसलिए तो गुरवाणी में बार बार ताकीद की जाती है कि साध संगत में प्रभु नाम सिमरन बंदगी में मन को रमाये रखना चाहिए-

अवर काज तेरे किते न काम

मिल साध संगत भज केवल नाम

तथा

जपो तां एको नामा-और निराफल कामा।

प्रभु परमात्मा की हमारे पर विशेष कृपा दृष्टि होगी। उसकी रहमतें नजर होने पर ही हमारा मन सिमरन बंदगी में रम सकेगा। हमें तो उसकी सिमरन बंदगी करते रहना चाहिए-

बार बार के कूकने कभी तो सुने पुकार।

इसीलिए हमारा एक सूत्रीय कार्य यही होना चाहिए कि हर वक्त उठते-बैठते सोते -जागते मन में प्रभु परमात्मा का ध्यान लगाये रखें तभी हमारा इस असार संसार से पार उतारा हो सकेगा-

उठत बैठत सोवत जागत एह मन तुझे चितारे।

-इंदर सिंह आहुजा

https://t.me/AllNewsPaperPaid

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770

ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

चिंतन

आतंकवाद पर अमेरिका की दोहरी नीति उजागर

अमेरिका अपने फायदे के लिए कुछ भी कर सकता है। जहां लाभ हो वहां उसके लिए नीति अनीति कोई मायने नहीं रखती। अनेक मौके ऐसे आए हैं जब अमेरिका की आतंकवाद पर दोहरी नीति जगजाहिर हुई है। अब एक बार फिर ऐसा ही हो रहा है। खुद राष्ट्रपति ट्रंप ने खुलासा किया कि वॉशिंगटन फिलिस्तीनी उग्रवादी समूह हमास के साथ बहुत गहन बातचीत कर रहा है। ट्रंप का यह बयान तब आया है, जब इजरायल ने अमेरिका से हमास के कब्जे में अब भी मौजूद अपने बंधकों की रिहाई का आग्रह किया है। हालांकि, ट्रंप का यह ऐलान अमेरिका की कथनी और करनी में अंतर जरूर दिखाता है कि वह आतंकवादियों से बात नहीं करता। कागजों और जुबान से अमेरिका आतंकवाद को लेकर जीरो टॉलरेंस की नीति पर जोर देता है। वह कहता है कि आतंकवादियों के साथ किसी भी तरह की बातचीत या समझौता नहीं किया जा सकता है। हालांकि अमेरिका ने लगभग दुनिया के हर एक कोने में मौजूद शक्तिशाली आतंकवादी समूहों के साथ संबंध रखे हैं। अगस्त 2021 में अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों की वापसी भला कौन भूल सकता है। यह वापसी तालिबान के साथ अमेरिका के समझौते का ही परिणाम था, जिसे ट्रंप ने अपने पहले कार्यकाल में कतर की मदद से अंजाम दिया था। दुनिया जानती है कि अमेरिका, तालिबान और हमास के अलावा लेबनान के हिजबुल्लाह, अल कायदा, लश्कर-जैश समेत कई आतंकी संगठनों और समूहों के साथ सीधे संपर्क में रहा है। यह ऐसा देश है जो कई बार आतंकवादी समूहों के सीधे संपर्क में न होकर अपने प्रॉक्सी मिलिशिया या फिर खुफिया एजेंसी सीआईए के जरिए उनसे संबंध बनाए रखता है। अमेरिका पर दुनिया के कई देशों में तख्तापलट, विरोध प्रदर्शन, सरकार विरोधी सशस्त्र समूहों के समर्थन के आरोप लगते रहे हैं। दरअसल, अमेरिका की नीति भू-राजनीतिक अवसरवाद पर आधारित है। जहां उसे फायदा दिखता है, वो वही करता है। आतंवाद के पोषक पाकिस्तान के प्रति भी उसकी नीति हमेशा लचीली रही है। पिछले सात दशक में यह बार-बार साबित हुआ है कि विपरीत परिस्थितियों के बावजूद पाकिस्तान से अमेरिका के रिश्ते अडिग रहे हैं। वह दशकों से पाकिस्तान को दक्षिण एशिया और मध्य-पूर्व के बीच रणनीतिक सहयोगी के रूप में इस्तेमाल करता है। उसे आतंक को बढ़ावा देने वाली गतिविधियों से भी परहेज नहीं रहा है। पहलगाम हमले के बाद ऑपरेशन सिंदूर के बीच भी पाकिस्तान को आईएमएफ से आर्थिक मदद दिलाने में अमेरिका ने अहम भूमिका निभाई है। वैसे भी भारत में आतंकी हमलों पर अमेरिका सरकार की प्रतिक्रिया निंदा करने तक सीमित रही है। पाकिस्तान के सियासी नेताओं और सैन्य अफसरों के भारतीय हमले में मारे गए आतंकियों के अंतिम संस्कार में सार्वजनिक रूप से नजर आना यही बताता है कि पाक में आतंकियों का खुल्लम-खुल्ला इस्तेमाल होता है। पाकिस्तान में खुलेआम रैली कर रहे लश्कर-ए-तैयबा के कमांडर सैफुल्लाह कसूरी की सार्वजनिक उपस्थिति और पहलगाम हमले पर उसकी स्वीकारोक्ति को भी इसी नजरिये से देखे जाने की जरूरत है। यह सब पूरी पूरी दुनिया ने देखा, लेकिन अमेरिका को कुछ भी दिखाई नहीं दिया। ट्रंप उसे अपना सहयोगी बताते हैं। अब समय है जब दुनिया अमेरिका के इस दोहरे रवैये को वैश्विक मंच पर चुनौती देते हुए आत्मनिर्भरता और स्पष्टता का परिचय दे। आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई किसी रणनीतिक संतुलन की मोहताज होने के बजाए मानवता के पक्ष में निष्ठावान संकल्प होना चाहिए।

त्योहारों से पहले जीएसटी का उपहार

विश्लेषण
राजेश माहेश्वरी

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने स्वतंत्रता दिवस के मौके पर लाल किले से देशवासियों के साथ जो वादा किया था, वह साकार होने की प्रक्रिया में है। वाकई इस बार दीपावली और अन्य त्योहारों पर 'दोहरा तोहफा' मिलेगा। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण की अध्यक्षता में जीएसटी परिषद ने 'सुधारों के उपहार' को स्वीकृति दे दी है। अब 22 सितंबर के बाद से आम आदमी, महिलाएं, पुरुष, युवा और औसत घर लाभान्वित होंगे। इस तारीख से 'शारदीय नवरात्र' भी आरंभ हो रहे हैं। सभी का मासिक खर्च कम होगा, तो बचत बढ़ेगी। वह बचत बाजार और औसत खपत में खर्च होगी। इससे एफएमसीजी (तेजी से बिकने वाली उपभोक्ता वस्तुएं), खुदरा और ऑटोमोबाइल आदि कई क्षेत्रों में घटे दामों पर उपभोक्ता-मांग में बढ़ोतरी होगी। विनिर्माण से लेकर सेवा क्षेत्रों में वृद्धि होगी। मांग और खरीद बढ़ेगी, तो उत्पादन भी बढ़ेगा। अंततः देश की अर्थव्यवस्था ही फलेगी-फूलेगी।

आर्थिक चुनौतियों से निपटने का कदम

भारत में इनडायरेक्ट टैक्स में किया गया बड़ा बदलाव नई आर्थिक चुनौतियों से निपटने के लिए एक बेहतर कदम है। वैसे तो नई कर प्रणाली यानी जीएसटी के स्लैब में वर्ष 2017 में इसके लागू होने के बाद से कई परिवर्तन किए गए हैं लेकिन, वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण की अध्यक्षता में जीएसटी परिषद ने हाल ही में जो फैसले किए, वे कई मायनों में अहम कहे जाएंगे। अमेरिका में डोनाल्ड ट्रंप के दूसरी बार राष्ट्रपति बनने के बाद से ही वैश्विक व्यापार में बड़ी उथल-पुथल चल रही है। ट्रंप ने खास तौर पर भारत को निशाना बनाया है, जिसके कारण कारोबारी तनाव में हैं और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला प्रभावित होने की आशंका है। ऐसे में देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले असर को देखते हुए टैक्स स्लैब में सुधार काफी जरूरी थे। वैसे भी चार तरह के टैक्स स्लैब के कारण जीएसटी प्रणाली का मूल उद्देश्य पूरा नहीं हो पा रहा था।

रोजगार का मोर्चा संभालना भी जरूरी

उम्मीद की जा रही है कि टैक्स में छूट से घरेलू खपत बढ़ेगी जिससे 'ट्रंप टैरिफ' से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकेगा। रोटी, कपड़ा और घर के रोजमर्रा के सामान पर जीएसटी 12 फीसदी से घट कर 5 फीसदी और इलेक्ट्रॉनिक्स के सामान पर कर 28 फीसदी से घटाकर 18 फीसदी हो जाएगा तो यकीनन आम आदमी राहत महसूस करेगा। महंगाई पहले से ही नियंत्रण में है।

यदि प्रधानमंत्री रोजगार के मोर्चे पर भी स्पष्ट योजनाओं की घोषणा कर दें तो यह देश और भी संपन्न होगा। यदि देश संपन्न होगा और खर्च का माद्दा बढ़ेगा, तो अर्थव्यवस्था भी व्यापक होगी और भारत विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनेगा। वैसे जर्मनी और भारत की अर्थव्यवस्था के बीच बहुत कम फासला शेष है, लिहाजा हमारा तीसरी 'आर्थिक महाशक्ति' बनना तय है। जीएसटी 2.0 सुधारों के तौर पर आठ लंबे सालों के बाद 'ऐतिहासिक बदलाव' है। उसकी प्रक्रिया को आसान बनाया गया है, नतीजतन करोड़ों व्यापारी और खुदरा-व्यवसायी लाभान्वित होंगे। अब कारोबारियों को टैक्स से जुड़े नियमों और कानूनों पर कम खर्च करना पड़ेगा। वे ग्राहक और नवाचार पर अधिक फोकस कर सकेंगे। बताया जा रहा है कि देश में कर घटाने से 2 लाख करोड़ रुपये तक की खपत बढ़ सकती है।

दवाओं पर कर हटाना बेहतर कदम

इसका फायदा छोटे उद्यमों को ज्यादा होगा। आम आदमी और ग्राहकों को मिलने वाले उत्पादों और सेवाओं की गुणवत्ता में भी सुधार होगा। हालांकि कर्नाटक, तेलंगाना, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल, पंजाब, झारखंड, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और केरल जैसी विपक्ष-शासित राज्यों की सरकारों ने करीब 48,000 करोड़ रुपये के राजस्व नुकसान का मुद्दा उठाया है, लिहाजा केंद्र सरकार से मांग की है कि 5 साल तक मुआवजा दिया जाए और वित्तीय सुरक्षा की गारंटी दी जाए। इसमें राजनीति भी हो सकती है। बहरहाल, इस मुद्दे पर पर्याप्त विमर्श हुआ होगा! सबसे महत्वपूर्ण यह है कि कैंसर समेत 33 जीवन-रक्षक दवाओं पर कोई जीएसटी नहीं लगेगा। अन्य सभी दवाओं पर अब जीएसटी 12 फीसदी से घटकर 5 फीसदी हो जाएगा। शिक्षण सामग्रियों में नक्शे, चार्ट, ग्लोब, पेंसिल, शार्पनर, पेस्टल, कॉपी, नोटबुक और इरेजर आदि 12 फीसदी और 5 फीसदी से घटाकर 'शून्य जीएसटी' वाले वर्ग में डाल दिए गए हैं। इनके अलावा, हेयर ऑयल, शैंपू, टॉयलेट सोप बार, टूथ ब्रश, शेविंग क्रीम, जिम, सैलून, योग केंद्र आदि पर जीएसटी 18 फीसदी से 5 फीसदी कर दिया गया है। बटर, घी, चीज और डेयरी स्प्रेड्स, प्री-पैक नमकीन, भुजिया, मिक्सचर, बर्तन, बच्चों के नैपकिन, क्लिनिकल डायपर, सिलाई मशीन और उसके पुर्जे, हैंडीक्राफ्ट आदि पर जीएसटी 12 फीसदी से 5 फीसदी किया गया है।

स्वास्थ्य क्षेत्र पर विशेष ध्यान

अल्ट्रा हाई टेंपरेचर दूध, छेना, पनीर, रोटी और खाकरा, परांठा, ब्रेड समेत सभी भारतीय रोटी पर जीएसटी अब 5 फीसदी के बजाय शून्य लगेगा। स्वास्थ्य क्षेत्र में व्यक्तिगत स्वास्थ्य और जीवन बीमा 18 फीसदी से घटाकर शून्य किया गया है। हालांकि उपकरणों पर 5 फीसदी जीएसटी लगेगा। बीमा की दरें अब बहुत कम हो जाएंगी। देश में अभी 57 करोड़ से अधिक लोगों के पास स्वास्थ्य और करीब 31 करोड़ के पास जीवन बीमा है। कृषि, ऑटोमोबाइल, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण भी सस्ते हो जाएंगे। हालांकि 40 फीसदी का एक और स्लैब रखा गया है, जो सिगरेट, कोल्ड ड्रिंक्स, पान मसाला, तंबाकू, गुटखा आदि विलासिता की वस्तुओं के लिए होगा। इस वर्ग में 350 सीसी से अधिक क्षमता वाली बाइक और निजी विमान भी शामिल हैं। जानकारों के मुताबिक इस सुधार से 8 करोड़ से अधिक ग्रामीण किसान परिवारों, विशेषकर छोटे, सीमांत और भूमिहीन मजदूरों को सीधे लाभ होगा, जो अपनी आजीविका के लिए दुधारू पशुओं का पालन करते हैं। मंत्रालय ने कहा कि कम कराधान से परिचालन लागत कम करने और मिलावट पर अंकुश लगाने में मदद मिलेगी। भारत विश्व का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है। इसका उत्पादन 2023-24 में 239 मिलियन टन होगा, जो वैश्विक दूध उत्पादन का लगभग 24 प्रतिशत होगा।

जीडीपी पर पड़ सकता है असर

भारतीय डेयरी क्षेत्र का कुल बाजार आकार 2024 में 18.98 लाख करोड़ रुपये होने का अनुमान है। अर्थशास्त्रियों का अनुमान है कि 27 अगस्त से लागू 50 फीसदी 'ट्रंप टैरिफ' के कारण भारत के 60.2 अरब डॉलर के निर्यात पर असर पड़ा है। यह अमेरिका भेजे जाने वाले माल का 55 फीसदी और भारत के कुल निर्यात का 18 फीसदी है। सबसे ज्यादा असर कपड़ा, सी-फूड, रत्न व आभूषण और चमड़ा क्षेत्र पर पड़ा है। लघु और मध्यम श्रेणी के ये उद्योग-व्यापार श्रम पर अधिक निर्भर हैं। इन क्षेत्रों के तनाव में आने का असर गरीब परिवारों पर पड़ने की आशंका है। अनुमान है कि वित्त वर्ष 2026 की जीडीपी में 0.4 फीसदी से 0.6 फीसदी तक कमी हो सकती है। त्योहारी सीजन और बिहार चुनाव से ठीक पहले यह फैसला न सिर्फ कारोबारी बल्कि, दूसरे कारणों से भी अनुकूल माना जाएगा। घरेलू मांग मजबूत होने से संबंधित उद्योगों को बाहरी झटकों से बचाया जा सकेगा। जीएसटी 2.0 से हाथों में सीधे पैसे आएंगे, नतीजतन भारत वैश्विक निर्यात का मजबूत केंद्र बनेगा। हालांकि यह भी सच्चाई है कि आर्थिकी के क्षेत्र में भारत को अभी अमेरिका व चीन जैसे देशों की तुलना में लंबी दूरी तय करनी है।

श्राद्ध पक्ष

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

पंचग्रास में समाहित है संपूर्ण चराचर जगत का कल्याण

पूर्वजों के पुण्य स्मरण की परंपरा भले ही हमारे यहां श्राद्ध पक्ष के सोलह श्राद्धों के माध्यम से आदि काल से चली आ रही हो पर दुनिया के लगभग सभी धर्मावलंबियों और देशों में किसी ना किसी रूप में पूर्वजों के पुण्य स्मरण की परंपरा अनवरत काल से चली आ रही है। हालांकि हमारे देश के ही कुछ प्रतिक्रियावादी लोग श्राद्ध और श्राद्ध कर्म को लेकर मखौल उड़ाने में किसी तरह की कोई कमी नहीं छोड़ते पर वह यह भूल जाते हैं कि धरती के साक्षात देवता हमारे जन्मदाता माता-पिता हैं। यह साफ हो जाना चाहिए कि माता-पिता के अस्तित्व को लेकर कोई किसी तरह का प्रश्न चिन्ह नहीं उठा सकता। उनके अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। माता-पिता की यह परंपरा पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है और पीढ़ी दर पीढ़ी उनके स्मरण का हमारा दायित्व हो जाता है। पितृपक्ष और मातृपक्ष दोनों ही पीढ़ियों के स्मरण और श्रद्धा या यों कहें कि श्राद्ध स्वरूप भोजन, वस्त्र, जल आदि पत्र पुष्प के माध्यम से सम्मान स्वरूप स्मरण किया जाता है। श्राद्ध स्वरूप ब्राह्मणों को भोजन कराने और इसी तरह की अन्य व्यवस्थाओं के साथ जुड़ी पंच ग्रास की परंपरा का आलोचकों को ज्ञान ही नहीं होता। श्राद्ध निमित्त ब्राह्मण भोजन से पहले पंच ग्रास का विधान है। पंचग्रास के पीछे के रहस्य को समझना भी आवश्यक हो जाता है। पंचग्रास में गोग्रास, श्वान ग्रास, कोए को ग्रास, चिंटी आदि को ग्रास और अभ्यागत ग्रास इस तरह से पंच ग्रास का विधान है। अब इसी से समझ सकते हैं कि इस पंच ग्रास में प्रकृति का कोई पक्ष शेष नहीं रह जाता है। पंच ग्रास से अर्थ मात्र औपचारिकता से नहीं लिया जाना चाहिए। हमारी शाश्वत परंपरा में प्रत्येक व्यक्ति पर तीन ऋण होते हैं और उनमें से पहला ऋण देव ऋण है तो दूसरा ऋषि ऋण और तीसरा ऋण पितृ ऋण है। प्रत्येक जन्म लेने वाले व्यक्ति को इन तीनों ऋणों से उऋण होने की शिक्षा दी जाती है तो यह उसका दायित्व भी हो जाता है। देव ऋण में सृष्टि के नियंता का स्मरण और उसके प्रति आभार प्रकट करना है। इसके लिए भजन-पूजन, स्मरण, सदाचरण आदि की बात है। प्रकृति को विकृति से बचाना हमारी जिम्मेदारी होती है और प्रकृति व मानवमात्र के कल्याण की बात करना ही देव ऋण से उऋण होने का एक तरीका है। इसी तरह से हमको शिक्षा प्रदान करने वाले गुरु परंपरा का मान-सम्मान और ज्ञान की इस परंपरा को अगली पीढ़ी तक पहुंचाना ही गुरु ऋण से उऋण होने का एक तरीका हो सकता है। जहां तक पितृ ऋण से उऋण होने का प्रश्न है तो इसका भी आसान रास्ता बताया गया है और वह बच्चे होते ही पूरी होना शुरू हो जाती है। इन बच्चों की शिक्षा और संस्कारित करना और शादी विवाह आदि जिम्मेदारियों का निर्वहन तो आता ही है। यही कारण है कि पौत्र-प्रपौत्र या नाती-नातियों को देखना और पौत्र होने पर सोने की सीढ़ी चढ़ना आदि इसी ओर इशारा करता है कि हमारे कुल परंपरा में पूर्वजों के श्राद्ध यानी स्मरण करने वाली पीढ़ी हो गई है। कभी मृत्यु के बाद बारह दिन के संस्कारों को देखने या फिर बारहवें दिन की सपीण्डी क्रिया देखने का अवसर मिले तो कई बातें साफ हो जाती हैं। सपीण्डी में तीन पितृ पक्ष और तीन मातृ पक्ष के पूर्वजों के स्मरण, पूजा आदि के बाद जब सभी को एकाकार कर दिया जाता है तो उसे सपीण्डी कहा जाता है। हमारी शाश्वत परंपरा में व महाभारत व अन्य पौराणिक ग्रन्थों में उल्लेख आता है कि महर्षि अत्रि ने सबसे पहले निमि को श्राद्ध का उपदेश दिया और महर्षि निमि ने सबसे पहले अपने पूर्वजों के निमित्त श्राद्ध कर्म किया। श्राद्ध कर्म में अग्नि को भी खास महत्व दिया गया है और यह माना जाता है कि अग्नि देव के माध्यम से श्राद्ध पूर्वजों को अर्पित किया जाता है। शास्त्राचार व लोकाचार में एक बात पर अवश्य जोर दिया गया है कि हमारे पूर्वज श्राद्ध के दिन पुत्री पक्ष की उपस्थिति से अधिक प्रसन्न होते हैं। इसमें श्राद्ध भोजन कि निमित्त या अवसर पर दोयते-दोयती, भांजें-भांजी को भोजन कराना अत्यधिक फलदायक बताया गया है। यह साफ हो जाना चाहिए कि श्राद्ध, श्राद्ध पक्ष और श्राद्ध कर्म के पीछे हमारे पूर्वजों की गहन सोच है। यह मात्र औपचारिकता या ब्राह्मण भोजन तक सीमित नहीं है तो भोजन कराने से पूर्वजों तक भोजन पहुंचने को लेकर मजाक उड़ाने वालों को बहुत कुछ समझने और उसके मूल को समझना होगा। यदि यह ढकोसला होता तो चीन में छिंग-मिंग, जापान में ओबोन, बौद्ध देशों में घूस्ट फेस्टिवल या योरोपीय देशों में टसेंट या आल सेंट्स डे आदि नहीं होते। इन सबसे भी इतर हमें हमारे जन्मदाताओं के प्रति कृतज्ञता तो व्यक्त करना हमारा दायित्व हो जाता है और यही तो हम श्राद्ध कर्म के माध्यम से करते हैं। बस श्राद्ध में श्रद्धा का जो महत्व है उसकी पालना हमें करनी ही होगी।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लोकहित में त्याग करने वाले मानव ही बनते हैं संत

संकलित
दर्शन

सब कुछ क्षणिक होते हुए भी इस जगत की अनंत यात्र का कभी अंत नहीं होता। यह अनवरत गतिमान रहती है। वास्तव में त्याग की पवित्र भावना ही इसकी गतिशीलता और जीवंतता का कारण है। इसलिए जिन गुणों से मानव जीवन महान बनता है, त्याग उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। जैसे-शीतलता के बिना जल, दाहकता के बिना अग्नि, स्पर्श के बिना वायु का कोई अस्तित्व नहीं। उसी प्रकार त्याग के बिना मानव जीवन का कोई मूल्य नहीं, परंतु त्याग वही सार्थक है, जो परार्थ के लिए हो। स्वार्थ के लिए त्याग तो पशु-पक्षी भी करते हैं। इसीलिए निःस्वार्थ भाव से लोकहित में त्याग करने वाले मानव संत बन जाते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में त्याग को शांति का प्रदाता कहा गया है, परंतु इसके विलक्षण आनंद का अनुभव कोई विरला ही कर सकता है। वस्तुतः त्याग का जन्म उदारता से होता है, क्योंकि औदार्य भाव ही मनुष्य को स्वार्थ और मोह से मुक्तकर परार्थ के लिए प्रेरित करता है। इसलिए उदारता का भाव जिसमें जितना प्रबल होगा, त्याग की भावना भी उतनी ही प्रबल होगी। कल्पना कीजिए कि महर्षि दधीचि में उदारता का भाव कितना प्रबल रहा होगा, जिससे उन्होंने जीवित रहते ही लोक कल्याणार्थ शरीर त्याग करने का निर्णय लिया। कर्ण ने यह जानते हुए भी कि जीवन रक्षक कवच का दान करने से उसके प्राणों पर संकट निश्चित है, उसे सहर्ष काटकर याचक को समर्पित कर दिया। उदारता के बिना यह कदापि संभव नहीं था।

गरीब विद्वान व राजा भोज, बने भाई-भाई

संकलित
प्रेरणा

कई वर्ष पहले धार में राजा भोज का शासन था। उस राज्य में एक गरीब विद्वान रहता था। आर्थिक तंगी से घबराकर एक दिन विद्वान की पत्नी ने उससे कहा-आप राजा भोज के पास क्यों नहीं जाते? वह विद्वानों का बड़ा आदर करते हैं। हो सकता है आपकी विद्वता से प्रभावित होकर वह आपको ढेर सारा धन दे दें। विद्वान राजा के दरबार में पहुंचा। पहरेदार ने पूछाः आप कौन हैं? कहां जाना है? विद्वान ने कहाः जाओ राजा से कहो कि उनका भाई आया है। पहरेदार ने जब भोज को यह बात बताई तो.. वह सोचने लगेः मेरा तो कोई भाई है नहीं है फिर कौन हो सकता है। कहीं कोई धूर्त तो नहीं। उनकी उत्सुकता जागी। उन्होंने विद्वान को बुलवा लिया। 'कैसे हुए भाई-भाई' भोज ने विद्वान से पूछाः क्या तुम मेरे भाई हो? किस नाते से? विद्वान ने कहाः मैं आपका मौसेरा भाई हूं। आपकी मौसी का लड़का। भोज ने पूछाः कैसे? मेरी तो कोई मौसी नहीं है। विद्वान बोलाः महाराज। आप संपत्ति माता के पुत्र हैं और मैं विपत्ति माता का पुत्र। संपत्ति और विपत्ति बहनें हैं। इस नाते मैं आपका मौसेरा भाई हुआ न। यह सुनकर भोज बेहद प्रसन्न हुए। उन्होंने ढेर सारी स्वर्ण मुद्राएं विद्वान को दीं। फिर भोज ने पूछाः मेरी मौसी तो कुशल हैं न? इस पर विद्वान ने जवाब दियाः राजन्, जब तक आपकी मौसी जीवित थीं, आपके दर्शन नहीं हुए थे। अब आपके दर्शन हुए तो आपकी मौसी स्वर्ग सिधार गईं। इस उत्तर से भोज को और भी प्रसन्नता हुई। उन्होंने विद्वान को गले से लगा

अंतर्मन

आज की पाती

आवारा कुत्तों की समस्या का समाधान जरूरी

कितनी हैरानी और चकित करने वाली बात है कि देश के सर्वोच्च न्यायालय को देश की एक छोटी सी समस्या पर भी बयान देना पड़ रहा है। यह समस्या है देश में आवारा कुत्तों से आमजन को होने वाली परेशानी। हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने देश में आवारा कुत्तों द्वारा लोगों को काटने से जो परेशानी हो रही है, और इससे रैबीज से होने वाली लोगों की मौतों पर चिंता जताई है। जबकि इस पर राज्य सरकारों को चिंता नहीं, बल्कि चिंतन करना चाहिए। मीडिया भी इस समस्या के लिए गंभीरता दिखाता है और प्रशासन को जगाने की कोशिश करता है, लेकिन नेतागण व प्रशासन यह गंभीरता नहीं दिखाते। रैबीज की बीमारी जानलेवा भी बन सकती है। इसलिए समूह समाज को इसका ठोस समाधान तलाशना चाहिए। - *विवेक शर्मा, बिलासपुर*

करंट अफेयर

दीपावली उत्सव में मणिपुर की सांस्कृतिक प्रस्तुति

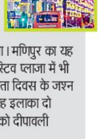

मणिपुर के एक सांस्कृतिक दल ने सिंगापुर में शनिवार को लिटिल इंडिया परिसर में वार्षिक कार्यक्रम 'दीपावली लाइट अप' में प्रस्तुति दी। इस कार्यक्रम में सिंगापुर के राष्ट्रपति थरमन षणमुगरत्नम तथा विविध समूहों के 700 प्रतिभागियों ने शिरकत की और इसी के साथ देश में दो महीने तक चलने वाले दीपों के इस त्योहार की शुरुआत हुई। भारतीय उच्चायोग ने रविवार को कहा, 'भारत से मणिपुरी सांस्कृतिक दल ने समारोह में भाग लिया और मणिपुर की कलाओं से दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया।' इस मंडली को भारतीय उच्चायोग (सिंगापुर) ने आमंत्रित किया था और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद ने इसे पूरा सहयोग दिया। उच्चायुक्त शिल्पक अंबुले ने भी दीपावली प्रकाश समारोह में भाग लिया। मणिपुर का यह सांस्कृतिक दल रविवार दोपहर को 'टैम्पाइन्स हब' के फेस्टिव प्लाजा में भी प्रस्तुति देगा। 'लिटिल इंडिया' को सिंगापुर के 60वें स्वतंत्रता दिवस के जश्न के तौरपर 600,000 एलईडी लाइटों से सजाया गया है। यह इलाका दो किलोमीटर तक फैला हुआ है। सिंगापुरवासी 20 अक्टूबर को दीपावली मनाएंगे और उस दिन यहां आधिकारिक अवकाश रहेगा।

ऑफ बीट

शौचालय में स्मार्टफोन पर स्क्रॉल से बवासीर का खतरा

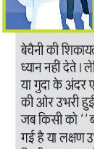

हममें से कई लोग शौचालय में स्मार्टफोन पर 'स्क्रॉल' करने के आदी हैं, लेकिन एक नये अध्ययन में पाया गया है कि इस आदत से बवासीर का खतरा 46 प्रतिशत तक बढ़ सकता है। तो, आखिर दोनों में क्या संबंध है? फोन पर समय बिताने से आपके गुदा में और उसके आस-पास ये दर्दनाक गांठें कैसे उभर सकती हैं? आइए जानते हैं इसके बारे में। बवासीर क्या है? -हर स्वस्थ व्यक्ति में ऐसी गांठें होती हैं, जो बवासीर का रूप भी अख्तियार कर सकती हैं। गुदा और मलाशय के अंदर या उसके आसपास सूजी हुई और फूली हुई नसें होती हैं। ये गुदा के आसपास की रक्त वाहिकाओं के बढ़ने से होती है और इसके कारण गुदा से रक्तस्राव, खुजली, दर्द और बेचैनी की शिकायत हो सकती है। जब सब कुछ ठीक होता है, तो हम उन पर ध्यान नहीं देते। लेकिन नसों में सूजन आ सकती है और इससे दर्द, रक्तस्राव या गुदा के अंदर एक गांठ जैसा महसूस होना (आंतरिक बवासीर) या बाहर की ओर उभरी हुई गांठ (बाहरी बवासीर) जैसे लक्षण हो सकते हैं। इसलिए जब किसी को ''बवासीर'' होती है, तो इसका मतलब है कि उनमें सूजन आ गई है या लक्षण उभर गए हैं। हर दो में से एक व्यक्ति को जीवन में किसी न किसी समय बवासीर का सामना करना पड़ता है।

ट्रेंड

जयंती पर नमन

महान संत, दार्शनिक और सुधारक श्री नारायण गुरु की जयंती पर नमन करता हूँ, उन्होंने अपना जीवन सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन के लिए समर्पित कर दिया। उनका शाश्वत संदेश आज भी भारत को सामंजस्यपूर्ण समाज की ओर ले जा रहा है।
-अमित शाह, केंद्रीय गृहमंत्री

राहत सामग्री रवाना

राहत सामग्रियों से भरे 52 ट्रक आज दिल्ली से पंजाब के भाई-बहनों के लिए रवाना किए गए हैं। पंजाब मुख्यमंत्री राहत कोष में दिल्ली सरकार द्वारा 5 करोड़ की सहयोग राशि भी प्रदान की गई है। पंजाब की पीड़ा, दिल्ली की पीड़ा है। संकट की इस घड़ी में हम सब एक परिवार की तरह खड़े हैं।
- रेखा गुप्ता, सीएम, नई दिल्ली

सहयोग राशि जारी

उत्तराखंड में भीषण बाढ़ से उत्पन्न विकट स्थिति तथा उससे हुई जन-धन की क्षति अत्यंत दुःखद एवं हृदयविदारक है। इस कठिन घड़ी में राजस्थान सरकार द्वारा तात्कालिक राहत एवं पुनर्वास कार्यों में सहयोग हेतु 5 करोड़ की राशि प्रेषित की है।
- भजनलाल शर्मा, सीएम, राजस्थान

कार्यकर्ता भाव

दिल्ली में आयोजित सांसद कार्यशाला में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अंतिम पंक्ति में बैठकर यह संदेश दिया कि भारतीय जनता पार्टी में पद से बड़ा कार्यकर्ता भाव है। उनकी सादगी सभी के लिए प्रेरणास्रोत हैं।
- मनोज तिवारी, सांसद, भाजपा

अपने विचार
हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।